हंसराजनिदान.

भाषाटीकासहित.।

श्रीहरिः ।

हंसराजनिदानम् ।

कविवरहंसराजप्रणीतम् ।

माथुरदत्तरामकृतया हंसराजार्थबोधिन्या भाषाटीकया सहितम् ।

(यस्मिन्नाडीपरीक्षापूर्वक-ज्वर, संग्रहणी, अर्शोभगन्दर, पाण्डुरोग, रक्तपित्त, राजयक्ष्म, कास, श्वास, च्छर्दि, तृष्णा, मूर्च्छा, दाहादिरोगाणामतिबाहुल्येन लक्षणकुलम्प्रदर्शितम्)

इदं पुस्तकं

क्षेमराज श्रीकृष्णदास श्रेष्ठिना

मुम्बय्यां

स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यन्त्रालये

मुद्रयित्वा प्रकाशितम् ।

संवत् १९७३, शके १८३८.

यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने बम्बई खेतवाडी ७ वीं गली खम्बाटा लेन स्वकीय "श्रीवेंकटेश्वर" स्टीम् प्रेसमें अपने लिये छापकर यहीं प्रकाशित किया.

भूमिका ।



धन्य है वह परमेश्वर जिसकी कृपासे सारे संसारमें कैसे कैसे विचित्र चरित्र हो रहे हैं। देखिये यह कैसी ईश्वरकी अद्भुत रचना है कि सृष्टिमें अगणित जीव हैं, परन्तु यह नहीं कि एकसे दूसरे की भ्रांति हो। इसी प्रकारसे जितने पदार्थ सृष्टिमें हरएकके गुण दोष पृथक् पृथक् दिये हैं। देखिये, बुद्धिमान् महात्मा पुरुषोंने जीवोंकी रक्षा और क्लेश निवारणके निमित्त कैसे २ विचार किये हैं। वैद्यक विद्यामें अनेकों प्रकारके ग्रन्थ बने हैं, जिनके द्वारा औषधियों करके कैसा ही रोग हो विधिपूर्वक सेवन करनेसे तुरन्त ही लाभ होगा, औषधियोंका तो फल प्रत्यक्ष है दृष्टान्तकी आवश्यकता नहीं।

प्रथम महात्माओंने जो ग्रन्थ वैद्यक विद्याके बनाये वह संस्कृतमें हैं, जो इस समय संस्कृतके अल्पप्रचारसे विशेषतर उपयोगी नहीं होते। इस कारण वर्त्तमान कालके अनुसार विद्वान् सज्जनोंने उन ग्रन्थोंपर भाषाटीका बनानेका आरम्भ किया है, और बहुतसे ग्रन्थोंपर भाषाटीका बन भी गयी है।

हम अतीव प्रसन्नतापूर्वक इस बातको प्रकट करते हैं कि एक ग्रन्थ हंसराजनिदान जो भाषाटीकासहित है अवलोकन करने योग्य है। एक तो इस कविकी कविता श्लोकबद्ध अति अनूठी है और श्लोक ऐसे ललित हैं कि जिनके पढने और श्रवणमात्रहीसे

चित्तको आनन्द होता है। दूसरे यह ग्रन्थ बहुत बडा भी नहीं है कि जिसके पढनेके लिये अवस्थाका एक भाग आवश्यक हो, और बहुत छोटा भी नहीं है इसीसे बहुधा लोग इसको पसन्द करते हैं कि केवल इसीके कण्ठाग्र करनेसे छोटे और बडे सम्पूर्ण अपने अभीष्ट फलको पहुंचते हैं।

इन सब गुणोंके होते हुए इस ग्रन्थमें हंसराजार्थबोधिनी टीका भाषामें ऐसी हुई है कि मानों अमृतकुंड जो अति कठिन स्थल है उसके लानेके लिये रेलगाडी बनगई।

प्रथम तो यह ग्रन्थ केवल संस्कृत जाननेवालोंहीके लिये फलदायक था अब भाषा जाननेवाले वैद्यलोगभी उसी प्रकार अपना अर्थ प्राप्त करसक्तेहैं।

पण्डित दत्तराम चौबे

मथुरा.

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–

खेमराज श्रीकृष्णदास,

"श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस–बम्बई.

हंसराजनिदानकी अनुक्रमणिका ।



इति हंसराजनिदानकी विषयानुक्रमणिका समाप्त ।

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

हंसराजनिदानम् ।

भाषाटीकासहितम् ।



हंसराजकवि हंसराज ग्रन्थके कर्त्ता ग्रन्थके आदिमें शिष्टाचार परिपालनके निमित्त और ग्रन्थकी निर्विघ्नसमाप्तिके निमित्त भले प्रकार उचित अपने इष्टदेव श्रीबालाजीको ध्यानपूर्वक स्रग्धरा छंद करके मंगलाचरण करते हैं ॥ ध्यायेदिति ।

ध्यायेद्बालाम्प्रभाते विकसितवदनाम्फुल्लराजीवनेत्रां मुक्तावैदूर्यगर्भैरुचिरकनकजैर्भूषणैर्भूषितांगीम् ॥ विद्युत्कोटिच्छटाभां परिमलबहुलां दिव्यसिंहासनस्थां गीर्देवी तस्य दासी भवति सुरवन नन्दनं केलिगेहम् ॥ १ ॥ धत्ते ते चरणांबुजं स्वहृदये मातर्नरो योऽनिशं तस्याऽऽस्ये परिनर्त्तते प्रतिदिनं वाग्गद्यपद्यात्मिका ॥ लक्ष्मीस्तस्य गृहे स्थिता करतले मुक्तिः स्थिताः सिद्धयो द्वारे तस्य विभूषिताश्च निधयस्तिष्ठन्ति नित्यं मुदा॥२॥

अर्थ–प्रातःसमय श्रीबालाका ध्यान करना. कैसी है बाला कि प्रफुल्लित मुख, फूले कमलके समान नेत्रवाली, मोती और वैदूर्यमणि करके जटित सुन्दर सुवर्णके भूषणों करके भूषित देह, जिसकी कोटि बिजलीके समान प्रकाशवाली अतिशय सुगन्धयुक्त देह श्रेष्ठसिंहासनपर स्थित, ऐसी बालाका जो मनुष्य इस प्रकार ध्यान करता है उसकी सरस्वती दासी होती है. और देवतोंका नन्दनवन क्रीडाका स्थान होता है ॥ १ ॥ हे माता ! जो मनुष्य तेरे चरणकमलोंका अपने हृदयमें निरन्तर ध्यान करता है तिसके मुखमें गद्यपद्य रचनारूपी सरस्वती नित्य नाचती है । घरमें लक्ष्मी स्थिर है मोक्ष उसके हाथमें है, अष्टसिद्धि उसके द्वारपर खडी रहें और नवनिधि नित्य आनंदपूर्वक स्थित रहती हैं । इस श्लोकका छन्द शार्दूलविक्रीडित है॥२॥

जगन्मातर्नमस्तेऽस्तु वरदे मंगले शिवे ॥ ग्रन्थकर्त्तुं प्रवृत्तस्य साहाय्यं कुरु मेऽनिशम् ॥ ३ ॥ अहमपि जगदंबे दृश्यतां दिव्यदृष्ट्या न भवति तव हानिः क्वापि दृष्टेः कदाचित् ॥

स्वजनहितपरायाः शंकरस्य प्रियाया अमृतरसह्रदिन्याऽहं सनाथो भवामि ॥ ४ ॥ भिषक्चक्रचित्तोत्सवं जाड्यनाशं करिष्याम्यहं बालबोधाय शास्त्रम् ॥ नमस्कृत्य धन्वंतरिं वैद्यराजं जगद्रोगविध्वंसनं स्वेन नाम्ना ॥ ५ ॥

अर्थ—हे जगन्मातः ! हे वरदे ! हे मंगले ! हे शिवे ! तुम्हारे अर्थ नमस्कार है. ग्रन्थकरनेको प्रवृत्त मेरी निरन्तर सहाय करो ॥ ३ ॥ हे जगदम्बे ! मुझे दिव्य दृष्टिसे देख, तेरी दृष्टिकी कभी कहीं हानि नहीं हो. कैसी तुमहो कि अपने भक्तजनके हितमें तत्पर और श्रीशंकरकी प्यारी पत्नी हो. अमृतरसकी सरोवरी मैं तुम्हारी दृष्टिसे सनाथ होऊंगा. इस श्लोकका मालिनी नाम छन्द है ॥ ४ ॥ मैं वैद्योंके राजा धन्वन्तरिको नमस्कार कर बालकोंके बोधके अर्थ जगत्के रोगोंका नाशक वैद्य समुदायके चित्तको उत्सवकारक. मूर्खतानाशक ऐसा अपने नाम करके अर्थात् हंसराज नामकरके ग्रंथको करताहूं. इस श्लोकके छन्दका नाम भुजंगप्रयात है॥५॥

ब्रह्मेशो गरुडध्वजो भृगुसुतो भारद्वजो गौतमो हारीतश्चरकोत्रिकः सुरगुरुर्धन्वन्तरिर्माधवः ॥ नासत्यो नकुलः पराशरमुनिर्दामोदरो वाग्भटो येऽन्ये वैद्यविशारदा मुनिवरास्तेभ्योऽपरेभ्यो नमः ॥ ६ ॥ आत्रेयधन्वंतरिसुश्रुतानां नासत्यहारीतकमाधवानाम् ॥ सुषेणदामोदरवाग्भटानां दस्रस्वयंभूश्चरकादिकानाम् ॥ ७ ॥ एषां समालोक्य मतं मुहुर्मुहुर्ग्रंथो मनोज्ञः क्रियते मयाऽधुना ॥ पद्यैरदोषै रचितोऽल्पमेधसां ज्ञानाय नूनं भिषजात्ममानिनाम् ॥ ८ ॥

अर्थ—ब्रह्मा, शिव, विष्णु, शुक, भरद्वाज, गौतम, हारीत, चरक, अत्रि, बृहस्पति, धन्वन्तरि, माधव, अश्विनीकुमार, नकुल, पराशरमुनि, दामोदर, वाग्भट और जे वैद्योंमें चतुर मुनियोंमें श्रेष्ठ उन सबनके अर्थ नमस्कार है ॥ ६ ॥ आत्रेय, धन्वन्तरि, सुश्रुत, अश्विनीकुमार, हारीत, माधव, सुषेण, दामोदर, वाग्भट, सनत्कुमार और चरकादिक ॥ ७ ॥ इनके मत वारबार देखकर वैद्य ऐसे अपने आपैको माने अल्पबुद्धि वारेनको निश्चयज्ञानके अर्थ दोषकरके रहित जे पद तिन करके रचित मनको प्रसन्न करनेवाला अब मैं ग्रंथ रचता हूँ ॥ ८ ॥

दर्शनस्पर्शनप्रश्नै रोगिणो रोगनिश्चयम् ॥ आदौ ज्ञात्वा ततः कुर्याच्चिकित्सां भिषजांवरः ॥९॥ देशं बलं वयः कालं गुर्विणी गदमौषधम् ॥ वृद्धवैद्यमतं ज्ञात्वा चिकित्सामारभेत्ततः ॥१०॥

अर्थ–देखना, स्पर्शकरना, पूंछना इन तीन प्रकारसे पहिले रोगीके रोगको निश्चय करके वैद्योंमें श्रेष्ठ फिर रोगीकी चिकित्सा करे ॥ ९ ॥ देश, बल, अवस्था, काल, गर्भिणीका रोग, औषध और वृद्धवैद्यके मतको जानके फिर चिकित्सा करे ॥ १० ॥

अथ नाडीलक्षनानि ।

करांगुष्ठमूलोद्भवा प्राणभूता नृणां रोगिणां साक्षिणी सौख्यभाजाम् ॥ जलौकोरगाणां गतिं नाडिका या विधत्ते निरुक्ता च वातात्मिका सा ॥ ११ ॥ विधत्ते गतिं काकमंडूकयोर्या मुनीन्द्रैर्निरुक्ता च पित्तात्मिका सा ॥ शिरा हंसपारावतानां गतिं या दधाति स्थिरा श्लेष्मकोपान्विता सा ॥ १२ ॥ नाडी चंचलतां क्वचिच्छिथिलतां शैत्यं क्वचिच्चोष्णतां धत्ते मंदगतिं द्विदोषकुपिता स्थानच्युतिं क्षीणताम् ॥ वक्राकारगतिं क्वचिद्वितनुते प्राप्नोति कंपं क्वचिद्वैकल्यं विदधाति याति कुपिता मासान्तरे सानिशम् ॥ १३ ॥

अर्थ–प्रथम नाडी परीक्षा लिखे हैं. हाथके अँगूठोंके निकट रोगी मनुष्यके सुखदुःखकी साक्षी देनेवाली नाडी यदि जोंक वा सर्पकीसी चाल चले तौ वातकी नाडी कहिये ॥ ११ ॥ और जो नाडी काकमेडककीसी चाल चले तो मुनियोंने पित्तकी नाडी कहीहै, और जो हंस कबूतर कीसी चाल चलै तो कफकोपकी नाडी कहिये ॥ १२ ॥ द्विदोष कोपकी नाडी चञ्चल कभी शिथिल कभी शीतल कभी गरम और मंद विकलताको प्राप्तहुई गमन करैहै और स्थानको छोडदेय और बहुत धीरे २ चलै, कभी टेढी चलै, कभी कभी कांपै, विकलताको प्राप्त हुई ऐसी नाड़ी एक महीनेके भीतर रोगीको मार डाले ॥ १३ ॥

त्रिदोषान्विता नाडिका चंचलोष्णस्फुरद्विव्रिरूपा त्वरायुग्विभिन्ना ॥ गतिं तैत्तिरीयां विधत्तेतिकंपं क्षणं क्षीणतां याति मूर्छां क्वचित्सा ॥ १४ ॥ शिरा यस्य वातार्दिता पित्तदग्धा कफेनातिकोपेन नाडी कृता सा ॥ गदी सोल्पकालेन मृत्योर्विदीर्णे मुखे यास्यते दंतदंष्ट्राभिकीर्णे ॥ १५ ॥

अर्थ–संनिपातकी नाडी चपल और गरम और दो तीन प्रकारकी चाल चलै, वह नाडी जल्दी आयुकी काटनेवाली जाननी, और तीतरकीसी चाल चलै और बहुत कांपै तथा मंद चलै और कभी चलनेसे रहि जाय वह भी असाध्य ॥ १४ ॥ जिस रोगीकी नाडी वातकरके दूषित, पित्त करके दग्ध, और कफके कोपकरके खेदित हो वह रोगी थोडे कालमें मौतके खुले हुये दंतदाढों करके युक्त मुखमें जायगा अर्थात् मरेगा ॥ १५ ॥

शिरा यस्य सूक्ष्माऽतिशीतान्विता वा स रोगी न जीवेत्प्रयत्नैः कदाचित् ॥ चलद्वित्रिरूपा त्रिदोषान्विता वा स रोगी यमस्यालये शीघ्रगंता ॥ १६ ॥ नाडी शीघ्रगतिं धत्ते ज्वरकोपेन सोष्णताम् ॥ रक्ताधिक्येन सा कोष्णा गुर्वी वेगवती भवेत्॥ ॥ १७ ॥ सुखिनो मनुजस्य शिरा परितः स्थिरतां समुपैति दधाति बलम् ॥ क्षुधितस्य भवेच्चपला सततं तृषितस्य शिरा व्रजति स्थिरताम् ॥ १८ ॥

अर्थ–जिस रोगीकी नाडी अतिमंद चलै, और शीत करके युक्त हो वह रोगी अनेक यत्नोंके करनेसेभी नहीं जीवै, और जिस रोगीकी नाडी त्रिदोषयुक्त दो तीन प्रकारकी चलै, वह रोगी जल्दी यमराजके घर पहुंचेगा ॥ १६ ॥ ज्वरके कोपसे नाडी गरम और जलदी चलतीहै, और रुधिरके बिगडनेकी नाडी गरम और भारी तथा जल्दी चलतीहै ॥ १७ ॥ सुखी मनुष्यकी नाडी बलयुक्त और स्थिर चलती है, और क्षुधित मनुष्यकी नाडी चपल और भोजन करेकी नाड़ी स्थिर चलतीहै इस श्लोकके छन्दका नाम तोटकवृत्त है ॥ १८ ॥

मोहेन कामेन भयेन चिंतया क्रोधेन लोभेन बहुश्रमेण वा ॥ मंदाग्निनोद्वेगतरेण पीडया स्यान्नाडिका मन्दतरा नृणां भृशम् १९

इति हंसराजकृते हंसराजनिदाने नाडीलक्षणवर्णनम् ।

अर्थ–मोहसे कामसे भयसे चिन्तासे क्रोधसे बहुत परिश्रमसे मंदाग्निसे उद्वेगसे पीडासे मनुष्योंकी नाडी निरंतर मंद चलती है ॥ १९ ॥ इति श्रीमाथुरदत्तरामपाठकनिर्मितहंसराजार्थबोधिन्यां भाषाटीकायां नाडीलक्षणं समाप्तम् ।

दोषैर्विना न रोगाः स्युर्न दोषा हेतुभिर्विना ॥ हेतवः कर्मसम्भूतास्तान्हेतून्कथयाम्यहम् ॥ १ ॥ (अथवातकोपकारकवस्तु) प्राणापानगतेर्विघातकरणैः क्षुन्मूत्रतृट्रोधनैर्व्यायामव्रतशोकशीतसलिलस्नानैः स्त्रियाः सेवनैः ॥ रूक्षाम्लामिषमिष्टपिष्टकटुकैरत्यंबुपानाशनैर्वर्षाशीतशरत्सुचैत्रसमयेवातस्यकोपोभवेत् ॥२॥ (अथपित्तकोपकारकवस्तु) तीक्ष्णोष्णाम्लविदाहिशाककटुकैः क्षारान्नपित्ताशनैर्व्यायामाध्वपरिश्रमैर्दिनपतेरातापसंसेवनैः ॥ क्रोधोष्णोत्प्लवनैः कषायमदिरापानैर्निशाजागरैर्वर्षाग्रीष्मशरत्सुमध्यदिवसे पित्तस्य कोपोभवेत् ॥ ३ ॥

अर्थ—विना दोषोंके रोग नहीं होते और विना हेतुओंके दोष नहीं होते और हेतु कर्मसे पैदा होते हैं सो उन्ही हेतुओंको मैं कहता हूँ ॥ १ ॥ प्राण और अपान पवनकी गति बिगड़नेसे भूख प्यास मूत्र इनके रोंकनेसे दण्ड कसरतके करनेसे व्रतके करनेसे शोचसे शीतल जलके नहानेसे बहुत स्त्रीके संगसे रूखा खट्टा मीठा पिसा कडुआ ऐसे पदार्थके भोजनसे बहुत जल और भोजनके करनेसे वर्षा ऋतु शरदऋतु शीतकाल और चैत्रके महीनेमें वात कुपित होता है ॥ २ ॥ तीक्ष्णमिरच आदि गरम खट्टा दाहके करनेवाले पदार्थ शाक कडुआ खार मिला अन्न और पित्तकारक ऐसे भोजनके करनेसे दण्डकसरतके करनेसे रास्ताके चलनेसे परिश्रमके करनेसे घाममें रहनेसे क्रोधसे गरमीसे खेलने कूदनेसे कसैली वस्तु मद्यके पीनेसे रात्रिमें जागनेसे वर्षाऋतु शरदऋतु मध्याह्नमें पित्त कोप करता है ॥ ३ ॥

कफकोपकारकवस्तु ।

क्षारक्षीरविकारशोकमधुरैः पानाशनातिक्रमैर्मूलस्निग्धगरिष्ठकंदपिशितैःशीताम्लमाषाशनैः ॥ नासानेत्रमुखेषुधूमरजसोपात्तैर्महाघोषणैः श्लेष्माकोपतरंदधातिशिशिरे हेमंतकेमाधवे॥४॥

अर्थ—खार दूधका पदार्थ शाक मिष्ट भूख प्यासके समयको उल्लंघन करनेसे कंद चिकना गरिष्ट मूल पदार्थ पिसा अन्न शीतल खट्टा उर्द इनके खानेसे नाक नेत्र मुख इनमें धुयेंके और रजके गिरनेसे पुकारनेसे शिशिरऋतुमें हेमन्तऋतुमें वैशाखमें कफ कोप करता है ॥ ४ ॥

ज्वराणांघोररूपाणां यानिचिह्नानितान्यहम् ॥ वक्ष्येज्ञानेन तेनैवरोगः संज्ञायते बुधैः ॥ ५ ॥ (तस्य प्रागुत्पत्तिमाह) दक्षापमानसंक्रुद्धरुद्रनिःश्वाससम्भवः ॥ ज्वरोऽष्टधापृथग्द्वंद्वसंघातागन्तुजः स्मृतः ॥ १ ॥ (ज्वरस्य संप्राप्तिमाह) मिथ्याहारविहारस्य दोषा ह्यामाशयाश्रयाः ॥ बहिर्निरस्य कोष्ठाग्निं ज्वरदाः स्यूरसानुगाः ॥ २ ॥ (ज्वरके पूर्वरूपको कहैहैं) तापः शरीरे गुरुताऽलसत्वं सर्वांगपीडा विरसत्वमास्ये ॥ शीतः श्रमो वीर्यबलस्य हानिः ज्वराग्रचिह्नानि वदंति संतः ॥ ६ ॥ (वातज्वरकेलक्षण) जृम्भोद्गारतृषाः कषायवदनं निद्राविनाशोऽरुचिः श्वासोरूक्षवपुर्भ्रमोविकलताशोषो मुखेऽक्षिस्रवः॥ हिक्काध्मानविवर्णतांगचलनं रोमोद्गमोंगव्यथा हृल्लासोंत्रविगुंजनं भवति तद्वातज्वरे लक्षणम् ॥ ७ ॥

अर्थ—घोररूपज्वरोंके चिह्न मैं कहता हूँ जिन चिह्न अर्थात् लक्षणों करके पंडितों करके रोग सब जाने जायँ ॥ ५ ॥ "दक्षके करेहुये तिरस्कारसे क्रोधित शिवकी श्वाससे उत्पन्न हुआ ज्वर आठ प्रकारका १ वातसे, २ पित्तसे, ३ कफसे, ४ वातपित्तसे, ५ वातकफसे, ६ पित्त-कफसे, ७ वातपित्तकफसे, ८ आगुंतुजसे ॥ १ ॥ मनुष्योंके मिथ्या आहार और मिथ्या विहारसे आमाशयमें रहते जो वात पित्त कफ सो आमाशयको बिगाड करके फिर रसको बिगाडैं और कोठे की अग्निकी गरमीको बाहर निकाल देहको तप्त करदेवैं उसीको ज्वर कहते हैं ॥ २ ॥ इति माधवकारः ॥" शरीरमें तप, तथा शरीरका भारीपना, आलस्य और सब शरीरमें हडकल, मुखमें स्वाद न रहै, शीतका लगना, अनायास श्रम माळूम हो, वीर्य बलका नाश होना, ये चिह्न ज्वरके पूर्व होते हैं ॥ ६ ॥ जँभाई, डकार, तथा प्यासका लगना, मुखका कडुआ होना, नींदका न आना अरुचि श्वास, शरीरका रूखापन, श्रम तथा शरीरमें बेकली, मुख सूखे, आंखसे आँसूका पडना, हिचकी आना, पेट फूलना, शरीरका औरही वर्ण हो जाना, अंगका फडकना, रोमांचका होना, शरीरमें व्यथा सूखी उलटीका आना, आंतोंका बोलना ये लक्षण वातज्वरमें होते हैं ॥ ७ ॥

(पित्तज्वरके लक्षण) हृत्कंठोष्ठकरांघ्रिदाहमरतिं स्फोटं तृषा संभ्रममूष्माणं श्वसनं मुखे कटुकतां मूर्च्छामतीसारकम् ॥ हृत्कंपं नयनेरुणे विकलतां शीते रुचिं शोषणं स्वेदं देहगतः करोति कुपितः पित्तज्वरोन्तर्व्यथाम् ॥ ८ ॥ (श्लेष्मज्वरलक्षणं) स्तैमित्यं वमनं जडत्वमलसं निष्ठीवनं गौरवं माधुर्यं वदने तनौ मलिनतां स्वेदं च रोमोद्गमम् ॥ कंठेघुर्घुरतां च पीतनयनं निद्रां त्वचि स्निग्धतां कासं शीर्षरुजं करोति विकलं श्लेष्म-ज्वरोऽङ्गव्यथाम् ॥ ९ ॥ (वातपित्तज्वरः) भ्रमो रोमहर्षोरुचिः श्वासकासौ तृषांगेषु दाहः शिरोर्तिर्वमित्वम् ॥ विनिद्रांगपीडा-तिशोषोल्पमूर्च्छा ज्वरे वातपित्तोद्भवे चिह्नमेतत् ॥ १० ॥

अर्थ—हृदय कंठ ओठ हाथ पांव इनमें दाह होना, इच्छाका नाश, हडकलका होना, प्यास, भ्रम, गरमी, श्वास, कडुआ मुख, मूर्च्छा, दस्त, हृदयमें कंप, नेत्र लाल, देहमें बेकली शीतलताका प्याराळगना, मुखसूखे खेदका होना, अन्तःकरणमें दुःख, ये लक्षण कुपितपित्त-ज्वर देहमें करता है ॥ ८ ॥ शरीर गीलेकपडेसे पोंछे सरीखा माळूमहो उलटीका होना, शरीरका जकडजाना, आलस्य कफका थूकना, देहका भारी होना, मुख मीठा हो, देह मैला, पसीनेका आना, रोआं खडा होना, कंठमें घरघर शब्द होना, कुछ पीलाई लिये नेत्रहों, निद्राका आना, त्वचा, चिकनाई लिये होय, खांसी, शिरमें दर्द, ये लक्षण कफज्वरके हैं ॥ ९ ॥ भ्रम रोमका खडाहोना,

अरुचि, श्वास, खांसी, प्यास, देहमें दाह, शिरमें दर्द, वमन, निद्राका न आना, देहमें पीडा, अत्यंत मुखका सूखना, मूर्च्छाका आना, ये वातपित्तज्वरके लक्षणहैं ॥ १० ॥

(वातकफज्वर) स्तैमित्यंगुरुतारुचिर्विकलता तंद्रा पिपासालसं कासोङ्गस्फुटतावमिः श्वसनता शोथो मुखे लिप्तता॥स्वेदः पर्वभिदारतिश्च जडता रोमोद्गमः शीतता वातश्लेष्मसमुद्भवस्य कथितं चिह्नं ज्वरस्यर्षिभिः ॥ ११ ॥

अर्थ–शरीर गीले कपडेसे पोंछे समान माळूम पडे तथा शरीरका भारीपन अरुचि, बेकली, तंद्रा, प्यास, आलस, खांसी, अंगोंका फडकना, श्वास, सूजन, कफसे लिहसामुख, पसीना, गांठोंमें दर्द, चैन न पडे, जडपना, रोमांच शीत लगना, पुराने ऋषियोंने वात कफज्वरके लक्षण कहे हैं ॥ ११ ॥

(पित्तकफज्वर) तिक्तास्यारुचिता कफस्य वदने लेपो मुहुः शीतता तंद्रासंधिषु वेदना च हृदये दाहः पिपासा भ्रमः ॥ कासश्वासतरस्तनौ मलिनता स्वेदो वमिर्मोहता चिह्नं पित्तकफज्वरे मुनिवरैः संकीर्तित पूर्वजैः ॥१२॥ (तेरहसन्निपातोंकेनाम) संधिकश्चांतकश्चैव रुग्दाहश्चित्तविभ्रमः ॥ शीताङ्गस्तंद्रिकः प्रोक्तः कंठकुब्जश्च कर्णकः ॥ विख्यातो भुग्ननेत्रश्च रक्तष्ठीवी प्रलापकः ॥ जिह्वकश्चेत्यभिन्यासस्सन्निपातास्त्रयोदश ॥ इतिसंगृहीतपाठः ॥ तेषां मर्यादा । संधिके वासराः सप्त चांतके दशवासराः ॥ रुग्दाहे विंशतिर्ज्ञेया वह्न्यष्टौ चित्तविभ्रमे ॥ पक्षमेकं तु शीतांगस्तंद्रिके पंचविंशतिः । विज्ञेया वासराश्चैव कंठकुब्जे त्रयोदश । कर्णके च त्रयो मासा भग्ननेत्रे दिनाष्टकम् । रक्तष्ठीवी दशाहानि चतुर्दश प्रलापके ॥ जिह्वके षोडशाहानि कलाभिन्याससंज्ञके । परमायुरिदं प्रोक्तं म्रियते तत्क्षणादपि ॥

अर्थ–कडुआ मुख, अरुचि, मुख कफसे लिहसा रहना, बार २ जाडा गरमीका लगना, तन्द्रा, संधिमें पीडा, हृदयमें दाह, प्यास, भ्रम, खांसी, श्वासका जोर, देहमें मलिनता, स्वेद, वमन, मोह, ये लक्षण पहिले मुनीश्वरोंने पित्त कफ ज्वरके कहेहैं ॥ १२ ॥ १ संधिक,

२ अंतक, ३ रुग्दाह, ४ चित्तविभ्रम, ५ शीतांग, ६ तन्द्रिक, ७ कंठकुब्ज, ८ कर्णक, ९ भुग्ननेत्र, १० रक्तष्ठीवी, ११ प्रलापक, १२ जिह्वक, १३ अभिन्यास, ये तेरह सन्निपात हैं तेरहों सन्निपातोंकी अवधि–संधिककी ७ दिनकी, अन्तककी १० दिन, रुग्दाहकी २० दिन, चित्त विभ्रमकी २४ दिन, शीतांगकी १५ दिन, तंद्रिककी २५ दिन, कंठकुब्जकी १३ दिन, कर्णककी ९० दिन, भुग्ननेत्रकी ८ दिन, रक्तष्ठीवीकी १० दिन, प्रलापकके १४ दिन, जिह्वकके १६ दिन, अभिन्यासके १६ दिन कहे हैं. यह सन्निपातोंकी परमावधि कही है परन्तु तत्काल भी रोगी मरजाता है ये श्लोक संगृहीत हैं ॥

(तेरहसन्निपातमें साध्यासाध्यविचार) संधिकस्तन्द्रिकश्चैव कर्णकः कंठकुब्जकः । जिह्वकश्चित्तविभ्रंशः षट्साध्याः सप्त मारकाः ॥ (संगृहीतपाठः)

अर्थ–संधिक, तंद्रिक, कर्णक, कंठकुब्ज, जिह्वक, चित्तविभ्रंश ये६साध्य हैं बाकी सात असाध्य हैं॥

संधिकसंनिपातके लक्षण ।

त्रिदोषोत्थिते संधिके सन्निपाते भवेत्संधिपीडाऽस्यशोषोथशूलम् ॥ भ्रमोवीर्यनिद्राविनाशोतितंद्रा पिपासोष्ठपाको रुचिर्दाहकासौ ॥ १३ ॥

अंतकसन्निपातके लक्षण ।

करोत्यंगभंगं भ्रमं वेपथुं यः शिरःकंपनं कंडुरं रोदनं च ॥ प्रलापं सतापं च हिक्कामसाध्यं बुध त्वं विजानीहि तं चांतकाख्यम् १४॥

चित्तविभ्रमसंनिपातके लक्षण ।

योमोहाद्रुदति क्वचिद्विकलतां प्राप्नोति शोकं क्वचित् फूत्कारं कुरुते दधाति मदतां गीतं क्वचिद्गायते ॥ संतापं सहते मुदं वितनुते वाचं भ्रमाद्भाषते तं चित्तभ्रमसन्निपातमनिशं जानीहि दुस्साधनम् ॥ १५ ॥

अर्थ–तीनों दोषोंसे उत्पन्न हुआ जो संधिक सन्निपात तिसके ये लक्षण हैं सन्धीनमें दर्द, मुखका सूखना, शूल, भ्रमवीर्य और निद्राका नाश, तंद्रा, प्यास, ओठोंका पकना, अरुचि, दाह और खांसी ॥१३॥ अंगोंका टूटना, भ्रम, कम्प, और शिरका हिलना खाज तथा रोना, वाहियात बकना, संताप, हिचकीका आना जिसमें ये लक्षण हों उसको हे वैद्य! तू असाध्य अंतक सन्निपात जान ॥१४॥ जो मोहसे रोवै, कभी विकलताको प्राप्त हो, कभी शोचकरै, कभी फूत्कार

करे, कभी मस्तपनेको प्राप्त हो, गीतगावे, कभी संताप हो, कभी प्रसन्न होवे,कभी भ्रमसे बकने लगे, ये लक्षण जिसमें हों उसे नहीं उपाय जिसका ऐसा चितभ्रम सन्निपात जानो ॥ १५॥

रुग्दाहसन्निपातके लक्षण ।

यः शूल वितनोति दारुणभयं हस्तांघ्रिशैत्यं तथा जिह्वां कंटकितां भ्रमं विकलतां मोहं च कंठव्यथाम् ॥ श्वासं कासतरं निरंतरतृषां हृत्कंठयोः शोषणं संतापं श्रमरोदनं प्रलपनं जानीहि रुग्दाहकम् ॥ १६ ॥

शीतांगसन्निपातके लक्षण ।

शीतत्वं विदधाति योखिलतनौ रोमोद्गमं वेपथुं श्वासं कासतमं क्वचिच्छिथिलतां मूर्च्छामतीसारकम् ॥ चेष्टां क्षीणतरां क्लमं वमथुतां हिक्कां शिरश्चालनं तं शीतांगमवेहि वैद्य हरिजं मृत्योः सखायं ध्रुवम् ॥ १७ ॥

तंद्रिकसन्निपातके लक्षण ।

कंठे कंडुतृषाऽरुचिक्लमथुताः पीडा हि कर्णद्वयोर्जिह्वाश्यामतरा च कंटकयुता तंद्रातिरासो रतिः ॥ संतापः कफवेदनाबहुतराश्वासोधिकः कासता मृत्युः स्यात्खलु तंद्रिको निगदितश्चिह्नैरमीभिः परैः ॥ १८ ॥

अर्थ–पेटमें शूल हाथ पैर ठंढे जीभमें कांटे भ्रम बेकली बेहोसी कंठमें पीडा, श्वास, खांसी, प्यास बहुत लगे, हृदय कंठका सूखना संताप, श्रम, रुदन करना, प्रलाप, ये लक्षण रुग्दाह सन्निपातके जानना ॥ १६ ॥ जिसमें ये लक्षण मिलते हों उसको वैष्णवज्वर मौतका मित्र शीतांग सन्निपात जानना चाहिये जो सब देहको शीतल करदे रोम खडे होजांय कंप, श्वास, खांसी अंधेरा सुस्ती कभी मूर्च्छा और दस्तका होना जिसकी चेष्टा मंद पडिजाय विना श्रमकरे श्रमहो, रदहिचकी, शिरका कांपना ॥१७॥ कंठमें खुजली चले, प्यास, अरुचि,ग्लानि, दोनों कानोंमें पीडा काली और कांटेयुक्त जीभ तंद्रा अतिसार अरति संताप कफसे पीडा,बहुत श्वासचले, और खांसी इन लक्षणोंसे रोगीका मारनेवाला तंद्रिक सन्निपात जानना ॥ १८ ॥

कंठकुब्जसन्निपातके लक्षण ।

कंठग्रहं यः कुरुते हनुग्रहं मूर्च्छाप्रलापं ज्वरकंपवेदनाः ॥ मोहं च दाहं हृदये शिरोरुजं तं कंठकुब्जं प्रवदंति साधवः ॥१९॥

कर्णकसन्निपातके लक्षण ।

ग्रंथिः कर्णांतदेशे भवति बहुतरा कंठदेशोतिपीडा ग्लानिः श्वासः प्रसेको वचनशिथिलताश्लेष्मणारुद्धकंठः ॥ मूर्च्छाकंपः प्रलापो वपुषि कृशतमा वेदनोष्मा च कासः स्वंस्वं रूपं च रोगाविदधति सततं कर्णके सन्निपाते ॥ २० ॥

अर्थ–जो कंठमें पीडा करै, ठोडी जकड जावे, मूर्च्छा तथा बकना, ज्वर कंप, देहमें पीडा बेहोसी, हृदयमें दाह, शिरमें दर्द, ये लक्षण कंठकुब्ज सन्निपातके महात्मा कहते हैं ॥ १९ ॥ कर्णक सन्निपातके ये लक्षण हैं कानके पास गांठ बहुतसी होय कंठमें दर्द ग्लानि श्वास लारका गिरना, मंद २ बोलना, कफसे कंठका रुकना मूर्च्छा, कंप और बकना शरीर कृश तथा पीडा और गरमी और खांसी तथा अनेक रोग प्रगट हों ॥ २० ॥ इति कर्णक सन्निपातके लक्षण समाप्त हुये ॥

भुग्ननेत्रसन्निपातके लक्षण ।

स्मृतिभ्रंशन भुग्नदृक्सन्निपातःकरोत्यगपीडांभ्रमंभुग्ननेत्रम् ॥ ज्वरं वेपनं शून्यतां श्वासकासौ प्रलाप प्रसेकं पिपासामसाध्यः॥

रक्तष्ठीवीसन्निपातके लक्षण ।

छर्दिरक्तष्ठीवनं कृष्णजिह्वां कासंश्वासं मंडलं दाहमुग्रम् ॥ संज्ञानाशं तापमाध्मानतृष्णां रक्तष्ठीवी प्राणनाशं च कुर्यात्२२॥

प्रलापीसन्निपातके लक्षण ।

प्रलापी रवेः पुत्रगेहं प्रयाति ज्वरस्तापपीडांगकंपप्रयासाः ॥ तृषाशोकसंज्ञाविनाशप्रवादाः शिरःकंपमोहांगदाहो विनिद्रा २३

अर्थ–बेहोसी हो अंगोंमें दर्द भौर का आना नेत्रोंका बुरा होना ज्वर तथा काँपना देहमें शून्यता श्वास खांसी बकना लारका बहना प्यास ये लक्षण असाध्य भुग्ननेत्र सन्निपातके हैं ॥ २१ ॥ रुधिरकी उलटी करना जीभ काली हो खांसी श्वास चकत्ता पडजावे घोर दाह हो संज्ञा जातीरहै ताप ज्वर तथा पेटका फूलना तृष्णा प्यास ये लक्षण हों तो प्राणका नाश कर्त्ता रक्तष्ठीवी सन्निपात जानना ॥ २२ ॥ प्रलापी सन्निपातवाला रोगी यमलोकको जाता है और उसके ये लक्षण होते हैं ज्वर ताप पीडा काँपना विनाकारण श्रमहो प्यास शोच संज्ञा-नाश बकना शिरका हिलाना बेहोसी अंगोंमें दाह नींदका न आना ॥ २३ ॥

जिह्वकसन्निपातके लक्षण ।

जिह्वां कंटकवेष्टितां शिथिलतां श्वासाधिकं मूकतां रात्रौ जाग-

रणं तृषां बधिरतां वीर्यक्षयं क्षीणताम् ॥ हृत्पार्श्वोदरनासिकाधरगले शोथं विसंज्ञं ज्वरं काये यः कुरुते रुजं बहुतरां जानीहि तं जिह्वकम् ॥ २४ ॥

अभिन्याससन्निपातके लक्षण ।

अभिन्यासको यस्य देहे स्थितः स्याद्भवेत्तस्य मृत्युर्विनिद्रातितृष्णा ॥ ज्वरः पाददाहोङ्गकंपोतिजाड्यं भ्रमः श्वासता कासता क्षीणचेष्टा ॥ २५ ॥ ❋

अजीर्णज्वरलक्षण ।

अजीर्णज्वरो लक्षणैरष्टभिर्वा भिषक्सत्तमैर्ज्ञायतेसप्तभिर्वा ॥
अतीसारउद्गारऊष्मातिनिद्रा शिरोर्तिः प्रलापोहि जृम्भोदरे रुक् ॥

अर्थ–जीभ कांटन करके युक्त, तथा शिथिल, श्वासका ज्यादा चलना, गूंगापना, रातमें जागना प्यास तथा बहरापना वीर्यका नाश होना दुर्बलता हृदय पसवाडे पेट नाक ओठ गला इनमें सूजन हो बेहोसी, ज्वर, ये लक्षण जिसकी देहमें हों उसको जिह्वकसन्निपात जानो॥२४॥ जिसकी देहमें अभिन्यास सन्निपात हो उसके ये लक्षण हैं नींद आवै नहीं, अति प्यास हो, ज्वर, पैरोंमें दाह, अंगोंका कांपना, बेहोसी, भौर, श्वास, खांसी, चेष्टामंद, ये लक्षणवालेकी मौत होय ॥ २५ ॥ इति त्रयोदश सन्निपाताः ॥ * अजीर्णज्वर आठलक्षणोंसे अथवा सात लक्षणोंसे जानै सो ये हैं अतीसार १, डकार २, गरमी ३, अतिनिद्रा ४, शिरमें दर्द ५, खोटा बोलना ६, जँभाई ७, पेटका दूखना ८ ॥ २६ ॥

आमज्वरलक्षण ।

हल्लासलालास्रुतिवांत्यरोचकैः क्षुन्नाशनिद्राबहुमूत्रतालसैः ॥
वक्त्राल्पवैरस्यबलक्षुतक्षयैरामज्वरो वैद्यवरैर्विलक्ष्यते ॥ २७ ॥

रक्तज्वरके लक्षण ।

प्रलापोङ्गदाहो मुखाद्रक्तपातस्तृषास्फोटना मोहतांगप्रपीडा ॥
भ्रमोरक्तनेत्रेऽथ निद्रा विमूर्च्छा भवतीह रक्तज्वरे लक्षणानि २८

---

* सद्यस्त्रिपंचसप्ताहाद्दशाहाद् द्वादशादपि ॥ एकविंशद्दिनैः शुद्धः सन्निपाती सुजीवति ॥ १ ॥ (त्रिदोषज्वरस्य मर्य्यादा) सप्तमीद्विगुणायावन्नवम्येकादशी तथा॥एषा त्रिदोषमर्य्यादा मोक्षाय च बधाय च २॥ पित्तकफानिलवृद्ध्या दशदिवसद्वादशाहसप्ताहात् ॥ हन्ति विमुंचति पुरुषं त्रिदोषजो धातुमलपाकात्॥ ३॥इति ।

* (प्रसंगात् हारिद्रकसन्निपातस्य लक्षणं ग्रन्थान्तरात्) हारिद्रदेहनखनेत्रकरांघ्रितोषे निष्ठीवनादिकसनैरुपलक्षितो यः ॥ हारिद्रकस्सकथितः किल सन्निपातः साध्यो नचैव भिषजा ज्वरकालरूपः ॥ ४ ॥

दृष्टिज्वरलक्षण ।

मुहुर्मुहुर्जृम्भणमंगदाहं विस्फोटनं संधिषु शूलमुग्रम् ॥
स्तब्धेक्षिणी छर्दिमनाहतां यो दृष्टिज्वरः संकुरुते विवर्णम्॥२९॥

अर्थ—खाली ओकी आवै, लार बहे, रद्दहो, अरुचि, भूख न लगे, नींद, मूतका जादा उतरना, आलस, मुख बेरसहो, बल और भूखका घटना, तथा क्षई हो इन लक्षणोंसे वैद्योंमें चतुर सो आमज्वर जाने ॥ २७ ॥ बकना और अंगोंमें दाह, मुखसे रुधिरका गिरना, प्यास, हडकल, बेहोसी, अंगोंमें पीडा, भौंर, लाल नेत्र, नींदका आना, मूर्च्छा ये रक्तज्वरके लक्षण हैं ॥ २८ ॥ बारंबार जँभाईका आना, शरीरमें दाह, शरीरका टूटना, सन्धि २ में दर्द, भयानकनेत्र हों, बमन, अनाह, शरीरका वर्ण और तरहका होजाय, ये दृष्टिज्वरके लक्षण हैं ॥२९॥

भूतज्वरके लक्षण ।

भूतप्रेतपिशाचदैत्यदनुजैर्जातो ज्वरो राक्षसैर्यस्तापंहृदिवेपथुं वितनुते मूर्च्छां प्रलापं मदम् ॥ जृम्भामंगविमर्दनं विकलतां हास्यं क्वचिद्रोदनं गीतं रक्तविलोचनं मनुज तं जानीहि भूतज्वरम् ॥ ३० ॥

अर्थ—भूत, प्रेत, पिशाच, दैत्य, दानव, राक्षस इनसे जो ज्वर हो उनके ये लक्षणहैं शरीरतत्ता, हृदयमें कंप, मूर्च्छा, व्यर्थबकना, मस्तहोना, जंभाईका आना, शरीरको तोडना, बेकली हसना, कभी रोना, कभी गीतगाना, लाल २ नेत्र ये लक्षण भूतज्वरके हैं ॥ ३० ॥

मलज्वरलक्षण ।

प्रलापोंगतापो भ्रमो हृद्विदाहस्तृषोद्गारनिष्ठीवनं घूर्णदृष्टिः ॥
सकृन्मेहनं कंठजिह्वोष्ठशोषः शिरोगौरवं विड्ज्वरे लक्षणानि ३१

खेदज्वरलक्षण ।

विष्टंभनं स्फोटनमंगदेशेश्वासः पिपासालसताप्रसेकः ॥ स्वेदोऽतिनिद्रामदवीर्यनाशो भवंति खेदज्वरलक्षणानि ॥ ३२ ॥

शापज्वरके लक्षण ।

श्यावास्यतोद्वेगवमीपिपासा विनष्टचेष्टाभ्रमतापमूर्च्छाः ॥
दुर्गंधितांगे हृदिवेपथुत्वं भवंति शापज्वरलक्षणानि ॥ ३३ ॥

अर्थ—खोटा बोलना, शरीरतत्ता, हृदयमें दाह, प्यासलगे, डकार आवे, बार २ थूके, टेढा देखे थोडा थोडा दस्त उतरै, कंठ जीभ ओठ इनका सूखना, शिर भारी ये मलज्वरके लक्षणहैं ॥ ३१ ॥ पेटका फूलना, शरीरमें हडकल, श्वास, प्यास, आलस, लारका गिरना,

पसीना, अतिनिद्रा, मस्तपना, वीर्यका नाश, ये खेदज्वरके लक्षण हैं ॥ ३२ ॥ मुंह काला, उद्वेग, रद्द, प्यास, शरीरकी चेष्टाका नाशहोजाना, और, शरीर तत्ता, मूर्च्छा, देहमें बासका आना, हृदयका कांपना, ये सब शापज्वरके लक्षण हैं ॥ ३३ ॥

औषधजनितज्वरके लक्षण ।

भवेदौषधीगंधजे चिह्नमेतज्ज्वरे चित्तविभ्रंशता रक्तनेत्रे॥शिरो-
रुग्वमिर्मूर्च्छतागात्रशोषः पिपासाक्लमत्वं च निद्राविनाशः ३४॥

भयज्वरके लक्षण ।

भयात्कस्यचिदुद्भवेद्घोररूपे ज्वरे चिह्नमेतद्भवेदंगकंपः ॥ मुखे
शुष्कताभ्यंतरेत्यंतपीडा प्रलापोथ चित्तभ्रमः शोकमूर्छा॥३५॥

अर्थ–विषैले औषधके सूंघनेसे जो ज्वर पैदा होताहै उसके ये लक्षण होते हैं चित्तका डामाडोलहोना, लाल २ नेत्र, मथवाय उलटीका होना, मूर्छा, शरीरका सूखना, प्यास, ग्लानि, नींदका न आना, ये लक्षण औषधजनित ज्वरके हैं ॥ ३४ ॥ जिस किसीको भयसे ज्वर पैदा हुआ हो उसके ये लक्षणहैं अंगोंका कांपना, मुखका सूखना, शरीरमें बहुत पीडा, व्यर्थ बकनां, चित्त चलायमान, शोच, और मूर्छा ॥ ३५ ॥

कोपज्वरके लक्षण ।

भवंतीहकोपज्वरे लक्षणानि स्फुरद्गात्रभंगं चलद्रक्तनेत्रम्॥प्रला-
पोथ हृल्लासकंपार्तिमूर्च्छा विवर्णः प्रसेको मुखस्तालुशोषः ३६॥

शस्त्रघातज्वरलक्षण ।

शस्त्रास्त्रदंडाश्मकशादिघाततो जाते ज्वरे घोरतरे हि लक्षणम् ॥
तापःपिपासाकफकंठरुद्धताशोथःप्रलापोऽरुचिरार्तिता भवेत् ३७

अभिचारज्वरके लक्षण ।

ज्वरेऽभिचारसंज्ञके भवंति लक्षणानि षट् ॥ प्रलापशूलमोह-
तास्तृषांगकंपतारुचिः ॥ ३८ ॥

अर्थ–ये कोपज्वरके लक्षण हैं अंगोंका फडकना, शरीरका टूटना, चलायमान लाल २ नेत्र, वाहियात बकना, खाली रद्दका आना, कांपना, दुःखका होना, मूर्च्छा, शरीरका वर्ण औरही तरहका होजाना, लारका टपकना, मुख और तालुका शोष ॥ ३६ ॥ शस्त्र कहिये तलवार और छुरी आदि, और अस्त्र कहिये ब्रह्मास्त्रादि, दंड कहिये लकडी आदि, अश्म कहिये पत्थर, कशादि कहिये कोरडा आदि, इनके लगनेसे जो ज्वर पैदा हो उसके ये लक्षण हों. ज्वरहो, प्यासहो, कफसे कंठका रुकना, सूजन, बडबडाना, अरुचि दुःख ये लक्षण हैं॥ ३७॥

अभिचारसे तथा मंत्रको उलटा जपनेसे जो ज्वरहो तथा किसीने जादू कियाहो इस ज्वरमें मुख्य ६ लक्षण होतेहैं. बडबडाना, पेटमें शूल, बेहोशी, प्यास, शरीरका कांपना, अरुचि ये ॥३८॥

कामज्वरके लक्षण ।

रोमोद्गमः साहसहर्षजृम्भा भीतिर्विषादो मदशोकरोषाः ॥
एतानि चिह्नानि भवंति यस्य कामज्वरं तं कथयंति वैद्याः ॥३९॥

अथ स्त्रीप्रसंगाज्जनित० ।

स्त्रियोत्यंतसंगाद्भवेच्चिह्नमेतज्ज्वरोग्लानिनिष्ठीवनंश्वासकासम्॥
भवेद्वेपथुर्गात्रदेशेम्बुपूरस्तृषानिर्बलत्वं च पीडा च शोथः४०॥

अर्थ–रोमांच, साहस, जँभाई, डरका लगना, दुःखका होना,मोहहो, और शोक, क्रोध,ये लक्षण जिसमें हों उसको वैद्य कामज्वर कहते हैं ॥ ३९ ॥ जो मनुष्य बहुत स्त्रीसे मैथुन करै उससे पैदा ज्वरके ये लक्षण हैं ज्वरका होना, ग्लानि, बेरबेरमें थूकना, श्वास, खांसी, कंप, शरीरमें पसीनाआना, प्यास, नाताकती, पीडा, सूजन, ये ॥ ४० ॥

क्षीणधातुमंदाग्निजज्वरलक्षण ।

धातोः क्षीणतयाथवाग्निशमनाज्जातो ज्वरश्चिंतया शैथिल्यं कुरुतेऽरुचिं वितनुते धत्ते तनौ पांडुताम् ॥ सर्वांगं तुदते ददाति कृशतां हर्षं परं नाशते वीर्यत्वं जयते रुतं न सहते श्वासं भ्रमं बिभ्रते ॥ ४१ ॥

संततज्वरके लक्षण ।

वसति रुधिरधातौ यो ज्वरो द्वादशाहं क्वचिदपि च दशाहं संततं संततोयम् ॥ प्रभवति खलुनाम्ना श्वासकासं विधत्ते ज्वरयति नरदेहं याति नाशं स पश्चात् ॥ ४२ ॥

विषमज्वरके लक्षण ।

निरंतरं तिष्ठति सर्वदेहे सूक्ष्मो ज्वरो यो विदधाति शैत्यम् ॥
अत्युष्णतां यातिकदाचिदेवतंकष्टसाध्यं विषमं वदन्ति ॥४३॥

अर्थ–धातुके क्षीण होनेसे तथा मंदाग्निके होनेसे तथा चिंतासे जो ज्वर पैदाहो उसके ये लक्षण हैं. शिथिलता, अरुचि, शरीर पीलाहो, सर्वांगमें पीडाहो, तथा शरीरका कृश होना हर्ष जातारहै, वीर्यका नाश, श्वास भौंरका होना ॥ ४१ ॥ जो ज्वर रुधिर धातुमें पहुंचजाय वह ज्वर १२ तथा १० दिन बराबर बनारहै उसको संततज्वर कहते हैं उसमें श्वास, खांसी,

तथा सब देहका जरना बाद थोडे दिन यह ज्वर मारडाले है ॥ ४२ ॥ जो ज्वर मंद होके सब देहमें बराबर रहे और कभी शीत लगे कभी जादा शरीर गरम होजाय उसको कष्टसाध्य विषमज्वर कहे हैं ॥ ४३ ॥

महेन्द्रज्वरके लक्षण ।

अहोरात्रयोर्वाद्विकाले त्रिकाले चतुष्कालके वा प्रवृत्तिं निवृत्तिम् ॥ करोति ज्वरो यः स्वतंत्रोतिरौद्रो महेंद्रो हि नाम्ना निरुक्तो मुनीन्द्रैः ॥ ४४ ॥

वेलाज्वरके लक्षण ।

अहोरात्रयोरेकदेशे ज्वरो यः समागत्य देहे स्वरूपं विधाय॥नरं पीडयेन्नित्यशो निर्दयं तं विजानीहि वेलाज्वरं वैद्यराज ॥४५॥

अर्थ–जो दिनरातमें दो दफे वा तीन वा चारदफे आवे और उतर जावे उस स्वतंत्र घोर ज्वरका महेन्द्र नाम मुनियोंने कहा है ॥४४॥ जो ज्वर दिन रातमें एकदफे एक अंगमें आयके फेर सब शरीरमें फैलकर शरीरको नित्य बहुत दुःख दे उसको वैद्य वेलाज्वर जाने ॥ ४५ ॥

एकांतज्वरकालक्षण ।

दिनैकांतरे यो विधायोग्ररूपं नराणां शरीरे प्रपीडेन्नितान्तम्॥ दिनैकं विमुच्याथ धातूंश्च शेते तमेकांतरं त्वं विजानीहि वैद्य४६

एकान्तरज्वरलक्षण ।

एकांतरो ज्वरो घोरो द्विविधः परिकीर्तितः ॥ शीतेनैकः समायाति तापेनायाति यो परः ॥ ४७ ॥

त्र्याहिकज्वरके लक्षण ।

दिनद्वयं तु विश्राम्य मेदोमज्जास्थिधातुषु ॥ यःकुप्यति तृतीयेऽह्नि त्र्याहिकं तं विदुर्बुधाः ॥ ४८ ॥

अर्थ–उसको हे वैद्य! तू एकान्तरज्वर जान जो एकदिनमें घोररूप होके मनुष्योंके शरीरको दुःख दे और एक दिन छोडकर आवै और धातूनको सुखायडाले ॥ ४६ ॥ इकतरा घोर ज्वर दो प्रकारका है एक शीत लगकर आवै और एक गरमीसे आवै ॥ ४७ ॥ जो ज्वर मेदा मज्जा हड्डीमें पहुंच जाता है और दो दिन बीचमें देकर तीसरे दिन आवै उसको त्र्याहिक अर्थात् तिजारी पण्डितलोग कहते हैं ॥ ४८ ॥

चातुर्थिकादिज्वरके लक्षण।

एवं चातुर्थिको ज्ञेयः पाक्षिको मासिकस्तथा ॥ वार्षिको मुनिभिः प्रोक्तो वर्षमायाति नाऽन्यथा ॥ ४९ ॥

देवकोपजनितज्वरलक्षण ।

वापीकूपतडागगोपुरमठप्राकारवेदिप्रपादेवांगोपवनानिदेवसदनंछिन्दन्ति ये मंडपम् ॥ साधुब्राह्मणयोगिनां पितृगवां पीडां प्रकुर्वन्तिये तेषां देववरप्रकोपजनितो घोरज्वरो जायते ॥५०॥

एकांगज्वरलक्षण ।

प्राणिनामेकमंगं यो ज्वरो रुजयति ध्रुवम् ॥ तस्यांगस्य च यन्नाम तन्नाम्ना ज्वर उच्यते ॥ ५१ ॥

अर्थ—ऐसे ही चातुर्थिकज्वर जाने तथा पाक्षिक अर्थात् जो पंद्रहवें दिन आवे, तथा मासिक जो महीनामें आवे, तथा वार्षिक जो वर्षदिनमें आवे, बीच नहीं आवे ये मुनिने कहाहै ॥ ४९ ॥ जो मनुष्य बावडी, कुआ, तालाव, गोपुर, मढी, प्राकार, यज्ञकी वेदी, प्याऊ, देवप्रतिमा, बाग, मंदिर, मंडप, इनको तोडडाले तथा साधु, ब्राह्मण, योगी, माता, पिता, गऊ, इनको दुःख देते हैं तिनको ईश्वरके कोपसे घोरज्वर पैदा होता है ॥ ५० ॥ मनुष्योंके कोईसे एक अंगमें ज्वर चढै और उस अंगका जो नामहो वह ज्वर उसी नामकरके कहाजाताहै ॥ ५१ ॥

ज्वरस्तु यस्य संस्पर्शाद्गंधाद्वा दर्शनादपि ॥ ज्वरो भवति तन्नाम्ना इति रोगविदो विदुः ॥ ५२ ॥

अंतकज्वरलक्षण ।

श्वासोर्मी वहते गलं कफचयैः संरुध्यते यो मुखात्फेनं संवमते शिरां विधमते कासं विधत्तेऽरतिम् ॥ आध्मानं कुरुते च मोहमरुचिं हिक्कामतीसारकं तं विद्याज्ज्वरमंतकं प्रियसखं मृत्योरसाध्यं भृशम् ॥ ५३ ॥

शोकज्वरके लक्षण ।

अर्थाऽपत्यकलत्रभ्रातृसुहृदां शोकोद्भवो यो ज्वरः शैथिल्यं कुरुते नरं विमनसं श्वासं मुहुर्वेदनाम् ॥ स्तैमित्यं विकलं भ्रमं बधिरतां मूर्च्छां बलौजःक्षयं प्रस्वेदं बहुमोहतामरुचितां निद्रां तनौ पांडुताम् ॥ ५४ ॥

त्वचामें प्राप्तहुए वातज्वरलक्षण।

कुर्यात्त्वचिस्थः पवनज्वरोनिशं रोमोद्गमं रौक्ष्यत्वगक्षिमीलनम्॥
जृम्भांगमर्दश्रवणाक्षिवेदनां विण्मूत्रबंधं मुखमिष्टतारती ॥ ५५ ॥

अर्थ–और जो ज्वर किसीवस्तुके छूनेसे अथवा सूंघनेसे वा देखनेसे होय वह उसी नामसे विख्यात होताहै ऐसे रोगके जाननेवाले कहते हैं ॥ ५२ ॥ श्वासका ज्यादा चलना, गला कफके समूहसे रुकाहो, और जो मुखसे झाग गेरे, नाडीका जोरसे चलना, खांसी, इच्छाका नाश, पेटका फूलना, बेहोसी, और अरुचि, हिचकी, दस्तका होना ये लक्षण, मृत्युका प्यारा (मित्र) कालज्वरका जानना ये असाध्य हैं ॥ ५३ ॥ द्रव्य पुत्रादि स्त्री भैया सुहृद इनके नष्टहोनेके शोकसे जो ज्वर होताहै उसके ये लक्षण हैं शरीरमें शिथिलता, मनका बिगडजाना, श्वास, बेर २ में दुःखका होना, शरीर गीलेकपडेसे पोंछासा हो, बेकली, बहिरापना, मूर्च्छा, तथा बल तेज इनका नाश होना, पसीना बहुतहो, बेहोसी, अरुचि, नींद, शरीरपीला ॥ ५४ ॥ वातज्वर त्वचामें हो तो ये लक्षण हों, रोमांच तथा त्वचाका रूखापन, आंखोंका मीचना, जंभाई अंगोंका टूटना, कान आंखमें दर्द, दस्त पेसाबका बंदहोना, मुख मीठा, तथा अरति ॥ ५५ ॥

चर्मगतपित्तज्वरलक्षण ।

रक्तत्वचंदाहमतीवतृष्णामास्येकटुत्वं परिदेहशोषम् ॥ ऊष्मा-
णमार्तिं बहुशीतलेच्छां पित्तज्वरश्चर्मगतः करोति ॥ ५६ ॥

चर्मगतकफज्वरलक्षण ।

लालामुखे गौरवमालसत्वं निष्ठीवन शीतवपुः शिरोर्तिम् ॥
निद्रां च मूत्राधिकतां प्रलापं श्लेष्मज्वरश्चर्मगतः करोति॥५७॥

रसगतज्वरलक्षण ।

पिपासाशिरोर्तिर्वमिः शूलमुग्रं प्रलापोंगकंपो रुचिर्वैमनस्यम्॥
वपुः स्वेदरोमांचितं कंठदाहो रसस्थो ज्वरो लक्षणैर्ज्ञायतेज्ञैः५८

रुधिरगतज्वरलक्षण ।

ज्वरः शोणितस्थो भ्रम देहदाहं सरक्त च निष्ठीवनं ताम्रनेत्रम्॥शिरः
पीडनं शोषमूष्माणमार्तिं पिपासामरोचं करोतीति मूर्च्छाम् ५९॥

अर्थ–लालत्वचा, दाह, अत्यन्त प्यास, मुखकडुवा, शरीरका सूखना, गरमी मालूम हो, घबराहट, शीतलवस्तुकी इच्छा ये लक्षण पित्तज्वर त्वचामें होय तो होते हैं ॥ ५६ ॥ मुखसे लारका बहना, शरीर भारी, आलस, कफका थूंकना, देह शीतल, मथवाय, निद्रा, पेशाबका ज्यादा गिरना, बडबडाना, ये लक्षण कफज्वर चर्ममें पहुंचता हैं तब होते हैं ॥ ५७ ॥ प्यास,

मथवाय, बमन, दर्द, बडबडाना, अंगोंमें कँपकपी, अरुचि, मनका बिगडना, शरीरमें रोमांच, तथा पसीना, कंठमें दाह, ये लक्षणोंसे जानो कि इसके रसमें ज्वर पहुंच गया है ॥ ५८ ॥ जो ज्वर रुधिरमें पहुंच जावे उसके ये लक्षण हैं भौंर, देहमें दाह, रुधिरमिला थूकना, तांबेसरीखे नेत्र लाल, शिरमें दर्द, शोष, गरमी घबराहट, प्यास, अरुचि, और मूर्च्छा ॥ ५९ ॥

मांसगतज्वरलक्षण ।

भवंतिज्वरेमांसगे लक्षणानि तमोष्मांगमर्दो भ्रमो मूत्रकृच्छ्रः ॥ वपुः स्वेदमभ्यंतरे तीव्रदाहस्तृषावेदना छर्दिरार्तिः प्रलापः ६० ॥

मेदगतज्वरलक्षण ।

भवंति ज्वरे मेदगे लक्षणानि शरीरेतिदुर्गंधिता दंतपीडा ॥ मुहुर्मूत्रता वह्निनाशः कृशत्वं विषादोल्पसारो रुचिः श्वासकासौ ६१ ॥

अस्थिगतज्वरलक्षण ।

ज्वरेऽस्थिप्रदेशे गते लक्षणानि भवंत्यस्थिविस्फोटनं पर्वभेदः ॥ शरीरस्य विक्षेपण देहदाहस्तृषोष्माविलापोभ्रमः स्वेदतापौ६२ ॥

अर्थ–मांसमें जब ज्वर पहुंच जाता है उसके ये लक्षण होते हैं अंधेरा आना, गरमीका लगना, शरीरका टूटना, भौंर, पेशाबका रुक २ के गिरना, शरीरमें पसीना, हृदयमें ज्यादा दाह, प्यास, बेकली, रद्द, दुःख, बडबडाना ॥ ६० ॥ मेदामें ज्वर पहुंच जाता है उसके ये लक्षण हैं शरीरमें बासआना, दांतोंमें दर्द, बेर २ मूतना, जठराग्निका नाश, देह कृश, दुःख, बलका घटना, अरुचि, श्वास, और खांसी ॥ ६१ ॥ जिसका ज्वर हड्डीमें पहुंच जाता है उसके ये लक्षण हैं हडफूटन हो, संधि २ में पीडा, देहको इधर उधर पटकना, तथा देहमें दाह, प्यास, गरमी, विलाप, भ्रम, पसीना, तथा ज्वर ॥ ६२ ॥

मज्जागतज्वरलक्षण ।

बहिःशीतताभ्यंतरेऽत्यतदाहः तमः कपन मर्मभेदः प्रलापः ॥ तृषाश्वासहिक्कार्त्तयो मूत्ररोधो भवति ज्वरे मज्जगे लक्षणानि६३

शुक्रगतज्वरलक्षण ।

ज्वरः शुक्रदेशेस्थितो मृत्युदूतस्तदाज्ञायते सप्तचिह्नैर्भिषग्भिः॥ भ्रमो वीर्यनाशस्त्वचाहीनशोफो बलौजःक्षयः श्वासकासौ क्लमत्वम् ॥ ६४ ॥

धातुपाकीज्वरलक्षण ।

निद्राबलौजोरुचिर्वीर्यनाशो हृद्वेदनागौरवताल्पचेष्टा ॥ विष्टं-

भता यस्य किलारतिः स्यात्स धातुपाकी मुनिभिः प्रदिष्टः६५॥

अर्थ—बाहरसे जाडा लगे, भीतर अत्यंत दाहहो, अंधेरा आना, कांपना, मर्म स्थानोंमें दर्द, बडबडाना, प्यास, श्वास, हिचकी, बेकली, मूतका रुकना, ये लक्षण मेदामें ज्वर पहुंच जाताहै तब होतेहैं ॥ ६३ ॥ जब मौतका दूत ज्वर शुक्र याने वीर्य्यमें पहुंचजाय उसको वैद्य सात लक्षणोंसे जाने भौंर, वीर्य्यका नाश, त्वचाका हीनहोना, बल, तेज, इनका नाश, श्वास, खांसी, ग्लानि ॥ ६४ ॥ नींद, बल, तेज, इच्छा, वीर्य, इनका नाश, हृदयमें दुःख, शरीरका भारीपना अल्पचेष्टा, दस्तका रुकना, मनका न लगना ये लक्षण जिसमें हों उसको धातुपाक मुनियोंने कहाहै ॥ ६५ ॥

तथा च ।

काये धातुविपाकिनां परकरस्पर्शोऽपि वज्रायते रात्रिः कल्पशतायतेल्पतरभो दीपोऽपि दावायते ॥ शब्दो बाणसमायते मृदुगतिर्वातस्त्रिशूलायते यूकासूचिकुलायते तनुतमं वासोऽपि भारायते ॥ ६६ ॥

ज्वरस्य दशोपद्रवाः ।

ज्वरस्य प्रसिद्धादशोपद्रवाः स्युस्तृषा विड्ग्रहश्छर्द्यतीसारहिक्काः ॥ शरीरस्य भेदोऽरुचिः श्वासकासौ समूर्च्छा हि भागद्वयं ते प्रदद्युः ॥ ६७ ॥

अर्थ—धातुपाकी मनुष्यके देहमें अन्य मनुष्यके हाथका स्पर्श वज्रके समान मालूमपडे, अल्परोशनीवालाभी जो दीपक सोभी ज्वालाके समान मालूमहो, बोलना बाणके समानलगे, मन्दगति चलनेवाला पवन त्रिशूलके समान लगे, जुआं खटमल आदिका काटना सूईके समान लगे, छोटाभीवस्त्र शरीरपर भारी लगे ॥ ६६ ॥ ज्वरके उपद्रव दश प्रसिद्धहैं प्यास, दस्तका बंद होना, रद्द ,अतीसार, हिचकी, शरीरका टूटना, अरुचि, श्वास, खाँसी और मूर्च्छा॥६७॥

शरीरस्य बाह्ये यदा श्लेष्मवातौ भवेतां तदा शीतलं बाह्यदेशम् ॥ यदाभ्यंतरेऽभ्यंतरे शीतलत्वं भवेद्यत्र पित्तं विदाहोपि तत्र ॥ ६८ ॥ यस्मिन्नंगे वायुर्याति तस्मिन्नंगे पीडां कुर्यात्॥ पित्तं दाहं श्लेष्माशीतं सर्वान् दोषान् सर्वे कुर्युः ॥ ६९ ॥ अतर्दाहः प्रलापः श्वसनमतितृषानिग्रहो दोषवर्चः स्वेदः संध्यस्थिशूल भ्रमविकलतनुः संधिदेशेषु पीडाम् ॥ अंतर्वे-

गस्य चिह्नं निगदितमपरैर्वैद्यराजैर्ज्वरस्य दाहादीनां लघुत्वं यदि भवति बहिर्वेगरोगस्य चिह्नम् ॥ ७० ॥

अर्थ—यदि वात कफ शरीरके बाहर होवे तो बाहरका सब भाग शीतरहे, और जो वात-कफ शरीरके भीतरहों तो भीतरही शीतलता रहैं, और पित्त जिस जगह होय तो दाहभी उसी जगह जाने ॥ ६८ ॥ जिस अंगमें वायु याने बादी हो उसी अंगमें दर्दहो और जिस अंगमें पित्त होय उसी अंगमें दाह होय और जिस अंगमें कफ होय उसी अंगमें शीतलता होय और जिस जगहपर जितने दोषहों उतनेही रागोंको पैदा करे है दो होंय तो दो, और तीन होंय तो तीन, और एक होय तो एक ॥ ६९ ॥ शरीरके भीतर दाह हो, वाहियात बकना, श्वास, अत्यन्तप्यासका रुकना, दोषोंका बढाना, पसीना, संधियोंमें तथा हड्डियोंमें शूलका चलना, भौंर ॥ ७० ॥

असाध्यलक्षण ।

भवेद्यस्य दुर्गंधता श्वासवाहे तथांगप्रदेशेतिकंपो विवर्णः ॥ बहिः शीतताभ्यंतरेत्यंतदाहः स रोगी रवेः पुत्रगेहं प्रयाति॥७१॥ कृशः पिच्छिलांगो महाश्वासवाहो भ्रमो हृष्टरोमारुणाक्षोंग-कंपः ॥ तमो रात्रिदाहो दिवाशीततार्तिः स रोगी न जीवेत्कदाचित्सुधाभिः ॥ ७२ ॥ जिह्वा श्यामतराथ कंटकयुता रात्रौ दिने जागरः श्वासो निर्गतलोचने शिथिलता नासामुखे शुष्कता ॥ यस्यांगे परिमंडलानि बहुशो मूर्छा प्रलापस्तमः कासो रुद्धगलो गदी स गदितोऽसाध्यो भिषग्भिः परैः॥७३॥

अर्थ—ऐसा रोगी रविका पुत्र जो यमराज ताके घर जाता है कैसा कि, जिसके श्वास निकसनेमें वास आवे, तथा शरीरमें अत्यन्त कँपकँपी, शरीरका विवर्ण, बाहरसे शीतलता और भीतर अत्यन्त दाह ॥ ७१ ॥ कृश, पिच्छलदेह, बडी २ श्वासका चलना, भ्रम, हृष्टरोम, लालनेत्र, अंगसे कंप, अँधेरेका आना, रातमें दाह होना, दिनमें जाडा लगना, तथा दुःख, ऐसा रोगी अमृत करके भी नहीं जीवे ॥ ७२ ॥ जीभ जिसकी काली और काँटोंसे व्याप्त, दिनरात जागना, श्वासका चलना, नेत्रोंमें सुस्ती, नाक मुख सूखना, जाके देहमें रुधिरके चकत्ता पडगये होयँ, मूर्च्छा, बडबडाना, अंधेरा आना, खांसीसे गलेका रुकना, ऐसा रोगी वैद्योंने असाध्य कहा है ॥ ७३ ॥

भवेद्यस्य नेत्राश्रुपातोङ्गहीनो मुखान्नासिकायाः पतेद्रक्तधारा॥ मुखंकुंकुमाभं गलेकर्णमूलं सरोगी न जीवेत्कदाचित्प्रयत्नैः ॥

॥ ७४ ॥ कृशस्थूलता स्थूलतायाः कृशत्वं स्फुटन्नेत्रगोलं स्वभावोऽन्यथा स्यात् । शरीरार्द्धशूलं त्वचाहीनशोफो गमिष्यन्सरोगी यमस्यालयं वै ॥ ७५ ॥ गदी जिह्वया यो रसं वेत्ति नैव श्रुतिभ्यां न शब्दं न नेत्रेण रूपम् ॥ त्वचास्पर्शमुग्रं नसा नैव गंधं स रोगी न जीवेत्सहस्रैरुपायैः ॥ ७६ ॥

अर्थ–नेत्रोंसे आंशू गिरे, शून्य देह, मुख नाकसे लोहूका गिरना, मुँह जिसका लाल, गलेमें कर्णमूल रोग हो, वह रोगी कदाचित् यत्नोंसे न जीवे ॥ ७४ ॥ कृश तो मोटा और मोटा कृश और नेत्रोंके गोल फटेसे माल्रुम हों स्वभाव पलट जावे, आधे शरीरमें शूल चले, त्वचाहीन लिङ्गेन्द्री हो, वह रोगी यमराजके घर जायगा ॥ ७५ ॥ जिस रोगीको जीभसे स्वाद न माल्रुम हो, और कानोंसे शब्द न सुने, और नेत्रोंसे जिसे दीखै नहीं त्वचामें स्पर्श न माल्रुम हो, नाकसे गंध न माल्रुम हो, ऐसा रोगी हजार उपाय करनेपरभी नहीं बचैगा ७६

भवेद्यस्य बाह्यांतरे शीतगात्रं न जीवेद्गदी चंडरश्मेः सुताभ्याम्॥प्रलापंशिरश्चालनं यः करोति सुषेणादिवैद्यैरसाध्योनिरुक्तः ॥ ७७ ॥ गतायुर्मनुष्यो न पश्येत्स्वजिह्वां ध्रुवं नासिकाग्रं वशिष्ठस्य भार्य्याम् ॥ स्वकीयां च छायां विशीर्षां सरंध्रां भृशं याति नाशं नरो योनुपश्येत् ॥ ७८॥ स्वरो यस्य हीनो गुदा यस्य भ्रष्टा शरीरे कृशत्वं बलौजोविहीनः ॥ निमग्नेक्षिणी संभ्रमः श्वासकासौ स रोगीयमस्यालये याति शीघ्रम्॥७९॥

अर्थ–जिसका बाहर भीतर शीतल शरीर हो, वह रोगी चंडरश्मि जो सूर्य्य तिसके पुत्र जे अश्विनी कुमार तिन करके न जीवे तथा बडबडाना शिरका इधर उधर पटकना, जो रोगी करे वह सुषेणआदि वैद्यों करके असाध्य कहा है ॥ ७७ ॥ मरनेवाला मनुष्य अपनी जीभ ध्रुवका तारा नासिकाका अग्रभाग अरुंधती इनको नहीं देखै, तथा अपनी छायाके मस्तक नहीं देखै, तथा अपनी छायामें छेद दीखै, वह रोगी निश्चय मरै ॥ ७८ ॥ स्वर जिस रोगीका मंद हो गुदा जिसकी भ्रष्ट, शरीर कृश, तथा निर्बल और तेजरहित नेत्र, जिसके भीतर घुसजांय, संभ्रम, श्वास, खांसी ऐसा रोगी यमपुरको जल्दी जावै ॥ ७९ ॥

रुदतिहसतिगीतंगीयतेक्वापिकालेश्वसितिमुदतिचित्तेभाषतेदुर्वचांसि ॥ प्रलपतिपरिदेवंवादते नृत्यतेयोवहतिबहुलतापंयास्यतेमृत्युवक्त्रे ॥ ८० ॥

अथ रोगमुक्तस्यलक्षणम् ।

विमुक्तरोगस्य नरस्य लक्षणं विड्बंधमोक्षौ मनसि प्रसन्नता॥ देहे लघुत्वं रसनातिकोमला स्वल्पा तृषेच्छा रसभोजने भवेत् ॥ ८१ ॥ उरसि शिरसि कंडू रात्रिनिद्रांत्रगुंजा भवति विशदचेतः स्वल्पतृष्णांगरौक्ष्यम् ॥ मुखकरणविपाकः स्वेद-युक्तं शरीरं कृमिमलपरिपूर्णं रोगमुक्तस्य चिह्नम् ॥ ८२ ॥

अर्थ-रोवै, हँसे, कभी गीतगावै, श्वास ले, कभी चित्तमें प्रसन्न हो, कभी खोटा बोलै, बडबडावे, कभी वेदनाहो, कभी ताली बजावै, कभी उठकर नाचने लगै, और ज्वर बडे जोरसे हो वह रोगी निश्चय मौतका ग्रास होवै ॥ ८० ॥ नीरोगी रोगहीन मनुष्यके ये लक्षण हैं दस्त खुलकर हो मन प्रसन्न, हलका शरीर, जीभ कोमल, प्यास कम, रसभोजनमें इच्छाहो ॥ ८१ ॥ हृदयमें और माथेमें खुजालचलै, रातमें अच्छी तरह नींद आवै, आंतोंका बोलना, चित्त प्रसन्न, अल्पप्यास, शरीररूखा, मुख और कानका पकना, पसीनेका आना, मल कीडोंसे परिपूर्ण, ये रोग दूर हुयेके लक्षण हैं ॥ ८२ ॥

शीतंगुदंयस्यशुभाचदृष्टिश्चैतन्यकायःकफहीनकंठम् ॥ स्वल्पां-गतापो रसनातिशुद्धा शीर्षे लघुत्वं स रुजा विमुक्तः ॥८३॥ तारुण्यं विदधातिषट्सु दिवसेष्वाद्येषु घोरज्वरस्तस्मिन्नौष-धमुत्कटं गदहरो दद्यान्नकाले क्वचित् ॥ दोषोपद्रवसंयुतेतितरु-णे देयं झटित्यौषधं वार्धक्यं दिनपंचकेषु पुरुतो जीर्णज्वरोऽतः परम् ॥ ८४ ॥

ज्वराणां स्वरूपाणि ।

बीभत्सस्त्रिशिराज्वरोथ कपिलो भस्मप्रहारस्त्रिपात् पिंगाक्षोथ महोदरोऽथ परतो रौद्रो ज्वलद्विग्रहः ॥ शंभोः श्वाससमुद्भवाभयकरा दक्षक्रतोर्ध्वंसकाः घोराघर्घरनादिनो मुनिवरैः प्रोक्ता ज्वरास्तेऽष्टधा ॥ ८५ ॥

अर्थ- शीतल तो गुदाहो, शुभ जिसकी दृष्टि, शरीरमें चैतन्यता, कफरहितकंठ, देहमें मदगरमी, जीभ शुद्ध, शिर हलका ये लक्षण गतरोगके हैं ॥ ८३ ॥ आदिके छः दिनमें तो घोर ज्वर तरुण होताहै, तिसमें करडी रोगहर्त्ता, दवाई कभी न दे, और कदाचित् तरुण ज्वरमें दोषोंका उपद्रव हो तो जल्दी दवाई देवे तो छः दिनसे परे पांचदिनतक ज्वरको बूढा

कहतेहैं इस उपरांत अर्थात् ग्यारहदिन उपरांत जीर्णज्वर कहाताहै ॥ ८४ ॥ रुद्रके श्वाससे पैदा हुये भयके देनेहारे दक्षप्रजापतिके यज्ञके बिगाडनेवाले घोर घर्र घर्र नादके कर्त्ता ज्वर मुनीश्वरोंने आठतरहके कहेहैं सो लिखतेहैं १ बीभत्स, २ त्रिशिरा, ३ कपिल, ४ भस्मप्रहारी, ५ त्रिपात, ६ पिंगाक्ष, ७ महोदर, ८ ज्वलद्विग्रह ये ॥ ८५ ॥

बीभत्सज्वरस्वरूपमाह ।

बीभत्सोरुधिरारुणांबरवृतो मुण्डास्थिमालाधरो रक्ताक्षः कृमिसंकुलस्त्रिनयनो दुर्गंधिपूर्णोनिशम् ॥ नग्नो रुद्रसमुद्भवोतिबलवान्कोपो जगद्घातकः कृष्णांगो मलिनो मदान्धदमनः पूष्णोद्विजध्वंसकः ॥ ८६ ॥

अथ त्रिशिराज्वरस्य लक्षणम् ।

अभूद्दक्षविध्वंसरुद्रप्रकोपात् त्रिशीर्षस्त्रिपान्नंदनेत्रोतिकायः ॥ चलज्जिह्वया सृक्किणीलेलिहानो बृहत्तालुजंघोरुणाक्षोतिक्रोधी ॥ ८७ ॥ अभूद्रुद्रकोपाज्ज्वरः कापिलाख्यो मुखांगारपुंजोद्गिरन्दीर्घकायः ॥ मदाघूर्णिताक्षः स्फुरत्ताम्रकेशो महामेघगर्जो मनोहर्षहर्त्ता ॥ ८८ ॥

अर्थ–रुधिरसे रँगे हुये वस्त्रोंको पहिरे, मुण्ड और हड्डियोंकी मालाका धारणकरने वाला, लाल २ नेत्र, कृमिसे जिसकी देह व्याप्त, तीन नेत्र बास जिसकी देहमें सदा आतीहै, नंगा, रुद्रसे पैदा हुआ अतिबली, कोपवान्, जगत्का घातक, कालेरंगका, मलिन, मस्तोंको सीधा करनेवाला, पूषादेवताके दांतोंका तोडनेवाला ऐसा बीभत्स ज्वर है ॥८६ ॥ श्रीमहादेवके कोपसे तीनमाथेका त्रिशिरा नाम ज्वर दक्षका मारनेवाला हुआ, तीन जिसके पांव, नवनेत्र, अत्यन्तलंबी चलायमान छुरासी जीभसे ओठोंको चाटता, बडे ताल वृक्षके समान जंघा, लाललालनेत्र, अत्यन्तक्रोधी॥८७॥ रुद्रभगवान्के कोपमें एक कपिलनामक विख्यात ज्वर पैदा हुआ, मुखमेंसे अंगारोंकी उलटी करता, अतिलंबा, मदमें चलायमान नेत्रहैं जिसके, प्रकाशमान तांबेके समान बाल हैं जिसके, घोर मेघकीसी गर्जना करनेवाला मनके हर्षका दूर करने हारा ॥ ८८ ॥

भस्मविक्षेपकज्वरलक्षणम् ।

अभूद्भस्मविक्षेपको रुद्रकोपान्महाट्टाट्टहासो मुहुर्जृम्भमाणः ॥ चलत्सप्तजिह्वः करालोग्रदंष्ट्रः स्फुरत्तप्तताम्रारुणः श्मश्रुकेशः ॥ ८९ ॥ त्रिपाद्रुद्रकोपाद्भभूवारुणाक्षो भृगोः श्मश्रुविध्वं-

सकः स्तब्धकर्णः ॥ ज्वरो दीर्घकायो मुहुः श्वासकर्त्ता रणे नृत्यमानोंगदाही तृषार्त्तः ॥ ९० ॥

त्रिपादज्वरस्य स्वरूपम् ।

अभूद्वीरभद्रेश्वराडुत्कटास्यो ज्वरः पिंगनेत्रोल्पजंघोग्निवर्णः ॥ तृषार्तोद्विजिह्वोनृसिंहोद्वितीयश्चलत्तीव्रकेशःकृशःशुष्कमांसः॥

अर्थ–श्रीरुद्रके कोपसे एक भस्मविक्षेपक ज्वर पैदाहुआ महान् अट्टहासका करने वाला, बेर २ में जंभाई लेता, चलायमान, सातछुरोंसी जीभ है, भयानक कीलासी डाढ, प्रकाशमान तपाये तांबेके समानहैं डाढी और बाल जिसके ॥ ८९ ॥ श्रीरुद्रके कोपसे एक त्रिपादनामक ज्वर पैदा हुआ तीनपैर लालनेत्रवाला, और भृगुकी डाढीका उखाडनेवाला, खडे कान जिसके बडी देह जिसकी बारबार वासका कर्त्ता, संग्राममें नाचनेवाला, शरीरमें दाहका तथा प्यासका कर्त्ता ॥ ९० ॥ वीरभद्र गणसे एक पिंगाक्षनामक ज्वर पैदा भया बडे मुख, छोटी जांघ, अग्नि-सरीखा वर्ण, प्याससे दुःखी, दो जीभका मानो दूसरा नृसिंहहीहै चलायमान तीखेबाल कृश सूखाहुआ शरीरका मांस जिसका ॥ ९१ ॥

महोदरज्वरस्य स्वरूपम् ।

बभूवातिदीर्घोदरोलबकर्णो ज्वलेदग्निरूपश्चलद्रक्तनेत्रः ॥ तृषा-श्वासजृम्भान्वितांगप्रमर्दो भटेशोज्वरोरक्तवर्णः प्रमत्तः ॥ ९२॥

पिंगाक्षका स्वरूप ।

ज्वलद्विग्रहोमुक्तकेशश्चलद्भ्रूस्त्रिशूलासिहस्तोभुजंगेशपाशः ॥ ज्वरेशोतिवीर्योहरश्वासजातः कृशः शुष्कमांसोबलीभैरवेशः॥ ॥ ९३ ॥ भिषक्चक्रचित्तोत्सवेकर्कशानांज्वराणांस्वरूपंमया-कीर्तितंयत् ॥ सुषेणाश्विनीजात्रिधन्वंतरीणां विलोक्याखिलं शास्त्रमन्यागमंवै ॥ ९४ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते हंसराज निदाने वैद्यशास्त्रे ज्वरलक्षणं प्रथमम् ॥

अर्थ–एक ज्वर महोदर नामक पैदाहुआ जिसका बडा पेट, लम्बेकान, जलती अग्निके समान स्वरूप, चंचल लाल २ नेत्र, प्यास, श्वास, जँभाईयुक्त, अंगका तोडनेवाला, वीरोंका मालिक, लालवर्ण और मतवाला ॥ ९२ ॥ श्रीहरभगवान्के श्वाससे पैदाहुआ ज्वलद्विग्रहनामक ज्वर खुले भये हैं बाल और चलायमान भ्रू त्रिशूल तलवार सांप फांस ये हैं हाथमें जिसके ज्वरोंका राजा

अतिबली, कृश सूखे मांसवाळा पराक्रमी भैरवेश प्रसिद्ध ॥ ९३ ॥ हंसराज कवि कहते हैं कि भिषक्चक्रचित्तोत्सव ग्रन्थमें कठोर ज्वरोंके स्वरूप तथा लक्षण मैंने कहे कदाचित् कोई कहै कि तुम्हारे कहनेका क्या प्रमाण है उसी शंकाको दूर करते हैं सुषेण, अश्विनीकुमार, अत्रिऋषि, धन्वंतरि, इनके बनाये हुये ग्रन्थोंको देखकर तथा और जे माधवादि अर्वाचीन आचार्य्योंका मत उसको देखकर यह ग्रन्थ मैंने निर्माण किया है इससे यह ग्रन्थ पठनयोग्यहै ॥ ९४ ॥

इति श्रीदत्तरामकृते हंसराजार्थबोधिनीमाथुरीभाषाटीकायां ज्वराधिकारस्समाप्तिमगमत् ।

अतिसारलक्षणानि ।

तत्रादौ वातातिसारलक्षणम् ।

तृष्णाग्लानिर्नितांतं हृदि जठरगुदे शूलमुग्रं सदाहं स्वल्पं स्वल्पं पुरीषं प्रभवति सततं नैव सर्वच्युतिः स्यात्॥अन्तर्दाहश्च श्वासोरुचिविकलतनुर्वक्रनासातिशोषो वातातीसारचिह्नं निगदितमृषिभिः पूर्वजैर्वैद्यविद्भिः ॥ १ ॥

पित्तातिसारके लक्षण ।

नानावर्णं पुरीषं मधुवससदृशं दुष्टदुर्गंधियुक्तं वारंवारं सतप्त प्रचलति गुदतः कंपसंतापयोगः ॥ शूल दाहो गुदाग्रे हृदि नसि वदने शोषतृष्णाश्रमत्वं पित्तातीसारचिह्नं कथितमृषिवरैरत्रिभारद्वजाद्यैः ॥ २ ॥

कफातिसारके लक्षण ।

सकष्टंगुदातःपुरीषप्रवाहश्चलत्फेनिलोमेदुरोदुष्टगंधिः ॥ हरिच्छ्वेतकृष्णाकृतिः कष्टसाध्यो भवेच्चिह्नमेतत्कफस्यातिसारे॥३॥

अर्थ-तृषा, ग्लानि, अत्यन्त हृदयमें, पेटमें, गुदामें, घोरदर्द, तथा दाह, थोडा २ मल निकसे सब न निकसे, भीतर दाहहो, श्वास, अरुचि, देहमें बेकली, मुख, नाक इनका अत्यन्त सूखना, ये लक्षण वातातिसारके पहले ऋषि तथा वैद्योंने कहेहैं ॥ १ ॥ दस्तजिस रोगीका चित्र विचित्ररंगका निकसे तथा सहतके रंगका वा बसाके रंगका निकसै और दुर्गंधयुक्तहो बारबारमें तत्ता जावे कंप तथा संतापके साथ और शूल दाह ये गुदाके द्वार पर हों तथा हृदय नाक मुख इनमें शोषहो प्यास और अनायासश्रम हो ये लक्षण ऋषिनमें श्रेष्ठ अत्रि और भरद्वाजादिकोंने पित्तातिसारके कहे हैं ॥ २ ॥ जिसके दस्तका प्रवाह गुदासे बडेदुःखसे जावे जिसमें झागहो चिकनाहो दुष्टगंधहो हरा श्वेत काला वर्णहो यह कष्टसाध्य कफातिसारके लक्षणहैं ॥३॥

सन्निपातातिसारलक्षण ।

अतीसारेसारे कफपवनपित्तप्रजनिते गुदे पार्श्वे कुक्षौ जठरहृदये शूलमरुचिः ॥ मुखे कंठे शोषो भवति सततं छर्दिररतिस्तृषाकासः श्वासो वपुषि परिशोफोङ्गदहनम् ॥ ४ ॥

रक्तातिसारके लक्षण ।

वारंवारं पुरीषं भवति सरुधिरं कंठताल्वोष्ठशोषो बस्तौ पादे प्रपीडा हृदि जठरगुदे पार्श्वदेशेषु शूलम् ॥ ग्लानिः काये कृशत्वं परिगलिततनुर्निर्बलत्वं शरीरे रक्तातीसारचिह्न प्रवरमुनिजनैः प्रोक्तमेतन्नितांतम् ॥ ५ ॥

आमातिसारके लक्षण ।

आमं स्वल्पं पुरीषं सितरुधिरनिभं पीतवर्णं सकष्टं वारंवारं प्रतप्तं प्रचलति गुदतः पूयदुर्गंधियुक्तम् ॥ स्निग्धं शूलं गुदाग्रे प्रभवति परितः फेनिलं पिच्छिलं वा आमातीसारचिह्नं मुनिवरवचनात्कीर्तितं हंसराजैः ॥ ६ ॥

अर्थ—वात पित्त कफसे पैदा हुआ घोर अतिसार उसमें ये लक्षण होते हैं—कि गुदा, पीठ, कूख, पेट, हृदय इनमें शूलका चलना, अरुचि मुख कंठका सूखना, रद्द, तथा मनका न लगना. प्यास, खांसी, श्वास, शरीरमें सूजन, शरीरका दहन ॥ ४ ॥ बारंबार दस्त रुधिर मिलाहुआ हो. कंठ तालु ओठ इनका सूखना, मूत्रस्थान तथा पैरोंमें पीडा हृदयमें पेटमें गुदामें पीठमें शूल तथा ग्लानि, शरीरका कृश तथा गलना तथा निर्बल होना ये लक्षण रक्तातिसारके मुनीश्वरोंने निश्चय करके कहे हैं ॥ ५ ॥ आममिला थोडा २ दस्तहो श्वेत तथा रुधिरके समान तथा पीला वर्ण साथ कष्टके दस्तहो वारम्बार तत्ता गुदासे रांध दुर्गंध युक्त चिकना, गुदाग्रमें पीडा, तथा झाग युक्त और गाढ, ये लक्षण आमातिसारके मुनीश्वरोंके वचनसे हंसराजने कहेहैं ६

अतिसारका असाध्यलक्षण ।

अतीसारिणंतंत्यजेच्छीतगात्रंतृषाशोथशूलान्वितंश्वासयुक्तम् ॥ ज्वराध्मानहिक्कान्वितं दाहमूर्च्छागुदापृष्ठशोषार्तिकासादिजुष्टम् ७

अतिसारकी उत्पत्ति ।

विरुद्धाशनैः स्निग्धदुग्धान्नदोषैर्द्रवस्नेहदुष्टाम्बुमद्यादिपानैः ॥ गरिष्ठाम्लपिष्टैः कृमीणां विकारैरतीसाररोगो भवेन्मानवानाम् ८

अतिसारे पथ्यम् ।

अतीसारे त्यजेत्स्नान संतापं वह्निसूर्ययोः ॥ तैलाभ्यंगं च व्यायामं गुरुस्निग्धादिभोजनम् ॥ ९ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे अतीसारलक्षणं द्वितीयम् ।

अर्थ–ऐसे अतिसारी मनुष्यको वैद्य इलाज न करे कैसेको कि जिसका शीतल शरीरहो प्यास शूल युक्तहो श्वास ज्वर आफरा हिचकी सूजन इन करके युक्तहो दाह मूर्च्छा तथा कांचका निकलपडना शोक दुःख खांसी युक्तको ॥ ७ ॥ विरुद्ध भोजन करनेसे चिकनी तथा दूध तथा अन्न इनके दोषसे पतली तथा तेलकी तथा दुष्टजलके पीनेसे मदिरादिके पीनेसे भारी खट्टा तथा पीसा अन्नके खानेसे और कृमीनके विकारसे मनुष्यको अतिसार रोग पैदा होय है ॥८॥ अतिसारवाला मनुष्य ये काम न करे नहाना अग्नि और सूर्य इनके तेजका सहना तेलका लगाना तथा कसरत कुस्तीका करना भारी चिकना आदि भोजनका करना ॥ ९ ॥

इति हंसराजार्थबोधिनीभाषाटीकामें अतिसारनिदान पूर्ण हुआ ।

अथ संग्रहणीनिदानम् ।

वातसंग्रहणीलक्षणम् ।

वातोत्थो ग्रहणीगदः प्रकुरुते विड्बंधनं मूर्छनं कासं श्वासतरं खं च विरसं कंपं शरीरे भृशम् ॥ कुक्षौ तालुनि मस्तके हृदि गले शोषो गुदे वेदना कष्टं प्रच्यवते पुरीषमशकृत्सामं सशब्दं घनम् ॥ १ ॥

पित्तसंग्रहणीके लक्षण ।

चिह्नं पित्तग्रहण्यां भवति हृदये कंठदेशेतिदाहः शूलं मेढ्रे गुदाग्रे रुधिररतिरतः शुष्कफेनं पुरीषम् ॥ तुच्छं तुच्छं सकष्टं क्वचिदपि बहुशो दुष्टगंधिप्रयुक्तं पीतं वा कृष्णरूपं वससदृश-निभं रोमहर्षोतितृष्णा ॥ २ ॥

कफसंग्रहणीके लक्षण ।

कफसंग्रहणी कुरुते हृदये जडतामुदरे गुरुतामरुचिम् ॥ मनसि भ्रमतांगरुजं शिथिलं सितफेनयुतं च पुरीषमरम् ॥ ३ ॥

अर्थ—बादीसे प्रगट संग्रहणी दस्तको बंद करे है मूर्च्छा, खांसी, श्वास, मुखबेरस, शरीरमें कंप, कोख तालुआ माथा छाती गला इनका सूखना, कष्टसे थोडा २ विष्ठाका त्याग होना आम मिला हुआ शब्दके साथ और गाढा ॥ १ ॥ पित्तकी संग्रहणीके ये लक्षण हैं. हृदयमें और कण्ठमें दाह, लिंगमें शूल, गुदाके अग्रभागसे रुधिरका गिरना, सूखा तथा झागमिला तथा कष्टसे थोडा २ कमी ज्यादा बासको लिये पीला वा काला वा बसाके समान दस्त हो, रोमांच तथा प्यास हो ॥२॥ कफकी संग्रहणीमें हृदयका जकडना, पेटका भारी होना, मनमें अरुचि, भौंर, देहमें दुःख तथा शिथिलता, सपेदझागोंका मिला दस्त, ये लक्षण कफसंग्रहणीके होतेहैं ॥ ३ ॥

त्रिदोषसंग्रहणीके लक्षण ।

ग्रहण्यां त्रिदोषोद्भवायां सकष्टं पुरीषद्रवं शब्दयुक्तं वसाभम् ॥ भवेदल्पमल्पं क्वचिद्रक्तवर्णं गरिष्ठोदरं दुष्टदुर्गंधिमिश्रम् ॥४॥

संन्निपातकी संग्रहणी ।

विष्टंभं ग्रहणीगदः प्रकुरते दोषैस्त्रिभिः संभवो वैरस्यं शिरसि व्यथां गुरुतमां शूलं गुदापीडनम् ॥ आलस्यं हृदये गुरुत्वमरुचिं कासं तृषासंभ्रमं श्वासाध्मानविवर्णतोदरकृमीन् दाहं करांघ्र्योर्वमिम् ॥ ५ ॥ अतीसारे गते मंदं वह्नीच्छाद्यातिभोजनैः ॥ वर्त्तते यो भवेत्तस्य ग्रहणी दारुणा भृशम् ॥ ६ ॥

अर्थ—सन्निपातसे पैदाहुई जो संग्रहणी उसमें ये लक्षण होते हैं साथ कष्टके और शब्दके दस्तका होना, तथा वसाके समान और थोडा २ कभी लालरंगका, पेट भारी रहै, और बासमिला दस्त हो ॥ ४ ॥ पेटमें आफरा करती है तथा मुखेंम विरसता, शिरमें दर्द, और शूल तथा गुदा पीडा, आलकस, हृदयका, भारी होना, अरुचि, खांसी, प्यास, भौंर, श्वास, पेटका फूलना, शरीर बुरेरंगका होजाय, पेटमें कृमी, हाथ पावोंमें दाह, और वमन ॥५॥ जब अतिसार चलाजाय और जठराग्निकी इच्छा अति भोजनसे बंद करदे उसके घोरसंग्रहणी होतीहै ॥ ६ ॥

संग्रहण्यां पथ्यम् ।

व्यायामं मैथुनं रूक्षं भोजनं वह्नितापनम् ॥ तैलाभ्यंगं दिवास्वापं ग्रहणीरोगवांस्त्यजेत् ॥ ७ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृतेवैद्यकशास्त्रे ग्रहणीलक्षणं तृतीयम् ।

अर्थ—स्त्रीसंग, रूखा भोजन, आंचसे तापना, तेल लगाना, दिनमें सोना, ये संग्रहणी रोगवाला त्यागदे ॥७॥ इति माथुरदत्तरामकृत हंसराजार्थबोधिनी टीकामें संग्रहणीरोगलक्षण समाप्त हुआ ॥

अथ अर्शनिदान ।

गुदाग्रेषु जातानि मांसांकुराणि चतुस्त्रीणि संख्यानि संगानि यानि ॥ भवन्तीति दुर्नामसंज्ञानि नूनं मरुच्छ्लेष्मपित्तोद्भवानीहतानि ॥ १ ॥

वातकी बवासीरके लक्षण ।

शुष्कावातसमुद्भवाश्चिमिचिमास्तब्धागुदस्यांकुरा म्लानाः श्यामतराः खराश्च विकटा नीलाः सिताभाः क्वचित् ॥ खर्जूराकृतयोंघ्रिहस्तसहिताः शीर्षाननाः संयुता भिन्ना विस्फुटिताननना ज्वरकराः पायूत्थिता दुःखदाः ॥ २ ॥ वातार्शांसि कृशत्वमेव बहुलं कुर्वन्ति विड्बंधनं क्षुन्नाशं बलवीर्यकांतिहरणं शूलं गुदापीडनम् ॥ शोषं कंडुरुजं विकारमधिक शब्दं गुदातोनिशमाध्मानं जठरव्यथां गुरुतमां प्लीहं तनौ पांडुताम् ३

अर्थ—गुदाके अग्रभागमें हुये तीन वा चार मांसके अंकुर अंग करके सहित खोटा नाम (संज्ञा) जिनकी ऐसे वातपित्त कफसे पैदा होते हैं ॥ १ ॥ बादीसे पैदाहुए ये जो गुदाके मस्से उखडेहों सूखेहों चिमचिमीलिये हों टेढेहों कुम्हिलाये हुयेहों कालेहों खरदरे बाँके नीले सुपेदहों खजूर फलके सदृशहों हाथ पैर शिर मुँहके चिह्न संयुक्तहों अलग २ फटे मुखके ज्वर करनेवाले गुदामें प्रकट दुःखके देनेवाले हैं ॥ २ ॥ बादीकी बवासीर मनुष्यको कृश करे है, तथा दस्तको बंदकरे, भूखको बंदकरे, बलवीय तेजको दूरकरे है, शूल, पेटमें गुदामें दर्द, शरीरको सुखावे, खुजली चलै, दुःखकरे, अधिक विकार तथा गुदासे शब्दके साथ अधोवायु चलै, आफरा, पेटमें भारी, व्यथा, प्लीह, शरीर पीलाकरे है ॥ ३ ॥

पित्तकी बवासीरका लक्षण ।

गुदांकुरास्तु पित्तजा भवंति पक्वबिंबभाः स्रवंति रक्तमुल्वणं च मासिमासि मेदुराः ॥ अजाविशूकरीशुनीगवांस्तनोपमा हि ते खरा जलौकिकाननना महत्सुदोषसंभवाः ॥४॥ स्वल्पात्स्वल्पतरं पुरीषमरतिं विड्बंधनं कूजनं कष्टं वातसमन्वितं सरुधिरं शूलं गुदागर्जनम् ॥ प्लीहं वीर्यबलक्षयं शिथिलतां गुल्मांत्रवृद्धिं भ्रमं पित्तार्शांस्यरुचिं तृषां बहुतरां कुर्वंत्यनाहं श्रमम् ५॥

कफबवासीरके लक्षण ।

कंडाढ्याशुदसंभवाःखरतरामांसांकुराःपिच्छिलाः स्तब्धाःश्वेत निभा मृगीस्तनसमाःस्निग्धाश्च स्पर्शप्रियाः ॥ स्थूला मूल-दृढा भवंति मिलिताः कार्पासबीजोपमा वंध्याबद्धमुखा व्यथा-दिजनकाः पापोद्भवा दारुणाः ॥ ६ ॥

अर्थ—पित्त बवासीरके मस्से पके कंदूरी फलके समान हों, जिनसे खूनटपके, महीना महीनामें छिपाहुआ, बकरी, शूकरी, कुतिया, गौ, इनके थनोंके सदृश हों, खरदरेहों. जोंकके मुखके आकारहों ये बहुत दोषसे होते हैं ॥ ४ ॥ पित्तकी बवासीर दस्तको बहुत कम निकारे, मन कहीं न लगे, दस्तका बंद होना, गूंजना, कष्ट पूर्वक अधोवायु रुधिरके साथ निकसना, शूलके साथ गुदाका गर्जना, प्लीह वीर्य बलका नाश, शिथिलता, गोला, अंत्रवृद्धि, श्रम, अरुचि, प्यास-ज्यादा, अनाह, श्रम, ये लक्षण पित्तकी बवासीरके हैं ॥ ५ ॥ गुदाके मस्सोंमें खुजली चले खरदरेहों और गाढे टेढेहों, सपेदहों, मृगीके स्तनोंके समानहों, चिकने और सिराना प्रियलगे, स्थूल, दृढ जडवाले, कपास बीजके समानहों, रुधिर न निकले, बद्धमुखवाले, दुःखके देनेवाले, पापसे उठे दारुण ॥ ६ ॥

कफकी बवासीरके लक्षण ।

संकोचं गुदबंधन च जठरे कुर्वंत्यनाहं दृढं तुच्छं कष्टतरं पुरी-षमसकृन्निद्रां तनौ पांडुताम् ॥ आध्मानं गुरुतां भृशं शिथि-लतां हर्षक्षय क्षीणतां श्लेष्माशांसि शिरोरुजं बहुतरं जाड्य-म्बलौजः क्षयम् ॥ ७ ॥

सन्निपातबवासीरका लक्षण ।

अर्शांस्यसाध्यानि गदोद्भवानि त्रिदोषजातानि समस्तरोगान्॥ तन्वंति कार्श्यं रुधिरं स्रवंति दहंति वीर्य्यं ददतीह दुःखम्॥८॥

वातकी बवासीरका पथ्य ।

त्यजेदर्शसा संयुतो वातजेन नरः सर्वदा मैथुनं रूक्षभोज्यम्॥ कषायं श्रमं मद्यपानं विदाहि जलस्यावगाहं बहिस्स्वापमेतत् ॥

अर्थ—गुदाका बंधन, तथा संकोच, उदरमें आनाह, थोडा कष्टके साथ मलका त्याग, नींद तथा पीलिया, आफरा, भारीपना, शिथिलता, हर्षक्षय, क्षीणपना, मथवाय, बलतेजका क्षय, ये कफकी बवासीरके लक्षण हैं ॥ ७ ॥ त्रिदोषसे पैदा हुई बवासीर सब. असाध्य है, और सब

रोगोंको पैदा करेहै, कृशताको पैदाकरे. रुधिरको ज्यादा निकारे, वीर्यको दहन करे, दुःखको देय ॥ ८ ॥ वातकी बवासीरवाला मैथुन, रूखा भोजन. कसैली वस्तु, श्रम, मद्यपान, दाहकर्ता वस्तु, जलमें घुसिके स्नान, बाहरका सोना ये त्यागदेवे ॥ ९ ॥

पित्तकी बवासीरका पथ्य।

पित्तजेनार्शसा युक्तस्त्यजेत्क्षारोष्णभोजनम् ॥ व्यायामं सूर्यसंतापं कट्वम्ललवणानि च ॥ १० ॥

कफकी बवासीरका पथ्य।

कफार्शसायुक्तनरः प्रवातं जलावगाहं मधुराम्लशीतम्॥ त्यजेदतिस्निग्धगरिष्ठभोज्यं स्वापं दिने जागरण रजन्याम्॥११॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे अर्शसालक्षण चतुर्थम्।

अर्थ–पित्तकी बवासीरवाला मनुष्य इतनी वस्तु त्यागदेय, क्षार मिला अन्न तथा गरमभोजन दंडकसरत, सूर्य्यके घाममें डोलना, कडवी खट्टी चरपरी नोनकी बस्तु ॥ १० ॥ कफकी बवासीरवाला नर; हवा, जलमें घुसकर नहाना, मीठीवस्तु, शीरी, तथा खट्टी, अति चिकनी, भारीवस्तुका भोजन, दिनमें सोना, रातमें जागना, त्यागदे ॥ ११ ॥

इतिहंसराजार्थबोधिनी टीकामें बवासीर रोग लक्षण समाप्त हुआ ॥

भगंदरलक्षणम्।

गुदतः परितो द्वितयेंगुलके पिडिकार्तिकरो रतिकृज्ज्वरदः ॥ भगदारणको रुधिरेण युतो मुनिभिर्गदितस्तु भगंदररुक् ॥१॥

वातके भगंदरकालक्षण।

भगंदरो मरुद्भवो रुजां करोति दारुणो ह्यपानवातसंभवो गुदंप्रपीडयैन्निशम् ॥ करोति पैडिकाशतं विपाकदाहसंयुतं व्रणैश्च रौधिरी नदी पुरीषमूत्रबंधनम् ॥ २ ॥

पित्तजनितभगंदरके लक्षण।

भगंदरोतिदारुणः करोति पित्तजोऽहितं गुदे च पैडिकारुणा पाकदुःखभूमिका॥ अनेकधामुखाखरास्तुपूयशोणितावहाः कटौ व्यथामनेकधामपानकोपतो भवाम् ॥ ३ ॥

अर्थ–गुदाके चारों तरफ दूसरे अंगुलमें मरोरी दुःखकी देनेवाली अर्तिकी करनेवाली

ज्वरकी करनेवाली भग और गुदाके बीचमें भंगकीसी तरह भगदारणक रुधिर युक्त होताहै इसीसे मुनियोंने इसका नाम भगंदर कहा है ॥ १ ॥ बादीसे और अपान वायुसे उत्पन्न जो घोर भगंदर वो दारुण पीडा करै है, और गुदामें अत्यन्त दुःखहो, और सैकडों मरोरी गुदाके ऊपर करैं, और वे पकजावें तथा दाहहो और घावहोजाय, रुधिर वहै, दस्तपेशाबका बन्द होना, ये लक्षण होते हैं ॥ २ ॥ पित्तसे पैदा जो अतिदारुण भगंदर उसके ये लक्षणहैं दुःखहो, गुदाके ऊपर लाल २ मरोरीहों, और वे पकिजावें, खेदको पैदाकरैं अनेक मुखहों, करडी हों, राधरुधिर जिनसे स्रवे कमरमें दर्द हो, यह भी अपान वायुके कोपसे पैदाहोताहै ॥ ३ ॥

गुदांते पिडिकां कुर्याद्भगंदरगदोनिशम् ॥ कंडूशोषं व्यथां पाके रक्तपूयवहाः कृमीन् ॥ ४ ॥

सन्निपातजनितभगंदरलक्षणम् ।

आहुस्तं च भगंदरं कफमरुत्पित्तोद्भवं पण्डिता विस्फोटैर्दहते गुदं कृमिकुलैरत्यामिषं योनिशम् ॥ पक्कैश्छिद्रसमन्वितैः सरुधिरं पूयं स्रवत्यामिषं शोथं कंडुरुजादिकं वितनुतेऽपानेन विड्बंधनम् ५

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे भगंदरलक्षणम् ।

अर्थ–भगंदरका रोग–गुदामें मरोडी पैदाकरै, और उनमें खुजलीचलै, तथा शोषहो, पकनेमें दर्दहो, रुधिर तथा राध वहै, और कृमि पडजाय ॥ ४ ॥ जिसभगंदरमें ये लक्षणहों उसको पंडित सन्निपातका कहतेहैं जिसमें बडे २ फोडे करके गुदामें दुःखहो और कृमीनके समूहसे निरंतर व्याकुलहो, और पकजाय तथा गुदाके वारपार छेद होजाय उनछेदोंमें राधरुधिर मल मांस निकसे सूजन खुजलीहो अपान पवनसे गुदाद्वारा मलका नहीं उतरना ॥ ५ ॥

इति श्रीहंसराजार्थ बोधिनी टीकामें भगंदररोग लक्षण समाप्तहुआ ॥

अजीर्णरोगके लक्षण ।

भुक्तान्नंपाचितं नैव वह्निनोदरजेन तत् ॥ तस्योपरि पुनर्भुक्तमजीर्णं तद्विदुर्बुधाः ॥ १ ॥ भुक्तान्नं न विपाकमेति जठरेविण्मूत्रयोस्तंभनाद्रात्रौ जागरणाद् दिवातिशयनादत्यंबुपानान्नृणाम् ॥ दुर्भक्ष्याद्विषमाशनादतिभयात्क्रोधाद्विरुद्धाशनात् मंदाग्नौ बहुभोजनाद्गुरुतरात्प्रद्वेषतश्चितया ॥ २ ॥ वाताधिके विषमतां समुपैति वह्निः पित्ताधिके भवति वह्निरतीवतीक्ष्णम् ॥

श्लेष्माधिके जठरजो हुतभुक् समंदो वाताधिकेषु समकेषु समोग्निरंत्ये ॥ ३ ॥

अर्थ–खाया हुआ तो अन्न जठराग्नि करके पचा नहीं और तिसके ऊपर फिर, खावे उसको पंडित अजीर्ण कहते हैं ॥ १ ॥ मलमूत्रके रोकनेसे, रातमें जागना दिनमें सोना बहुत पानी पीना, गरिष्ठ भोजन करना, विषम भोजनसे, अतिभयसे, क्रोधके करनेसे, विरुद्ध भोजनसे, मंद-अग्निसे, ज्यादा भोजनसे, द्वेषसे चिन्ताके करनेसे, खायाहुआ अन्न पेटमें पचता नहीं है ॥ २ ॥ वाताधिकसे विषमाग्नि पित्ताधिकसे तीक्ष्णाग्नि कफाधिकसे मन्दाग्नि और वात पित्तकफके समान होनेसे समाग्नि होती है ये चार प्रकारकी अग्नि मनुष्योंके होतीहै ॥ ३ ॥

विष्टब्धं विषमोऽनलः प्रकुरुते रोगांश्च वातोद्भवांस्तीक्ष्णाग्नि-र्विदधाति पित्तजनितान् रोगान् विदग्धाशनम् ॥ आमश्लेष्म-समुद्भवान् वितनुते रोगांश्च मन्दानलो नैरोग्यं हुतभुक् स-मोहिसतत धत्ते रुचिं मानसीम् ॥ ४ ॥

वाताजीर्णके लक्षण ।

वाताजीर्णे चिह्नमेतत्प्रसिद्धं जृम्भाशूलं क्षुत्पिपासांगमर्दः॥ सा-म्लोद्गारो धूमयुक्तोतिकष्टः श्वासः शोषो मूत्रघातोथ हिक्का ॥५॥

पित्ताजीर्णके लक्षण ।

मूर्च्छादाहः संभ्रमः शूलमुग्रं तृष्णोद्गारो धूमयुक्तोतिसाम्लः ॥ मोहःस्वेदश्छर्दनं गन्धिसांद्रं पित्ताजीर्णे लक्षणं सद्भिरुक्तम् ॥६॥

अर्थ–विषमाग्नि आफरा और वातके रोगोंको पदाकरैहै तीक्ष्णाग्नि पित्तके रोगोंको और अन्नको दग्ध करके मन्दाग्नि कफके रोगोंको और आमको पैदा करैहै, समाग्नि नैरोग्य और रुचिको पैदा करैहै इसीसे यह समाग्नि अग्नि श्रेष्ठ है ॥ ४ ॥ वातके अजीर्णमें ये लक्षण होते हैं, जँभाई, शूल, प्यास, धूमयुक्तखट्टीडकार, भूख अंगोंका टूटना, अतिकष्ट, श्वास, शोष, मूत्रघात, हिचकी ॥ ५ ॥ एवं मूर्च्छा, दाह, भ्रम, घोर शूल, प्यास, धूमयुक्त खट्टी डकार, बेहोसी, पसीना, वासके साथ और गाढीरद ये पित्ताजीर्णके लक्षण हैं ॥ ६ ॥

कफाजीर्णके लक्षण ।

कफस्याजीर्णेऽङ्गे भवति गुरुता छर्दिरधिका अतीसारः शोथो-

रुचिरपि तृषाक्षुद्विकलता॥ वमिर्लालावक्रादरतिरुदरे भारमधिक शिरः कंठे नाभौ गुदपवनसंचारमधिकम् ॥ ७ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे अजीर्णनिदानं समाप्तम्।

अर्थ–शरीर भारी, बहुत रद्दका होना, अतीसार, सूजन, अरुचि, प्यास, क्षुधा, बेकली वमन, मुखसे लारका बहना, मनका न लगना, पेटभारी, शिर कंठ नाभि इनमें अपान वायुका चलना॥७॥

इति हंसराजार्थबोधिनी टीकामें अजीर्णनिदान समाप्तहुआ।

अलसविलम्बिकानिदान।

अजीर्णतो विषूचिका भवेद्विलबिकाथवा विषूचिकोर्ध्वगामिनीक्षणेन नाशयेन्नरम् ॥ अधोगतिर्विलंबिका विलंबकारिणीति सा अपानवातप्रेरिता मनोजवृत्तिहारिणी ॥ १ ॥ भुक्तान्नं प्रहरात्पूर्वं द्रवं कृत्वोर्ध्वमानयेत् ॥ या सा विषूचिका प्रोक्ताऽधो नयेत्सा विलंबिका ॥ २ ॥

विषूचिकाके लक्षण।

अतीसारमूर्च्छापिपासांगपीडा भ्रमोल्लासहिक्काविमुक्तांगसन्धिः॥ निमग्नेक्षिणीकृष्णदन्तोष्ठजिह्वाविसंज्ञाविषूच्यांभवन्तीहशूलम् ३

अर्थ–अजीर्णसे विषूचिका वा विलंबिका, पैदा होती है जिसमें वमन हो उसे विषूचिका कहते हैं, और जिसमें दस्तहों उसे विलंबिका कहते हैं विषूचिका क्षणमें मनुष्यको मारडालै और विलंबिका कुछदेरमें मारै है अपान वातकरके प्रेरित मन तेज इनकी वृत्तिको दूर करनेवाली है ॥ १ ॥ ये माधव कहै, पहले श्लोकमें जो कहि आये उसेही फेर कहते हैं खाया हुआ अन्नको पहरभर पहले पतलाकर जो ऊपरका रस्ता अर्थात् रद्दलावै उसे विषूचिका कहते हैं और जो नीचे मार्ग अर्थात् दस्तलावै उसे विलंबिका कहते हैं ॥ २ ॥ दस्त, मूर्च्छा, प्यास, अंगोंमें पीडा, भ्रम, हल्लास, हिचकी, अंगकी संधि २ ढीली होजाय, नेत्र बैठजायँ, दांत जीभ ओठ काले हों, बेहोशी, शूल ये लक्षण विषूचिकाके हैं ॥ ३ ॥

विषूच्यामशुद्धिर्वमिर्मूत्रवातो भवेद्वेपथुःकंठवक्रोष्ठशोषः॥विसज्ञारतिर्देहदाहोऽल्पशब्दस्त्वचाकोचनं क्षुद्विनाशोल्पचेष्टा ॥४॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे अजीर्णविषूचिकालक्षणम्।

अर्थ–अपवित्रता, वमन, मूत्रवात, कंप; कंठ, मुख, ओठ इनका सूखना; वेहोसी, मनका डामाडोल; शरीरमें दाह; मन्द २ बोलना, त्वचाका सुकडना; भूखका नाश, चेष्टा रहित येभी विषूचिकाके लक्षण होते हैं ॥ ४ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिनी टीकामें विषूचिका रोग तथा विलंबिकारोग लक्षण समाप्त हुआ।

अथ क्रिमिनिदानम्।

जायन्ते क्रिमयो नरस्य जठरे बाह्ये च यूकादयो बाह्याभ्यन्तरभेदतो बहुविधाः सूक्ष्मातिसूक्ष्मास्तथा ॥ दीर्घादीर्घतरा भवन्ति मिलिता भिन्नाःपराजन्तवो नानावर्णसमन्विता बहुपदः पादैर्विहीनाः पराः ॥ १ ॥ मूर्छार्त्तिकंडुं पिटिकाश्च कोटरान् कुर्वन्त्यतीसारमनाहसंभ्रमम् ॥ दाहं विवर्णं वमथुं विगन्धितां कार्श्यं शरीरे कृमयो मुहुर्मुहुः ॥ २ ॥ उदरगतकृमीणां चिह्नमेतन्नराणां भवति हृदयदाहः संभ्रमोऽङ्गे विकारः ॥ अरतिरुधिरकासं छर्द्यतीसारशूलं सकलविकलकायः ष्ठीवनं निर्बलत्वम् ॥ ३ ॥

अर्थ–कृमिरोग दो तरहकाहै एक बाहरी, दूसरा भीतरी, पेटमें; गिडोहे आदि हो सो भीतरी और बाहर जूयें लीख आदि होतेहैं ऐसे बाहर और भीतरके भेदसे तथा छोटेसे छोटे और बडेसे बडेके भेद करके बहुत भेदहैं नाना वर्णके बहुत पाद तथा पादरहित होते हैं ॥ १ ॥ मूर्च्छा, अर्ति, खुजली, पिटिका इनका खुजाना अतीसार, अनाह, भौंर, दाह, शरीरका वर्ण औरही तरहका, वमन, दुर्गंध, शरीर कृश, कृमि ये लक्षण कृमिरोगमें होते हैं ॥ २ ॥ उदरमें कृमि पडगये हों उसके ये चिह्नहैं हृदयमें दाह, भौंर, शरीरमें विकार, मन न लगे, दस्तमें रुधिरका गिरना, खांसी, वमन, दस्त, शूल सब शरीरमें बेकली, बारबार थूकना, निर्बलता॥ ३॥

कृमिरोगकी उत्पत्ति।

भुक्तस्योपरिभोजनेन मधुराम्लाभ्यां मृदाभक्षणाद्दध्ना माषपयोभिरामिषयुतैः श्लेष्मोद्भवा जन्तवः ॥ सन्तापक्षतशोफशाकमधुभिर्मद्येन रक्तोद्भवा अन्यैर्वा कृमयो भवन्ति जठरे नृणां सदा दुःखदाः ॥ ४ ॥

कृमिरोगे पथ्यम् ।

कृमिमान् संत्यजेन्मिष्टं पिष्टं शाकं पयो गुडम् ॥ अव्यायामं मृदुश्चाम्लं माषं मांसद्रवं दधि ॥ ९ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे कृमिलक्षणं संपूर्णम् ।

अर्थ–भोजनके ऊपर भोजन करनेसे, मीठा खट्टा मट्ठी, दही, दूध, उर्द, मांस इनसे कफकी कृमि पैदा होतीहै सन्ताप, घाव, सूजन, शागके खानेसे, सहत, मद्य इनसे रुधिरकी कृमि पैदा होतीहै और भी प्रकारसे कृमी मनुष्यके पेटमें दुःखकी देनेवाली होतीहै ॥ ४ ॥ कृमि रोगवाला मीठा, पीसा अन्न, शाक, दही, दूध, गुड, दंडकसरतका न करना, माटीखाना, खट्टीवस्तु, उर्द, मांस, पतलीवस्तु, इनको त्यागदे ॥ ९ ॥

इतिहंसराजार्थबोधिनी टीकामें कृमिरोगलक्षणसमाप्तहुआ ।

पाण्डुरोगनिदानम् ।

दोषाः संकुपितास्त्रयोपि दधते पाण्डुं शरीरे रुजं नृणां तीक्ष्णतमं द्रवश्च लवणं रूक्षामिषं सेविनाम् ॥ मृत्पूगीफलभोजिनां हि सततं रात्रौ दिवाशायिनां स्त्रीष्वत्यंतविलासिनां प्रतिदिनं शाकाम्लसंभक्षिणाम् ॥ १ ॥

वातके पीलियाके लक्षण ।

पाण्डुर्वातसमुद्भवो नयनयो रूक्षं त्वचः स्फोटनं तोदानाहकृमीन् करोति कृशतां गुह्यस्थले शोफताम् ॥ हृत्कंप श्वसनं तनौ मलिनतां पीतद्रुतिं क्षीणतां मन्दाग्निं बलवीर्यकान्तिहरणं छर्दिं तृषां दारुणाम् ॥ २ ॥

पित्तके पीलियाके लक्षण ।

अक्ष्णोर्मूत्रपुरीषयोस्त्वचि नखेष्वन्तेषु पीतप्रभां श्वासं कासमन्वितं कृशतनुं मूर्छामतीसारकम् ॥ हृल्लासं हृदि संभ्रमं विकलतां दाहं तृषासंयुतं पाण्डुः पित्तसमुद्भवः प्रकुरुते शोषं मुखे शोफताम् ॥ ३ ॥

अर्थ–जो मनुष्य तीखी पतली ज्यादा नोन रूखामांस मट्टी सुपारी इनको खावे तथा रातदिन सोवै बहुत मैथुनके करनेसे नित्य शाग और खट्टाखानेसे तीनों दोष कुपितहो पीलियाके

रोगको पैदा करते हैं ॥ १ ॥ बातसे पैदाहुये पीलियाके ये लक्षणहैं नेत्रोंमें रूखापन, त्वचाका फटना, सुईकी तरह चुभनेका दर्द, आनाह, तथा शरीर कृश भ्रम, गुह्य इन्द्रीपर सूजन, हृदयमें कंप, श्वास, शरीरमलिन, तथा शरीर पीला, मन्दाग्नि, बलवीर्य कांतिका नाश, वमन, प्यास, मुखका सूखना ॥ २ ॥ नेत्र, पेसाब, दस्त, शरीरकी त्वचा, नख, इनका पीला होना श्वास, खांसी, शरीर कृश, मूर्च्छा, दस्तोंका होना, सूखी उलटी, हृदयमें भ्रम, बेकली, दाह, प्यास, मुखका सूखना तथा सूजन ये पित्तसे पैदाहुये पांडुरोगके लक्षण हैं ॥ ३ ॥

कफके पीलियाका लक्षण ।

शुक्लाननं शुक्लपुरीषमूत्रं तंद्रालसं स्त्रीष्वरुचिं कृशत्वम्॥लालावमित्वं श्वयथुं गुरुत्वं पांडूववामयश्श्लेष्मभवः करोति ॥ ४ ॥

सन्निपातके पाण्डुरोगका लक्षण ।

त्रिदोषोद्भवे पाण्डुरोगे कृशत्वं भवेच्छ्वासकासं तृषा वेपथुत्वम्॥ शिरोर्तिः प्रसेकोऽरुचिः संभ्रमत्वं बलौजोविनाशः क्लमो छर्दिशूलम् ॥ ५ ॥ त्रिदोषान्वितःपाण्डुरोगी भिषग्भिरसाध्यो निरुक्तो हताक्षो विचेष्टः ॥ ज्वरःश्वासहृल्लासकासातिसारस्तृषासंभ्रमोंगेषु कंपः प्रलापी ॥ ६ ॥

अर्थ–सपेदमुख, सपेद पेसाब, और मल, तन्द्रा, आलकस, स्त्रीसंगकी इच्छाका नाश कृशता लारका पडना, वमन, शरीरका भारीहोना, ये लक्षण कफसे पैदा हुआ पांडुरोग करता है ॥ ४ ॥ सन्निपातसे उत्पन्न हुआ पांडुरोग उसमें ये लक्षण होते हैं शरीर कृश, श्वास खांसी, प्यास, कंप, मथवाय, पसीनेका आना, अरुचि, भ्रम, बल, कांतिका नाश, ग्लानि, वमन, शूल ॥ ५ ॥ त्रिदोष, युक्त पांडुरोगी ऐसा बैद्योंने असाध्य कहा है नेत्रसे रहित, चेष्टाकरके हीन, ज्वर, श्वास, सूखी उलटी खांसी, अतीसार, प्यास, भौर, अंगोंमें कंप, वाहियात बकना ॥

यः स्रोतांसि रुणद्धि सो मुनिवरैस्त्याज्यो भृशं दूरतस्तेजोवीर्यबलौजसां प्रतिदिनं हानिं करोति ध्रुवम् ॥ पाण्डुत्वं त्वचि नेत्रयोः कररुहे ह्यंत्रेषु विण्मूत्रयोर्धत्ते वह्निविनाशकोऽतिबलवान्पाण्डुर्मनुष्यादनः ॥ ७ ॥

पाण्डुरोगे पथ्यम् ।

पाण्डुरोगीत्यज्येदम्लं दिवास्वापश्च मैथुनम् ॥ शाकं मांसाशनं रूक्षं मृद्भक्षमतितीक्ष्णकम् ॥ ८ ॥ ॥ इति श्रीभिषकचक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे पाण्डुरोगलक्षणम् ।

अर्थ–ऐसा पांडुरोगी वैद्यों करके त्याज्य है जो कानोंसे बहरा करदे, तेज वीर्यबल कांति इनकी प्रतिदिन हानिकरे, त्वचा नेत्र नख आंत मलमूत्र ये पीलेहों, जठराग्निसे रहित ऐसा पांडुरोग वली मनुष्यका मारनेवाला जानना ॥ ७ ॥ पीलिया रोगवाला मनुष्य खटाईका खाना, दिनमें सोना, तथा स्त्रीसंग करना शाक, मांस, रूखी वस्तु, मट्टी खाना, अतितीखी मिरच आदि वस्तुका खाना त्यागकरे ॥ ८ ॥

इति हंसराजार्थबोधिनी टीकामें पांडुरोगका निदान समाप्त हुआ ।

हलीमक कामला कुंभकामला पानकीरोग निदान ।

हृत्पद्मे मलमूत्रयोर्नयनयोर्धत्तेतिपीतद्युतिं दौर्बल्यं बलवीर्ययोरनुदिनं नाशंभ्रमं कामलाम्॥अस्थिस्फोटवती करोति विकल मांसाशनाद्रक्तपा संतापं करयोर्मुखे वृषणयोःशोफं च पादद्वयोः १

हलीमकरोगनिदानम् ।

करोति कुम्भकामला नखेषु नेत्रयोर्मुखे पुरीषमूत्रयोर्भृशं सकृष्णतां तृषार्त्तिकृत् ॥ बलाग्निवीर्यतेजसां विनाशिनी प्रकंपिनी ज्वरांगदाहवर्द्धिनी विमोहशूलदायिनी ॥२॥ षट्चक्रेषु नखेषु मूत्रयुगुले विण्मूत्रयोर्नीलतां संधत्ते च हलीमकं कृशतनुःस्त्रीषु प्रहर्षक्षयम्॥ संतापं कुरुते रुजं वितनुते पित्तानिलोत्थं गदंतन्द्रा मंगविमर्दनं शिथिलतां श्वासं भ्रमं वेपथुम् ॥३॥ नखेष्वंगदेशेषु मूत्रे पुरीषे द्वयोर्नेत्रयोः पाण्डुता तृट्प्रसेकः ॥ बहिः शीतताभ्यन्तरेत्यंतदाहो वदेत्पानकीं लक्षणैर्लक्षणज्ञः ॥ ४ ॥

इति श्रीभिषकचक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे कामलाकुम्भकामलाहलीमकपानकीलक्षणम् ।

अर्थ–जो मनुष्य मांस खावै तथा रुधिर पीयाकरै उसके कामलारोग प्रगट होय और ये लक्षणको करै है, छाती मल मूत्र नेत्र ये पीलेहों, दुर्बलता, बलवीर्यका नाश, भ्रम, हडफूटन, बेकली, संताप, हाथ मुख अंडकोश इनमें सूजन, तथा पैरोंमें सूजनहो ॥ १ ॥ कुम्भकामला देहमें ये लक्षण करै हैं; नख, नेत्र, मुख पीला तथा दस्त पेसाब काला, प्यास, पीडा और बल अग्नि वीर्य तेज नाशकरै, कम्प, ज्वर, देहमें दाह, मोह, शूल करै है ॥ २ ॥ छःचक्रोंमें नखोंमें नेत्रोंमें मलमूत्रमें जो नीलापना करदे और शरीर पतला स्त्रीसंगकी इच्छाको दूर करदे, बेकली, तंद्रा, अंगोंका टूटना, शिथिलता, श्वास, भ्रम, पीडा इन लक्षणोंको वातपित्तसे पैदा हुआ

हलीमक रोग करता है ॥ ३ ॥ नखोंमें शरीरमें मल मूत्रमें नेत्रोंमें पीलाई हो प्यास, पसीना, बाहरीजाडा, भीतरी दाह, इन लक्षणोंसे लक्षणका जाननेवाला पानकी रोग जाने ॥ ४ ॥

इतिहंसराजार्थबोधिन्यां कामलाकुम्भकामलाहलीमकपानकीरोगनिदानम् ।

अथ रक्तपित्तनिदानम् ।

रक्तपित्तकी उत्पत्तिलक्षण ।

व्यायामैरविवह्नितापसहनैस्तीक्ष्णोष्णकट्वामिषैरत्यंतं सुरतैर्दिवातिशयनैः स्निग्धान्नसंभोजनैः ॥ एतैःसंकुपितं तु पित्तमधिकंनिर्गत्यबाह्यांतराच्छार्दँलोहितिमां च नेत्रयुगुले रक्ते तनौ मण्डलम् ॥ १ ॥ निःश्वासे लोहगंधिः प्रभवति शिरसो रक्तधारा च कोष्णा सन्तापः कोष्ठपीडा नयनविकलताऽरोचकः ष्ठीवनत्वम् ॥ तृष्णा मूर्च्छाप्रसेको मनसि शिथिलता संभ्रमो देहदाहः कासः श्वासोल्पचेष्टा कृशतरहुतभुक् रक्तपित्तस्य कोपात् ॥ २ ॥ अधोर्ध्वं भवेद्रक्तपित्तप्रवृत्तिः श्रुतिघ्राणवक्राक्षिभिश्चोर्ध्वदेशे ॥ गुदायोनिमेढ्रैरधो याति रक्तं समस्तैश्च रोमैः शरीरस्य बाह्ये ॥ ३ ॥

अर्थ—दंड कसरतके करनेसे, घाममें डोलनेसे, अग्निके तापनेसे, तीखी गरमी कडुई मांस इनके खानेसे, अति स्त्रीसंगसे, दिनमें सोनेसे, स्निग्ध अन्नके भोजनसे, कुपित हुआ जो पित्त सो रुधिरको बिगाडकर रुधिरकी उलटी करावे तथा नेत्रोंसे रुधिर गिरै और शरीरमें खून बिगडनेसे चकत्ता होजाय ॥ १ ॥ रक्त पित्तके कोपसे ये लक्षण हों श्वास लेनेमें लोहकीसी गंधिहो, शिरसे रुधिरकी गरमधारा पडै, प्यास व्याकुलताहो उदरमें पीडा नेत्रोंमें बेकली, अरुचि, रुधिरका थूकना, मूर्च्छा, तथा पसीनेका आना, मनमें शिथिलता, भ्रम, देहमें दाह, खांसी, श्वास, हीनचेष्टा, अग्निमंद ॥ २ ॥ रक्त पित्तकी प्रवृत्ति ऊपर तथा नीचेके रास्तासे निकसै सो लिखते हैं, जो कानोंसे नाकसे मुखसे नेत्रसे रुधिर गिरै उसे ऊर्ध्वप्रवृत्ति जाने और गुदाके द्वारा तथा योनिद्वारा लिंगसे रुधिर गिरै उसे अधःप्रवृत्ति जाने और सब रोमोंसे शरीरके बाहर निकसता है ॥ ३ ॥

वात पित्त कफ और सन्निपातजन्यरक्तपित्तका लक्षण ।

रूक्षारुणं श्यामतरं च रक्तं वातात्मकं तं प्रवदन्ति वैद्याः ॥ पित्तोत्थितं रक्ततमं कषायं स्निग्धञ्च सांद्रङ्कफजं सफेनम्॥४॥

ऊर्ध्वगं कफजं रक्तमधोगं मारुतोद्भवम् ॥ रोमकूपैर्बहिर्यातं तं विद्यात् पित्तसंभवम् ॥ ५ ॥ अधोर्ध्वगंवातकफप्रकोपात् द्विदोषजं तं जपदानसाध्यम् ॥ अधोर्ध्वरोमैर्जनितं त्रिदोषकोपादसाध्यं मुनिभिः प्रदिष्टम् ॥ ६ ॥

अर्थ—रूखा लाल काला जो रुधिर निकलै उसे वातका रक्तपित्त वैद्य कहते हैं और लाल कसेला पित्तका तथा चिकना, गाढा, झागयुक्त, कफका कहते हैं ॥ ४ ॥ जो ऊपरी मार्गसे रुधिर गिरै उसे कफका जानो, और नीचे मार्गोंसे गिरै उसे वातका जानो और जो रोमोंसे गिरै उसे पित्तका जानो ॥ ५ ॥ वातकफके कोपसे ऊपर तथा नीचे मार्गोंसे रुधिर गिरता है, उसे द्विदोषका जानो, वह जप दानके करनेसे अच्छा हो और नीचे तथा ऊपरका तथा रोममार्गोंसे जो रुधिर गिरै उसे सन्निपातका जानै वह मुनियोंने असाध्य कहाहै ॥ ६ ॥

साध्यरक्तपित्त ।

रक्तपित्तं सुखं साध्यं निरुपद्रवमेव तत् ॥ सोपद्रवं तु दुःसाध्यं जपहोमौषधादिभिः ॥ ७ ॥ उद्गारे लोहितं यस्य क्षुते निष्ठीवने तथा ॥ भवेन्मूत्रे पुरीषे वा रक्तपित्ती म्रियेन्नरः ॥ ८ ॥

रक्तपित्तरोगे पथ्यम् ।

व्यायाम घर्मसंतापं तीक्ष्णोष्णकटुकानि च ॥ दिवास्वापमतिस्निग्धं रक्तपित्ती नरस्त्यजेत् ॥ ९ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे रक्तपित्तलक्षणम् ।

अर्थ—जो उपद्रवरहित रक्तपित्तहो वह सुखसाध्य है और जो उपद्रवके साथ हो वह असाध्य है सो जपके करानेसे होम और औषधि करनेसे भी नहीं अच्छा हो ॥ ७ ॥ जिस मनुष्यके डकार लेनेमें लोहेकी बास मारे तथा छीकनेमें थूकनेमें मूत्रमें मलमें रुधिर गिरे, वो रक्तपित्ती मनुष्य मरे ॥ ८ ॥ दंड कसरत करना, धूपमें डोलना, खेद, तीखी गरम कटु वस्तुका भोजन, दिनमें सोना, अत्यंत चिकनी वस्तु रक्तपित्तवाला त्याग करदेवे ॥ ९ ॥

इति हंसराजार्थबोधिनी टीकामें रक्तपित्तरोगनिदान समाप्त हुआ ।

यक्ष्मण उत्पत्तिः ।

यो भारं वहते नरो गुरुतरं संपीड्यते यक्ष्मणा शस्त्रास्त्रैः परिघातितो दृढधनुः प्राकर्षतः पीडितः ॥ उच्चैर्वापतितो महाश्मत-

रुभिः संदीपितो मर्दितो दंडैर्मुष्टिकशादिभिः परिहतः संधर्षितः शापितः ॥ १ ॥

अथ निदानम्।

देहस्थो राजयक्ष्मा हृदि कफनिचयं वर्द्धते शोषतेंगे नाडीमार्गं रुणद्धि ज्वरयति मनुजं क्षीयते धातुसंघान्॥वीर्यौजःकांतितेजोऽनलबलपिशितं हंति पांडुं विधत्ते ऊर्ध्वं श्वासं तनोति प्रसरति हृदये क्षीणशब्दं करोति ॥२॥ यक्ष्मारुक् कुरुतेऽरुचिं कृशतनुं सूक्ष्मं ज्वरं गौरवं देहं जर्ज्जरितं क्षतं च गलके कासाधिक शोषणम् ॥ संतापं हृदि वेपथुं सरुधिरं निष्ठीवनं पूयभं मोहं छर्द्यरतिभ्रमं शिथिलतां शूल क्वचिद्दारुणम् ॥ ३ ॥

अर्थ—जो मनुष्य भारी बोझको उठावै, तथा शस्त्र अस्त्रसे घायल हो, दृढधनुषके खींचनेसे, कोई कारण कर पीडित होनेसे, उच्चपर्वत वा वृक्षके गिरनेसे, जलनेसे, और पीडनेसे तथा दंड कोरड़ा घूंसे आदिके पिटनेसे ड़रपनेसे महात्माओंके शापसे क्षयीरोग पैदा होता है ॥ १ ॥ देहमें क्षयीरोग स्थित ये लक्षणोंको करे है हृदयमें कफको बढावै, शरीरको सुखादेवै, नाडीके मार्गोंको रोकदे ज्वरवान् करदे, धातुके समूहको सुखायदे, वीर्य बल तेज ताकत कांति जठराग्निके बलको तथा मांसको क्षीणकरदे, पीलियाको करे, ऊर्ध्व श्वासको करै, तथा क्षीण शब्दको करै है ॥ २ ॥ अरुचि तथा कृशदेह, मंदज्वर, शरीर भारी, जर्जर शरीर, गलेमें घाव, खांसी, शोष, खेद, हृदयमें कंप, रुधिर राधमिलाय थूकना, बेहोशी, रद्दकरना, मनका डामाडोल होना, भ्रम, शिथिलता, कभी महाशूल होजाय अथवा शूल जोरसे चलना ये लक्षण क्षयीरोग करे है ॥३॥

विवर्णं शरीरं शकृद्रक्तमूत्रं करोत्यंगपीडां महाराजयक्ष्मा॥तनौ शून्यतां बुद्धिनाशं प्रलापं गले घर्घरत्वं युवत्या प्रहर्षम् ॥४॥

वातकी क्षईका लक्षण।

मन्दाग्निर्बलवीर्ययोरनुदिनं हानिः कृशत्वं वपुः कासः शुष्कतरो रुतं कृशतरं श्वासोऽरुचिः शोषता॥रूक्षो मंदतमो ज्वरः क्लम क्षुता निष्ठीवनं पूयनं छर्दिर्वा यदि वेपथुर्भवति तत् वातक्षये लक्षणम् ॥ ५ ॥

पित्तकी क्षयीके लक्षण।

पीडाकुक्षिशिरोगलेषु हृदये रक्तं च निष्ठीवनं शीतेम्लेऽधिकता

रुचिर्ज्वलनता कंठे विगन्धिर्मुखे॥कासश्वाससमन्विताः कृशतनुर्भिन्नस्वरोल्पज्वरस्तत्पित्तक्षयलक्षणं निगदितं वैद्यैः सुषेणादिभिः ॥ ६ ॥

अर्थ—शरीरका वर्ण औरही प्रकारका होजाय, बारबार लाल पेशाब उतरै, शरीरमें पीडा हो, सुन्न शरीर पडजाय, तथा बुद्धिका नाश, बर्रीना गलेमें घरघर शब्दहो स्त्रीके साथ रमण की इच्छाहो, ये लक्षण महाराजयक्ष्मा करता है ॥ ४ ॥ बातकी क्षयीके ये लक्षण हैं, मंदाग्नि, बल वीर्य्यकी हानि, शरीर कृश, श्वास, मंदशब्द और खांसी, अरुचि, शोष, शरीर रूखा मंदज्वर, ग्लानि, राधका थूकना तथा उलटी करना, हृदयमें कंप ॥ ५ ॥ कांख मस्तक गला हृदय इनमें दर्दहो, रुधिर मिला थूकना, शीतकी तथा खटाईकी इच्छाहो अरुचि तथा कंठमें जलन मुखमें बास आवे, खांसी श्वासहो, कृशदेहहो, बुरी आवाज हो मंदज्वर, ये लक्षण सुषेणादि वैद्योंने पित्तकी क्षयीके कहे हैं ॥ ६ ॥

कफकी क्षयीके लक्षण ।

शोफः कासरुजाग्निमंदजड़ता श्वासोऽरुचिर्वेपथुः शैथिल्यं स्वरभंगतांगकृशता वक्त्रंविगन्धान्वितम् ॥ तंद्रा कुक्षिरुजः कफं बहुतरं निष्ठीवनं पूयनं स्याच्छ्लेष्मक्षयलक्षणं च हृदये कंठं दृढं श्लेष्मणः ॥ ७ ॥

असाध्यक्षयीके लक्षण ।

सहस्रदिनपर्यंतं न जीवेदिति मानवः ॥ ग्रहेण यक्ष्मणाग्रस्तोऽसाध्येनातिबलीयसा ॥ ८ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे वैद्यशास्त्रे हंसराजकृते यक्ष्मणो लक्षणं समाप्तम् ।

अर्थ—सूजन, खांसी, अग्निमंद, जडता, श्वास, अरुचि, कंप, शिथिलता, गलेका बैठजाना, शरीर पतला, मुखमें बासका आना तंद्रा, कांखमें दर्द, कफका तथा पीबका थूकना, कंठका कफसे रुकना, ये कफकी क्षयीके लक्षण हैं ॥ ७ ॥ जिस मनुष्यको क्षयीरूप बलवान असाध्यग्रहने ग्रसलिया हो वह मनुष्य हजार दिनतक बडी कठिनतासे जीसके ॥ ८ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां राजयक्ष्मरोगनिदानं समाप्तम् ।

अथ कासरोगलक्षणम् ।

वक्त्राक्षिनासासुरजोभिपाताद्धूमोपरुद्धद्गुरुभारवाहात् ॥ रूक्षादनाद्दंडकशादिघातात्कासोतिघोषादुपजायते वै ॥ १ ॥

खांसीके लक्षण।

प्राणः कंठगतोत्युदानपवनो हृत्स्थोतिपीडाकरः शब्दः कांस्यविभिन्नघोषसदृशो निष्ठीवनं पूयभम् ॥ कंठे घुर्घुरशब्दता कृशतनुस्त्वक्पीतवर्णारुचिर्विद्वद्भिः परिकीर्तितं हि सकलं कासस्य चिह्नं महत् ॥ २ ॥

वातकी खांसीके लक्षण।

उरसि शिरसि कुक्षौ वेदना कंठदेशे भवति बलविनाशः ष्ठीवनं तुच्छतुच्छम् ॥ गलमुखपरिशोषः शुष्ककासोंगमर्दः क्षवथुररतिरुग्रा वातकासस्य चिह्नम् ॥

अर्थ—मुखमें नेत्रमें नाकमें धूलिके पडनेसे, तथा धुआंके जानेसे, भारी बोझके उठानेसे, रूखा खानेसे, दंडकोरडा आदिके पिटनेसे, अत्यन्त पुकारनेसे, खांसी पैदा होती है ॥ १ ॥ हृदयकी रहनेवाली जो प्राणवायु सो कंठमें प्राप्तहो और कण्ठकी रहनेवाली जो उदानवायु सो हृदयमें आती है तब इस रोगीको बहुत दुःख देती हैं और इस मनुष्यका शब्द जैसा कांसेका फूटा बरतन बोलता है इस तरहकी आवाज हो, और कफमिला थूके, कंठमें घरघर शब्दहो, शरीर लटजावे त्वचा पीली होजाय, अरुचि, ये लक्षण पंडितोंने खांसीके कहे हैं ॥२॥ हृदयमें मस्तकमें कांखमें कंठमें दर्द हो, बलका नाश, थोडा थोडा थूकना, गलेका तथा मुखका सूखना, सूखीखांसीका उठना, शरीरका टूटना, छींकका आना, मनका न लगना, ये बादीकी खांसीके लक्षण हैं ॥ ३ ॥

पित्तकी खांसीके लक्षण।

भवेद्वीर्यहानिर्ज्वरो वक्त्रशोषः सरक्तं च निष्ठीवनं शूलमुग्रम् ॥ तृषासंभ्रमस्तिक्तमास्यं विदाहो निरुक्तं परैः पित्तकासस्य चिह्नम्॥

कफकी खांसीके लक्षण।

निष्ठीवनं सांद्रकफेन युक्तं कासेन छर्दिर्बलवीर्यनाशः॥ शीर्ष्णिप्रपीडा जडतांगगौरवं प्रोक्तं भिषग्भिः कफकासचिह्नम् ॥५॥

त्रिदोषकी खांसीके लक्षण।

भवेद्यस्य निष्ठीवनं पूयवर्णं मुखान्नासिकाया विगंधिर्विवर्णम्॥ महाश्वासवाहोंगतेजोल्पवीर्यः स कासी न जीवेत्कदाचित्सुधाभिः ॥ ६ ॥

अर्थ—वीर्य्यका नाश, ज्वर, मुखका सूखना, रुधिरमिला थूकना, उग्रशूल, प्यास, भौंर, कडुवा, मुख, दाह, ये लक्षण पित्तकी खांसीके पूर्वाचार्य्योंने कहे हैं ॥ ४ ॥ गाढा कफका थूकन, रद्दहो, बल वीर्य्यका नाश, शिरमें दर्द, जडता, देहका भारी होना, ये लक्षण वैद्योंने कफकी खांसीके कहे हैं ॥५॥ राधके वर्णके समान थूकना, मुख नाकमें बासआवै, तथा विवर्ण, महाश्वासका चलना, देह, तेज वीर्य्य-इनका घटना, ऐसा खांसीवाला अमृतसेभी नहीं जीवै॥६॥

असाध्यखांसीके लक्षण ।

मुखे यस्य शोथोरुचिर्वेपथुत्वं सरक्तं च निष्ठीवनं फेनिलं वा॥ तृषा शूलमुग्रं भवेद्दुष्टगंधिः स कासी न जीवेत्सहस्रैर्भिषग्भिः वृद्धक्षीणतमः कासी साध्यो दानजपादिभिः ॥ तरुणो बलवान्साध्यः पथ्यैरौषधिभिर्बुधैः ॥ ८ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे कासलक्षणम् ।

अर्थ—मुखपर जिसके सूजनहो, अरुचि, कंप, रुधिर मिला तथा झाग मिला थूकना, शूल दुर्गंधिका मुखमें आना, ऐसे लक्षणवाला रोगी हजार वैद्योंसेभी नहीं जीवै ॥ ७ ॥ बूढा तथा जो क्षीण पडगयाहो, वह रोगी दान जपादिकोंसे साध्यहै और जो रोगी तरुणहो तथा बलवान्हो वो पथ्य और औषधियोंसे पंडितोंने खांसीवाला साध्य कहाहै ॥ ८ ॥

इतिहंसराजार्थबोधिन्यां कासरोगलक्षणं समाप्तम् । शुभम् ।

अथ हिक्कालक्षणम् ।

हिक्कारोगकी उत्पत्ति ।

रजोधूम्रपातान्मुखे नासिकायां गरिष्ठान्नपानाज्जलस्यावगाहात् ॥ श्रमादध्ववेगात्तृषार्तेररुच्या भवेयुर्नृणां पंचधा रौद्रहिक्काः ॥ १ ॥ प्राणोदानसमानकोपजनिता हिक्कांत्रवृद्धिप्रदा कष्टं हंति करोति जन्मसमये बालस्य वृद्धिं सुखम् ॥ तेजौजोबलवीर्यवृद्धिमधिकां हर्षं रुचिं वर्द्धयेद्वक्तास्यं तनुकंपनं नयनयोर्विस्फारमार्द्रं गलम् ॥ २ ॥ तारुण्ये वयसि स्थिते कफमरुज्जाता न हिक्का हिता वैरस्यं वदने गले सरसतां कुक्षौ प्रपीडारुजम् ॥ आटोपं हृदये रुणद्धि पवने मर्माणि संतोदते छर्दिं सा कुरुते रतिं वितनुते हृल्लासमुल्लासते ॥ ३ ॥

अर्थ–धूलि धुआं इनका मुख और नाकमें जानेसे, गरिष्ठ अन्नके भोजनसे, जलमें बहुत देरके रहनेसे, श्रमसे, रस्तेके चलनेसे, चौदह वेगोंके रोकनेसे, प्याससे, अरुचिसे, मनुष्योंके पांच प्रकार का घोर हिचकीका रोग पैदा होताहै ॥ १ ॥ प्राण उदान समान पवनोंके कोप करनेसे हिचकी आंतोंको बढावे, कष्ट करै, तथा रोगीको मारती है और बालकके जन्मसमय बालकको बढावे तथा सुखदे, और तेज बलवीर्य्यकी बढवारको करै तथा हर्ष रुचिको बढावै मुखको लाल करदे शरीरको कँपावै नेत्रोंको फटेसे करदे कंठको गीलाकरदे ॥ २ ॥ तरुण अवस्थामें जो वातकफसे पैदा हुई हिचकी सो अहितहै मुखको विरस करदे गलेमें सरसता करदे, कांखमें पीडाकरे, छातीको घेरले श्वासको रोकदे मर्ममर्ममें पीडाकरै वमन तथा मनका न लगना, खांसी, सूखी रद्द, ये लक्षण करै ॥ ३ ॥

वार्द्धक्ये वयसि स्थिते सति महाहिक्का यदा जायते पित्तश्लेष्ममरुद्भवा प्रकुरुते पीडां गले मस्तके ॥ शूलाध्मानतृषारुचिं वितनुते हृल्लासहृत्पीडनं पंचत्वं वितनोति रोगमखिलं प्राणान्निहंति द्रुतम् ॥ ४ ॥ उदानवायुकोपेन पंचहिक्का भवन्ति ताः॥कुर्वन्ति विविधान् रोगान् तासां नामानि संब्रुवे॥५॥ गम्भीरा महती तथा च यमला क्षुद्रान्नजा पंचधा गम्भीरोदरगर्जनी ज्वरकरी मर्माणि संतोदते ॥ सर्वोपद्रवकारिणी बलहरी नाभेः प्रवृत्ता हि सा अन्या या महती करोति च तनौ कपं शिरःपीडनम् ॥ ६ ॥

अर्थ–वृद्ध अवस्थामें जो हिचकी हो वो बात पित्त कफ तीनों दोषोंसे पैदा होतीहै वो घोर हिचकी कंठमें तथा शिरमें दर्दको करै है, शूल, अफरा, प्यास, अरुचि, खाली रद्द, हृदयमें दर्द, और सबरोग ये लक्षण हों तो मनुष्य जल्दी मरजावे ॥ ४ ॥ उदान पवनके कोपसे पांच तरहकी हिचकी पैदा होतीहै और अनेक तरहके रोगोंको पैदा करतीहै उन पांचोंके नाम कहते हैं ॥ ५ ॥ १ गंभीरा, २ महती, ३ यमला, ४ क्षुद्रा, ५ अन्नजा; प्रथम गंभीराके लक्षण कहते हैं गंभीरा पेटमें गुडगुडाहट करै, ज्वरको करै, मर्ममर्ममें पीडाकरै और सब उपद्रवोंको करै, बलका नाशकरै, यह हिचकी नाभिसे उठती है. अब दूसरी महतीका लक्षण कहतेहैं शरीर कांपै, शिरमें दर्दहो ॥ ६ ॥

वातश्लेष्मभवाकरोति यमला हिक्कांत्रपीडारुजौ ग्रीवातालुविभेदिनी बलहरी ग्रीवाशिरःकंपनम्॥क्षुद्रानाभितलोद्भवारसचयं-

चोर्ध्वं नयेत्कष्टदा वैरस्यं वदनेन्नजा वितनुते गात्रे गुरुत्वं तथा७॥
इति भिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे
हिक्कालक्षणं समाप्तम् ।

अर्थ—तीसरी बात कफसे पैदाहुई जो यमला नाम हिचकी सो आंतोंको पीडा दे, कंठतालुमें दर्दकरै, बलका नाशकरै, नाडीशिर इनको कँपावै, चौथी जो क्षुद्रानामकर प्रसिद्ध हिचकी है सो नाभीके नीचे उठती है, वो रसको ऊपर लेजातीहै अर्थात् उलटी करावै और कष्टको पैदाकरै, मुखको बिरस करती है, पांचवीं जो अन्नसे पैदाहुई हिचकी सो शरीरको भारी करती है ॥७॥

इति हंसराजबोधिनीमें हिक्कालक्षणसमाप्तहुआ ।

श्वासरोगनिदानम् ।

प्राणोदानसमानकोपजनितः श्वासो रुषावर्द्धते क्रुद्धोर्ध्वं व्रजते मुहुर्मुहुरथो दोधूयमानं नरम्॥निद्रां हंति महातृषां वितनुते शीतज्वरं कंपनं प्रस्वेदं कुरुते तनौ विकलतां दाहं भ्रमं बिभ्रते॥१॥ शुश्कास्यं कुरुते रुणद्धि परतः स्रोतांसि रक्ताननं हृत्कंठोष्ठमुखेषु शोषमरतिं श्वासोऽरुचिं नाशते ॥ आध्मानं तनुते शिरां विधमते नृणां तनुं कंपते शूलं वेदनया युतं विकलतां शब्दं परं रुंधते ॥ २॥ श्वासः स्वाभाविको मंदो ह्यतिश्वासोरुजाकरः ॥ मृतिप्रदो महाश्वासस्त्रिविधं श्वासलक्षणम् ॥ ३ ॥

अर्थ—प्राण, उदान, समान इन तीनों पवनोंके कोप करनेसे क्रोधकर बढती और ऊपर-नीचे बिचरती है कभी ऊपर चढे कभी नीचे उतरे नींदका नाश, तथा घोर प्यासको पैदाकरै, शीतज्वर, कंफ, पसीना, इनको पैदाकर शरीरमें बेकली, दाह, भौंर, ये लक्षण श्वासरोग करताहै ॥ १ ॥ श्वास मुखको सुखावै, नाडियोंके मार्गको, रोकदे, चेहरेको लाल करताहै, ह्रदय, कंठ, ओठ, मुख इनमें शोषहो, मनका न लगना, अरुचि, अफरा, नाडीनको धमावै, शरीर कँपावै, वेदनायुक्त शूल, तथा बेकली और आवाजको निहायत कम करती है ॥ २ ॥ श्वास जो है सो स्वभावसेही मंदहोताहै परंतु अतिश्वास रोग करता है और महाश्वास मौतका देनेवाला है ये तीनप्रकारके लक्षण हैं ॥ ३ ॥

स्वाभाविकश्वासके लक्षण ।

श्वासःसंकुरुते बलं मृदुतनुं स्वाभाविकः सौख्यदो धैर्यं शौर्यमदोत्सवं सुभगतां शक्तिं पवित्रं नरम् ॥ ऊर्ध्वाधोगतिरु-

त्तमा पवनयोर्दुर्गंधिनिर्णाशकः सौगंधिं सुकुमारतां वितनुते हर्षं परं वर्द्धते ॥ ४ ॥

अतिश्वासके लक्षण ।

अतिश्वासः कासं वितरति भृशं शूलमरतिं बल वीर्यं तेजो हरति कुरुते छर्दिमरुचिम् ॥ मुख घ्राणं कण्ठं तुदति वहते श्लेष्ममधिकं तृषाध्मानं हिक्कां तनुषु गुरुतां स्वेदमधिकम्॥५॥

महाश्वासके लक्षण ।

संज्ञां नाशयते रुणद्धि सतत स्रोतांसि विष्टम्भनं वाग्बंधं कुरुते गलेकफचयं मर्माणि संतोदते ॥ औद्धत्यं नयनं तृषां च हृदये दाहं मुखे शोषणं नाडीस्त्रोटयते भ्रमं वितनुते श्वासो महान् प्राणहा ॥ ६ ॥

इति श्रीभिषकचक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे श्वासलक्षणं समाप्तम् ।

अर्थ—स्वाभाविक श्वास बलको करैं तथा देहको कोमल रक्खे, सुखको दे, धैर्य तथा पराक्रम, मद, मंगल, सुंदरता, शक्ति पवित्रताको दे और पवनका ऊपर नीचेका आना जाना श्रेष्ठहै और दुर्गन्धको नाश करती है, और सुगंधको दे, तथा सुकुमारपना और हर्ष इनको बढावे ॥ ४ ॥ अतिश्वाससे खांसी, शूल, मनका, न लगना हो, बलवीर्य तेजको घटावै, वमन, अरुचि मुख नाक कंठमें पीडाहो, कफ अधिक गिरै, प्यास अफरा, हिचकी, शरीर-भारी, पसीना इनको अधिक करै ॥ ५ ॥ प्राणोंकी नाशक, महाश्वास ये लक्षण करती है संज्ञाका नाश, और नसोंके मार्गको रोकदे मलका न उतरना, जबानका बन्दहोना, कंठमें कफका जोर, मर्ममर्ममें पीडा, फटे फटेसे नेत्र, प्यास, हृदयमें दाह हो, मुखका सूखना, नसोंका टूटना, भौंरका आना ॥ ६ ॥

इति हंसराजबोधिन्यां श्वासलक्षणं समाप्तम् ।

स्वरभेदलक्षणम् ।

अत्युच्चभाषाध्ययनाभिघातैस्तैलादिभक्षैरतिदुष्टपानैः॥ संकोपिताः पित्तकफानिलास्ते कुर्वन्ति भिन्नस्वरमेव नृणाम् ॥ १ ॥ संभिन्नकांस्यस्वरतुल्यशब्दाः केचित्तथा गर्दभतुल्यघोषाः ॥

अजाविछुच्छुंदरिकाकशब्दं मुखे नेत्रयोः श्यामता मूत्रवर्चाः ॥ २ ॥ क्वचिद्दीर्घशब्दं खरोष्ट्राश्वतुल्यं वचः प्रस्खलं वातलं कंठपीडाम् ॥ ३ ॥

अर्थ—उच्चस्वरके पढनेसे, चोटके लगनेसे, तेल खटाई आदिके खानेसे, दुष्ट जलके पीनेसे, कोपको प्राप्तभये जो वात पित्त कफ सो मनुष्योंके स्वरभंग रोग पैदा करतेहैं ॥ १ ॥ जैसे फूटे हुये कांसेकीसी आवाजहो, तथा गधेकीसी आवाजहो, अथवा बकरीके शब्दकीसी आवाजहो, छछूंदरकीसी आवाजहो, तथा कौवेकीसी आवाजहो, मुख नेत्र कालेहों, पेशाब ज्यादाउतरे॥२॥ कभी बडा शब्द करे, गधेकी ऊंटकी, घोडेकी, आवाजके समान कंठमें दर्द ये वातके स्वरभंगरोगके लक्षण हैं ॥ ३ ॥

पित्तके स्वरभंगलक्षण ।

स्वरः पित्तभिद्भिन्नकांस्यप्रघोषः करोत्यंगदाहं मुखेत्यंतशोषम् ॥ तनौ नेत्रयोः पीततां मूत्रकृच्छ्रन्तृषां कंठपीडां रुजं क्षीणगात्रम् ॥ ४ ॥

कफके स्वरभंग लक्षण ।

प्रभिन्नः स्वरः श्लेष्मणा क्षीणघोषो गलं श्लेष्मरुद्धं गुरुत्वं शरीरे ॥ गलेघर्घरत्वं रुतं शुभ्रनेत्रं मुहुः ष्ठीवनं कासमुग्रं करोति॥५॥

असाध्यस्वरभंगका लक्षण ।

अंतर्गतः स्वरो यस्य बहिर्नायाति कर्हिचित् ॥ वातपित्तकफैर्भिन्नः स रोगी नैव जीवति ॥ ६ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे स्वरभेदलक्षणम् ।

अर्थ—पित्तका स्वरभंग फूटे कांसेकीसी आवाज करै, देहमें दाह, मुखका सूखना शरीर तथा नेत्र पीले, मूत्रकृच्छ्र, प्यास, कंठमें दर्द, शरीरका लटना, ये लक्षण करताहै ॥४॥ कफका स्वरभंग आवाजको मंद करै, कंठको कफसे रोकदे, शरीर भारी, गलेमें घरघर शब्दहो, पीडाहो, सफेद नेत्र हों, बार बार थूकना, घोरखांसीको करे ॥ ५ ॥ जिस स्वरभंगवाले, रोगीका स्वर भीतरही रहे और बाहर न निकलै और त्रिदोषसे हुआ हो वह रोगी नहीं जीवै ॥६॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां स्वरभेदलक्षणं संपूर्णम् ।

अरोचकरोगकी उत्पत्तिलक्षण ।

अरोचकः पित्तमरुत्कफैर्भवेद्भयेन शोकेन रुषांगपीडया ॥
रुजातिबीभत्सविलोकनेन वा अहृद्यदुष्टाशनपानपूर्तिभिः ॥१॥

वातअरोचकरोगका लक्षण ।

अरोचके वातसमुद्भवे हिते भवंति चिह्नानि मुखे कषायता ॥
वपुस्तु रूक्षं कृशतांगगौरव ज्वरोम्लताशूलमथांगपीडनम्॥२॥

पित्तके अरोचकका लक्षण ।

अरोचकः पित्तभवः करोति दाहं प्रसेकं कटुकत्वमास्ये ॥
शरीरबाह्यांतरयोश्च शोथं पानेषु भक्ष्येष्वरुचिं कृशत्वम् ॥३॥

कफके अरुचिरोगका लक्षण ।

अरोचकःश्लेष्मभवो विधत्ते गुरुत्वमंगेषु जडत्वमार्तिम् ॥
क्षारत्वमास्ये रुचिमोहशैत्यं गले कफं पांडुरुजं शरीरे ॥ ४ ॥

वातकी अरुचिमें पथ्य ।

अरोचकी मरुद्भवस्त्यजेत् प्रवातसेवनम् ॥ श्रमंजलावगाहनं कषायमम्लमामिषम् ॥ ५ ॥

पित्तकी अरुचिमें पथ्य ।

पित्तात्मके त्यजेत्तीक्ष्णं विदाहि लवणाधिकम्॥व्यायामं वह्नि-संतापं विरसं कटुकं रसम् ॥ ६ ॥

अर्थ—भयसे, शोकसे, क्रोधसे, शरीरकी पीडासे बुरीवस्तुके देखनेसे मनको बुरालगे ऐसे भोजनसे तथा दुष्टवस्तुके पीनेसे अरोचक रोग वात, पित्त, कफके कोपसे पैदा होता है ॥१॥ वादीसे पैदा हुआ अरोचक रोग उसके ये लक्षण हैं, मुख कडुवा, शरीर रूखा, तथा कृश, तथा भारी, और ज्वर, तथा खट्टा मुख, शूल, शरीरमें पीडा ॥ २ ॥ पित्तसे पैदा हुआ अरुचि रोग उसके ये लक्षण हैं, दाह हो, लारका बहना, कडुवा मुख, शरीरका बाहर भीतरसे सूजना, खानेमें तथा पीनेमें अरुचि, शरीर कृश ॥ ३ ॥ कफसे पैदा हुये अरुचि रोगके ये लक्षण हैं, शरीर भारी, तथा जड और दुःखहो, मुख खाराहो, तथा श्वास अरुचि, बेहोसी, शीतका लगना, कंठमें कफ तथा शरीरमें पीलिया ॥ ४ ॥ वादीकी अरुचिवाला हवाका खाना, श्रमका करना, जलसे स्नान आदि और कसेली तथा खट्टी वस्तु और मांसका खाना त्यागदे॥५॥ पित्तकी अरुचिवाला मनुष्य चरपरी, दाहकरनेवाली, ज्यादा .नोनका खाना, दंडकसरतका करना, अग्निका तापना, विरस, तथा कडुई वस्तुका खाना त्यागदे ॥ ६ ॥

कफकी अरुचिमें पथ्य ।

त्यजेदरोचकी पिष्टं तैल्यं शैत्यंकफात्मकः ॥ गुरुत्वं दधिमिष्टान्नंवृन्ताकं स्निग्धभोजनम् ॥ ७ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रेऽरोचकलक्षणं सम्पूर्णम् ॥

अर्थ–कफकी अरुचिवाला पिसा अन्न, तेलका पदार्थ, तथा शीतल वस्तु, कफके करनेवाली वस्तु, भारीवस्तु, दही, मीठाअन्न, बैंगन, चिकनाभोजन, ये त्यागदे ॥ ७ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यामरोचकरोगलक्षणं समाप्तम् ।

छर्दिरोगलक्षणम् ।

दोषेर्व्यस्तैः समस्तैर्वा वातपित्तकफात्मकैः ॥ भवंति छर्दयः पंचबीभत्सानां विलोकनात् ॥ १ ॥ स्निग्धैरहृद्यैर्लवणैरतिद्रवैर्लतादिभक्ष्यैरतिभोजने रुषा ॥ अत्यबुपानैर्भयनिंद्यदर्शनैश्छर्दिर्भवेदध्वपरिश्रमैः परैः ॥ २ ॥

वातकी छर्दिके लक्षण ।

छर्दिर्वातभवा करोति विविधान् रोगानलं भोजनी कृष्णाभा हरितारुचिः शिथिलतां हृत्पार्श्वपीडां भ्रमम् ॥ उद्गारं स्वरभेदनं च महतीं जृम्भां गले पीडनं शूलं रूक्षवपुस्तृषां च शमनं वह्नेस्तनौ शोषणम् ॥ ३ ॥

अर्थ–वात, पित्त, कफसे तथा सन्निपातसे तथा, बुरीवस्तुके देखनेसे छर्दि उलटीका रोग पांच प्रकारका होता है ॥ १ ॥ चिकनी सूगली नोनकी पतली तथा लता आदिके खानेसे, बहुत भोजनसे, क्रोधसे, बहुत जलके पीनेसे, डरके लगनेसे, सूगली वस्तुके देखनेसे, बहुत रास्ताके चलनेसे, अपर कहिये कृमिके पडनेसे, स्त्रीके गर्भ रहनेसे, छर्दिनाम रद्दका रोग पैदा होता है ॥ २ ॥ जो मनुष्य बहुत भोजन करे उसके वातकी छर्दी अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न करती है, तथा काले रंगकी तथा हरे रंगकी हो, और शिथिलताको करे, हृदयमें पसवाडोंमें पीडा करे, भ्रमको करे, डकार बुरीके आना, स्वरभंग, घोर जंभाई, कंठमें पीडा, शूल, शरीरमें रूखापन, प्यासका अवरोध, शरीरमें अगसी जलै, और शोषको करे ॥ ३ ॥

पित्तकी छर्दिके लक्षण ।

छर्दिः पित्तसमुद्भवारुणनिभा पीतप्रभा सा क्वचित् कोष्णा-

दाहयुतांगपीडनपरा तृट्शूलमूर्च्छान्विता ॥ हृत्कंठोष्ठमुखेषु तालुरसनाशीर्षेषु पीडाप्रदा संतापभ्रमकारिणी रुचिहरी श्लेष्मांशका सा भवेत् ॥ ४ ॥

कफकी छर्दिके लक्षण ।

छर्दिः श्लेष्मसमुद्भवा शितनिभा फेनान्विता मेदुरा क्षारास्यं कुरुते रुचिं वितनुते तंद्रां प्रसेकं वमिम् ॥ आलस्यं जडतां वपुर्गुरुतरं लालां च निष्ठीवनं रोमांचं हृदि वेपथुं मुखमलं कासं तनौ शीतताम् ॥ ५ ॥

सन्निपातकी छर्दिके लक्षण ।

छर्दिः पित्तमरुत्कफैः प्रजनिता नानानिभा कष्टदा श्वासं कासतं तनोति कृशतां दाहं तृषाकंपनम् ॥ हल्लासं तमकं वपुर्विकलता मूर्च्छामतीसारकं शूलं मूत्रविरोधनं ज्वरतमं हिक्कां विवर्णं वमिम् ॥ ६ ॥

अर्थ–पित्तकी छर्दिरोगके ये लक्षण हैं, लालरंग तथा पीले रंगकी तथा गरमहो, दाहयुत, शरीरमें पीडा, प्यास, शूल, मूर्च्छा, हृदय, कंठ, ओठ, मुखतालु, जबान, शिर इनमें पीडाहो, खेद, भ्रम, रुचिको नाशकरै कफको नाशक हो॥४॥पित्तकी छर्दिरोगके ये लक्षण हैं, सपेदरंगहो, झागसे आच्छादितहो, चिकनी, खारामुख, अरुचि, तन्द्रा पसीनेका आना, रद, सुस्ती, जडपना, देह भारी, लारका गिरना, बारबार थूकना, रोमांच, हृदयमें कंप, मुखमलीन, खांसी, शरीरको शीतलगें ॥ ५ ॥ त्रिदोषसे पैदाहुई जो छर्दि उसका चित्रविचित्र रंगहो, कष्टको पैदाकरे, श्वास, खांसी, तथा शरीरमें कृशता, दाह, प्यास, कंप, खाली उलटी, तमक, देहमें बेकली, मूर्च्छा, अतीसार, शूल, मूत्रका रुकना, ज्वर, अंधेरेका आना, हिचकी, वर्ण औरही तरहका और वमन ये लक्षण हों॥६॥

छर्दिरोगके उपद्रव ।

कासो हिक्कातृषाश्वासोहृद्रोगस्तमकोज्वरः ॥ मूर्च्छावैचित्त्यमित्येतेज्ञेयाश्छर्देरुपद्रवाः ॥ ७ ॥

छर्दिरोगका साध्यासाध्यलक्षण ।

छर्दिः सोपद्रवाऽसाध्या रक्तपूयवहा तथा ॥ नोपद्रवाभवेत्साध्या ज्ञात्वा भैषज्यमाचरेत् ॥ ८ ॥ ॥ इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे छर्दिलक्षणं संपूर्णम् ।

अर्थ-खांसी, हिचकी, प्यास, श्वास, हृदयमें पीडा, तमक, ज्वर, मूर्च्छा, वेहोसी ये छर्दि रोगके उपद्रव हैं ॥ ७ ॥ उपद्रव सहित छर्दिरोग असाध्य है और जिसमें रुधिर और रांध गिरती हो वोभी असाध्यहै, और जिसमें उपद्रव न हो वो साध्य हैं ऐसे साध्य असाध्य परीक्षा कर पीछे दवा दे ॥ ८ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां छर्दिरोगनिदानं समाप्तम् ।

अथ तृष्णालक्षण ।

कफोद्भवा पित्तभवा मरुद्भवा त्रिदोषजा भुक्तभवा क्षतोद्भवा ॥ भयश्रमाभ्यां जनिता क्षयोद्भवा भवंति तृष्णाष्टविधाश्च दुःसहाः ॥ १ ॥

तृष्णारोगकी उत्पत्ति ।

वाताशनाध्वश्रमतापरक्तैः स्रोतस्त्वपांवाहिषु शुष्कनेषु॥ हृत्कंठतालूनि दहंति दोषास्तृषा तदा संजनिता नराणाम् ॥ २ ॥

वातकी तृष्णारोगका लक्षण ।

तृष्णा वातसमुत्थिता च कुरुते स्रोतो निरोधं श्रमं शोषं शंखशिरोगलेषु विरसं वक्र निरुत्साहसम् ॥ संकोचं परितस्तनौ प्रलपनं चित्तभ्रमं रूक्षतां शीतोदैः परिवर्द्धिता वितनुते हिक्कामजीर्णज्वरम् ॥ ३ ॥

अर्थ-तृष्णा अर्थात् प्यासका रोग आठतरहका है,ऐसे वैद्य कहते हैं १ कफसे, २ पित्तसे, ३ बादीसे, ४ सन्निपातसे, ५ भोजनके करनेसे, ६ घावसे, ७ भय और श्रमसे, ८ क्षईरोगके होनेसे ॥ १ ॥ वातसे, भोजनके करनेसे, मार्गके चलनेसे, श्रमके करनेसे, गरमीसे, रुधिरके बिगडनेसे, कुपितहुए जो वात, पित्त, कफ सो जलके बहनेवाली नाडीको सुखाकर हृदय, कंठ, तालूमें दाहको पैदाकरै, तब मनुष्योंके तृषारोग पैदा होता है ॥ २ ॥ वातकी तृषा ये लक्षण पैदा करती है, बहिरापना, परिश्रम, कनपटी, मस्तक, गला इनमें शोष, मुखमें बिरसता, तथा साहसहीन, देहमें संकोच, बकना, चित्तमें भ्रम, तथा देह रूखा शीतलजलके पीनेसे जो तृषा पैदाहो वो हिचकी और अजीर्णज्वरको बढावे ॥ ३ ॥

पित्तकी तृषारोगका लक्षण ।

आधिव्याधिसमन्विता भयकरी पित्तात्मिका शोषणी तृष्णादाहविवर्धिनी सुखहरी कार्यस्य विध्वंसनी ॥ उष्णत्वे विद-

धाति दोषमखिलं शीते सुखं बिभ्रते रक्तास्यं कुरुते मुखे विरसतां मूर्च्छां प्रलापं भ्रमम् ॥ ४ ॥

कफकी तृष्णाके लक्षण।

मूत्रावरोधं जठराग्निनाशं निद्रां विधत्ते गुरुतां शरीरे ॥ हृत्कंठपीडां वितनोति कासं श्लेष्मात्मिका छर्दिकरी च तृष्णा ॥५॥

त्रिदोषजनिततृषाके लक्षण।

त्रिदोषजनिता तृष्णा तेजोवीर्यबलौजसाम् ॥ नाशिनी रुक्करी घोरा मनोक्षप्राणहारिणी ॥ ६ ॥

अर्थ—आधि कहिये मानसिकरोग, व्याधि कहिये ज्वरादिरोग तथा भय पैदा करे, शोष दाहको बढावे, सुखको दूरकरे, देहको विध्वंस करे, गरमीसे सकल रोगपैदाकरे, और शरदीके होनेसे सुख माल्रमहो, लाल और रसरहित मुखहो, मूर्च्छा, प्रलाप, भ्रम ये लक्षण पित्तकी तृष्णाके हैं ॥४॥ मूत्रका रुकना तथा मंदाग्नि, नींदका आना, शरीर भारी, हृदयमें, कंठमें पीडा, खांसी, रद्द, ये लक्षण कफकी प्यास रोगके हैं ॥ ५ ॥ सन्निपातकी तृषा तेज वीर्य बल ताकत का नाश करनेवाली है घोर रोग पैदाकरे मन और इंद्रियोंकी हरनेवाली है ॥ ६ ॥

तृष्णारोगमें साध्यासाध्यविचार।

अल्पदोषकरी तृष्णा श्रमघाताध्वभोजनैः ॥ जाता शीतोदपानेन नाशमेति गरीयसी ॥ ७ ॥

अथ तृष्णारोगे पथ्यम्।

गुर्वन्नभोजनं स्निग्धं तीक्ष्णोष्णं लवणामिषम् ॥ व्यायामं सूर्यसंतापं तृष्णावान् परितस्त्यजेत् ॥ ८ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे तृष्णालक्षणम्।

अर्थ—जो श्रमसे चोटसे रास्ताके चलनेसे भोजनसे तृषा अर्थात् प्यासलगै वो साध्यहै, और जो ठंढेपानीके पीनेसे प्यासलगै, सो प्राणकी नाश करनेवाली जाननी चाहिये ॥ ७ ॥ भारी अन्नका भोजन, चिकनी वस्तु, तीखी, गरम, नोनकी, मांस, दंड कसरतका करना, सूर्यका तेज, ये तृषारोगवाला त्यागदे ॥ ८ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां तृष्णारोगनिदानं सम्पूर्णम्।

मूर्च्छारोगकी उत्पत्ति।

क्षीणस्य गतसत्त्वस्य विरुद्धाहारसेविनः ॥ धाविनः सक्षतस्यापि बीभत्सस्य विलोकिनः ॥ १ ॥ तस्य नाडीषु सर्वासु दोषाः सर्वे प्रकोपिताः ॥ रुषा विशंति कुर्वंति मूर्च्छां वैचित्त्यकारिणीम् ॥ २ ॥ वातपित्तकफैर्मद्यैः शोणितेन विषेण च॥ मूर्च्छा भवति सा कुर्यान्नरं काष्ठमिवानिशम् ॥ ३ ॥

अर्थ-जो मनुष्य क्षीणहो, ताकतरहितहो, विरुद्ध आहारका खानेवालाहो, दौडनेवाला हो, और जिसके शरीरमें घावहो, विनायदी वस्तुदेखीहो ॥ १ ॥ ऐसे पुरुषके कोपको प्राप्तहुये जो तीनों दोष सो सर्व नाडियोंमें कुपितहो धसकर बेहोसी करनेवाला मूर्च्छारोग पैदा करते हैं ॥ २ ॥ सो मूर्च्छारोग वात, पित्त, कफ और सन्निपातसे और मद्यके पीनेसे रुधिरसे विषभक्षण करनेसे सात प्रकारका होताहै, वो मूर्च्छा मनुष्यको काष्ठकी तरह पृथ्वीपर गेर देती है ॥ ३ ॥

वातकी मूर्च्छाका लक्षण।

दृष्ट्वाकाशं श्यामनीलावभासं पश्चादुर्व्यां वातजामेति मूर्च्छाम्॥ यो मर्त्यस्तं पीडयंतीति रोगा जृम्भाकंपश्वासतृष्णाप्रसेकाः॥ ४

पित्तकी मूर्च्छाका लक्षण।

पीतारुणं नभः पश्यंस्तमः पश्यंस्ततः परम् ॥ नरो यः पतते भूम्यां तां मूर्छां पित्तजां वदेत् ॥ ५ ॥ जंतौ प्रबुद्धे तमसि प्रनष्टे मूर्च्छा तु पित्तप्रभवा करोति॥ प्रस्वेदतृष्णापरिवेपथुत्वं दाहं च तापं मुखशोषमार्तिम् ॥ ६ ॥

अर्थ-जो मनुष्य आकाशको काला नीला देखे, फिर धरतीमें गिरपडे और जिसको जँभाई, कंप, प्यास, पसीनेहों, उसको वातकी मूर्च्छा कहते हैं ॥ ४ ॥ प्रथम पीला, लाल आकाशको देखे, फिर अंधकार मालूमहो और तिस पीछे धरतीमें गिर पडे उसको पित्तकी मूर्च्छा कहते हैं ॥५॥ और जब मनुष्यको होस होजाय आंखोंके आगेसे अंधकार हट जावे, तब पसीना आवे, प्यास लगे, कंपहो, दाहहो, ज्वरहो, मुख शोषहो, पीडाहो, उस मूर्च्छाको पित्तकी कहतेहैं॥६॥

कफकी मूर्च्छाका लक्षण।

शुभ्रं नभो नरः पश्यन्मूर्छयोर्व्यां पतेद्यथा॥ निश्चेष्टो दंडवन्नूनं तां विद्याच्च कफात्मिकाम्॥७॥ प्रबुद्धे मनुजे कुर्यान्मूर्च्छा निद्रां कफात्मिका॥ शैथिल्यं गौरवं तंद्रां हृल्लासं कासतृड्ज्वरम्॥८॥

सन्निपातकी मूर्च्छाके लक्षण।

त्रिदोषजनिता मूर्छा सर्वरोगवहा नरम् ॥ पातयत्याशु मोहाब्धौ विना बीभत्सदर्शनम् ॥ ९ ॥

अर्थ–जो मनुष्य आकाशको धौला देखै फिर गिरपडै चेष्टारहित लकडीकीसीतरह उस मूर्च्छाको कफकी कहते हैं ॥ ७ ॥ जब मनुष्य सावधान होजाय तब नींद आवे, तथा शिथिलता होय, देह भारीहो, तंद्राहो, सूखी रद्द आवे, खांसीहो, तथा प्यासहो, ये कफकी मूर्च्छाके लक्षणहैं ॥ ८ ॥ त्रिदोष अर्थात् संनिपातसे पैदा हुई मूर्च्छा सर्वरोग प्रकट करै, और मनुष्यको मोहरूपी समुद्रमें गेरदेवे, बिना सूगली वस्तुके देखे जो पैदाहो उसको सन्निपातकी मूर्च्छा कहते हैं ॥ ९ ॥

रुधिरकी मूर्च्छाका लक्षण।

घ्राणेन रक्तस्य च दर्शनेन मूर्च्छंति ये स्त्रीजनभीरुबालाः ॥ बुद्धेषु चिह्नानि भवंति तेषां मोहोंगकंपोतिभयं जडत्वम्॥१०॥

मद्यकी मूर्च्छाका लक्षण।

मद्येन मूर्च्छा जडतां करोति नेत्रेरुणत्वं शिथिलं शरीरम् ॥ हर्षं प्रलापं परिबुद्धिनाशं निद्रां वमित्वं भ्रमतां प्रसेकम् ॥११॥

विषकी मूर्च्छाका लक्षण।

नासाकर्णमुखेषु शोषमधिकं मूर्च्छा विषात्संभवा दाहं तीव्रतरं दधाति हृदये कंठेतिपीडारतिः ॥ दृष्टिं नाशयते करोति विकलं देहस्य विक्षेपणं तेजोवीर्यबलौजसां प्रतिपलं विध्वंसिनी शोषणी ॥ १२ ॥

अर्थ–नाकसे रुधिरके गिरनेसे स्त्रीजन तथा डरपोक तथा बालक ये देखकर मूर्च्छाको प्राप्त होते हैं; होस होनेपर ये लक्षण होते हैं, मोह, शरीरका कांपना, डरका लगना, तथा जडत्व ॥ १० ॥ बहुत व दुष्टमद्यके पीनेसे जो मूर्च्छा हुई उसके ये लक्षण हैं जडत्व, और नेत्र लाल, शरीर शिथिल, हर्ष, बकना, बुद्धिका नाश, निद्रा, वमन, भ्रम, मुखसे लारका गिरना ये ॥११॥ विषके खानेसे व सूंघनेसे जो मूर्च्छा हो उसके ये लक्षण हैंनाक, कान, मुख इनका सूखना, तीव्रदाह, हृदयमें, कंठमें दर्द, मनका न लगना, नेत्रोंसे कम देखना, बेकली, देहका पटकना, तेज, वीर्य, बल ताकत इनका नित्य घटना और शोष हो ॥ १२ ॥

क्रमके लक्षण ।

व्यायामेन विना काये श्रमः स्याच्छ्वासवर्जितः ॥
इंद्रियाणां हि वृत्तिघ्नः क्रमः सैवोच्यते बुधैः ॥ १३ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे मूर्च्छालक्षणं समाप्तम् ।

अर्थ—जिस मनुष्यके दंडकसरतके बिनाही श्वासरहित श्रम हो और इंद्रियोंका जो स्वभाव तिसको पलटदे उसको पंडित क्रमरोग कहते हैं ॥ १३ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां मूर्च्छारोगनिदानं संपूर्णम् ।

दाहरोगनिदानम् ।

देहे शोणितमुच्छ्रितं प्रकुरुते दाहं महादारुणं ह्यंगं यं व्रजते तमेव दहते बाह्यो त्वचं चांतरैः ॥ मांसं शोणितनाडिकास्थिनिचयाञ्श्लेष्मं वसां मज्जिकां सर्वांगेषु गतं दहत्यवयवं सर्वं रुषाहर्निशम् ॥ १ ॥

धातुक्षीणदाहका लक्षण ।

क्षीणे धातावुत्थितो घोरदाहो मूर्च्छां कुर्यान्मर्मघातं ज्वरार्तिम् ॥ तृष्णां शोषं क्षीणशब्दं कृशत्वं वैद्यैरुक्तोऽसौ नरः कष्टसाध्यः ॥ २ ॥ मर्यादादधिकं रक्तं देहसन्धितमामयम्॥ लोहगंधं दहत्यंग पित्तवातस्य भेषजम् ॥ ३ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे दाहलक्षणं संपूर्णम् ।

अर्थ—जिस मनुष्यके देहमें रुधिर बढताहै, उसके महादाहका रोग पैदा करताहै, जिस अंगमें रुधिर प्राप्त हो उस अंगको दहन करे,और भीतर दाहके होनेसे बाहरकी त्वचामें दाह हो, और मांस रुधिर नाडी हड्डी इनके समूहको तथा कफ और वसाको मज्जाको दहन करे, सर्वांगमें प्राप्तदाह सब अंगके अवयवोंको क्रोध करके निरंतर दहन करे ॥ १ ॥ जिस मनुष्यकी धातु क्षीण हो उसके घोर दाह रोग पैदा हो उसके ये लक्षण हैं,मूर्च्छा हो,मर्ममर्ममें पीडा हो,ज्वर हो, प्यास, शोष, मंदशब्द हो और कृशदेह हो, वो रोगी वैद्योंने कष्टसाध्य कहाहै ॥२॥ मर्य्यादासे अधिक रक्त देहमें बढताहै तब दाहरोग होताहै और जब रुधिर निकले तब लोहेकीसी बास आवे, सब देहमें दाह हो, उसमें वातपित्तकी दवाई करना चाहिये ॥ ३ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां दाहरोगलक्षणं समाप्तम् ।

मदात्ययरोगका लक्षण ।

दोषा विषस्य ये सर्वे सुधायाश्चापि ये गुणाः॥ते मद्ये परितिष्ठंति युक्त्यायुक्त्या पिबेन्नरः ॥ १ ॥ अयुक्त्या यो पिबेन्मद्यं तस्य रोगो भवेद्ध्रुवम्॥तस्माद्युक्त्या पिबेन्मद्यं सौख्यायामृतवन्मुहुः ॥ २ ॥

अयुक्तिमद्यपाने दूषणम् ।

सूर्याग्नितप्तेन बुभुक्षितेन रोगान्वितेनापि पिपासितेन॥श्रमान्वितेनाध्वपरिश्रमेण वेगावरोधेन भयान्वितेन ॥ ३ ॥ क्षीणेन शोकाभिभयेन चैव कोपाभिभूतेन च निर्बलेन ॥ अत्यम्लभक्ष्येण च सेवितं बहु करोति मद्यं विविधान् विकारान् ॥४॥

अर्थ—विषके सर्व दोष और अमृतके सर्व गुण मद्यमें रहते हैं, युक्तिसे और अयुक्तिसे पीवे तो गुण और अवगुण करता है ॥ १ ॥ उसीको दिखाते हैं जो मनुष्य बेतरकीबसे दारू पीता है उसके बराबर रोग पैदा होता है इसीसे मद्यपान विधिपूर्वक करना चाहिये क्योंकि विधिपूर्वक पिया हुआ मद्य अमृतके गुणोंको करता है ॥ २ ॥ सूर्यके तेजमें घामसे, वा अग्निसे तपाहुआ भूखसे व्याकुल रोगी, प्यास, श्रमसे थका, रास्तेके चलनेसे, चौदह वेगोंके रोकनेसे, व्याकुल भययुक्त ॥ ३ ॥ क्षीण मनुष्य, शोकयुक्त, कोपयुक्त, निर्बलता, अत्यंत खटाई खाईहो, और बहुत मद्य पिया हो, ऐसे मनुष्योंके मद्य अनेक विकार करता है ॥ ४ ॥

लज्जाबुद्धिविनाशनं विकलतां छर्दिं गुरुत्वं तनौ पांडुत्वं कृशतां मुखे विरसतां निद्रां विमूर्च्छां तृषाम्॥हृल्लासं तमकं वमिं शिथिलतां गुह्यप्रकाशं तमः कार्य्याकार्यविमूढतां प्रकुरुते मद्यञ्च दोषाकरम् ॥ ५ ॥ मद्ये संत्यमृतोपमा गुणगणा युक्ताः प्रपीतेनिश क्षुद्बोधः स्मृतिपुष्टितुष्टिरुचयो नीरोगता कांतयः॥ आनंदांकुरकोटयो मधुरता स्त्रीषु प्रहर्षोत्सवौ वीर्यौजोबलधैर्यशौर्यमतयः सौजन्यसौख्यादयः ॥ ६ ॥

अर्थ—लज्जा बुद्धिको दूर करता है, बेकली, रद्द, देह भारी, पीलिया, शरीर कृश, मुखमें सवाद न हो निद्रा, मूर्च्छा, प्यास, सूखी उलटी, तमक, वमन, शिथिलता, छिपीबातको कहना, अंधेरा आना कार्य अकार्यको न जानना, दोषोंकी खानि, ऐसा अयुक्तिसे पियाहुआ

मद्य करता है ॥ ५ ॥ अथ मद्यपानगुण ॥ युक्तिसे मद्यपान करना अमृतके समान गुण करता है, क्षुधाको बढावै, स्मृति, पुष्टता, तुष्टता, रुचि, नीरोगता, कांति, आनंदके अनेक अंकुर पैदा करे, मधुरता, स्त्रियोंमें रुचि, उत्सव, वीर्य, ओज, बल, धीरता, शूरता, मति, सुजनता सुखादिकोंको पैदा करता है ॥ ६ ॥

मद्येन बुद्धिः प्रथमेन मोदः स्त्रीषु प्रहर्षो बहुभोजनेच्छा ॥ वादित्रगीतेषु रुचिः सुख च निद्रारतिः स्यान्मनसोत्सवश्च॥७॥ मद्ये द्वितीये पुरुषः प्रमत्तः स्यान्नष्टबुद्धिर्विगतात्मचेष्टः ॥ घूर्णाननो हर्षयुतोतिनिद्रो दुर्वाक्यशीलो बहुलीलया युक्॥८॥ तृतीये मदे नष्टदृष्टिर्मनुष्यो वदेत्सर्वगुह्यानि गच्छेदगम्याम् ॥ गुरु नैव पश्येदभक्षेत्समंताद्विलज्जः स्वतंत्रो भवेद्भग्नशीलः॥९॥

अर्थ—प्रथम पियाहुआ मद्य बुद्धिको और मोदको बढावै, स्त्रीगमनमें रुचि पैदाकरे, बहुत भोजनकी इच्छा, बाजे और गीत सुननेमें इच्छा, सुखनींद, मनका एकाग्रलगाना, मनमें उत्साह, ये गुण करता है ॥ ७ ॥ दूसरी दफे मद्य पियाहुआ आदमीको मस्त करदेता है, बुद्धि नष्ट करदे चेष्टारहित करदे तिरछी दृष्टि, हर्षयुक्त, अतिनिद्रा, खोटा बोलै, अनेक लीला करे ॥८॥ तीसरी दफे पिया मद्य मदसे नष्टदृष्टि करदे, और सब छिपीबात को कहै, और मा, बहिन, बेटी, गुरुकी स्त्रीसे भी खोटा काम करनेकी इच्छा हो, गुरुकोभी न देखे, अभक्ष्य भोजन करे, लज्जा त्यागदे अपनी इच्छाका काम करे, मारधाड करे ॥ ९ ॥

चतुर्थे मदे मृत्युतुल्यो मनुष्यो भवेज्ज्ञानहीनः स्वकार्ये विकार्ये ॥ क्रियाचारशौचादिहीनो विमूढः परं स्वं न जानाति मत्तो विलज्जः ॥ १० ॥

पित्तके मदात्ययके लक्षण ।

पार्श्वशूलशिरःकंपश्वासहिक्काप्रजागरैः ॥ मुखशोषेण पित्तस्य तमवेहि मदात्ययम् ॥ ११ ॥

कफके मदात्ययके लक्षण ।

तंद्राहृल्लासस्तैमित्यच्छर्द्यरोचकगौरवैः॥ शीतलांगस्य तं विद्यात्कफप्रायं मदात्ययम् ॥ १२ ॥

अर्थ—चौथीवार पियाहुआ मद्य मुरदेके समान करदे, ज्ञानरहित करदे, अपने पराये कामको न समझे, क्रिया आचार शौच इनकरके रहित करदे, मूढ करदे, अपना पराया न जाने, और मस्त लज्जारहित होजावे ॥१०॥ पसवाडोंमें शूल हो, शिरकांपे, श्वास हिचकी, जागना, मुखका

शोष ये पित्तके मदात्ययके लक्षण हैं ॥ ११ ॥ तंद्रा, सूखी रद्द, गीलेकपडेसे पोंछासादेह, वमन, अरुचि देहभारी और शीतल अंग हो उसको कफके मदात्यय कहते हैं ॥ १२ ॥

वातके मदात्ययके लक्षण ।

अगमर्दतृषाशूलरूक्षगात्रविवर्णता ॥ हिक्काभ्रमैश्च तं विद्याद्वातप्रायं मदात्ययम् ॥ १३ ॥

त्रिदोषके मदात्ययका लक्षण ।

सोपद्रवैः सर्वलिंगैस्त्रिदोषोत्थैर्मदात्ययः॥त्रिदोषजनितो ज्ञेयः साध्योयं च भिषग्वरैः ॥ १४ ॥ चिह्नं च तत्परमदस्य वदंति वैद्याश्छिक्कातृषांगगुरुताबहुपर्वभेदः ॥ विण्मूत्रशक्तिररुचिर्विरसास्यता च श्लेष्मा ज्वरस्तु कृशता रुजता कपाले ॥ १५ ॥

अर्थ—अंगोंका टूटना, प्यास, शूल, रूखा शरीर, तथा विवर्णदेहका, हिचकी भ्रम, ये लक्षण वातके मदात्ययके हैं ॥ १३ ॥ जो उपद्रवके साथ हो और तीनों. दोषोंका लक्षण मिलते हों उसको सन्निपातका मदात्यय जानना ॥ १४ ॥ औरभी सन्निपातमदात्ययके चिह्न कहते हैं जिसमें छींक, प्यास, शरीर भारी, संधिमें पीडा, विष्ठा,मूत्रका निकलजाना, अरुचि, मुखसे सवाद जातारहै, कफ और ज्वर तथा मस्तकमें पीडा हो ॥ १५ ॥

मद्यपानोत्थअजीर्णके लक्षण ।

अजीर्णं मद्यपानोत्थं कुर्याद्दाहमचेतसम् ॥ तृष्णाध्मानमुद्गारं संधिभेदः शिरोरुजम् ॥ १६ ॥

मद्यपानोत्थभ्रमके लक्षण ।

भ्रमो मद्यपानोत्थितः कंठधूमं कफं दाहमुग्रं ज्वरं श्यामजिह्वम्॥ प्रशोषंपिपासांवमिंपार्श्वशूलं गरिष्ठोदरंनीलमोष्ठं प्रकुर्य्यात् १७॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे मदात्ययपरमदाहाजीर्णविभ्रमाणां लक्षणानि ।

अर्थ—मद्यपीनेसे हुआ अजीर्ण वो ये लक्षण करताहै, होश न रहै ऐसा दाहको करे प्यास और पेटका फूलना, तथा डकारका आना, संधिसंधिमें पीडा, मस्तकमें दर्द ॥ १६ ॥ मद्यके पीनेसे हुआ जो भ्रम वो ये लक्षणको करे, कंठसे धुंयेंका निकलना, कफ निकलना, दाह हो, वर, जीभ काली पडजाय, मुखशोष, प्यास, वमन, पसवाडोंमें दर्द या शूल, उदरमें भारीपना, ओठ नीले ॥ १७ ॥ ॥ इति हंसराजार्थबोधिन्यां मदात्ययरोगस्समाप्तः ।

अथोन्मादलक्षणानि ।

विक्षिप्ततामनोवृत्तिर्दोषैर्वातादिभिर्भवेत् ॥ समस्तैर्वासमस्तैर्वा सोन्मादः कथितो बुधैः॥ १ ॥ वार्त्ताया विस्मृतिर्येन गाने गीतस्य विस्मृतिः ॥ शौचाशौचे न जानाति सोन्मादः कथितो बुधैः ॥ २ ॥

उन्मादरोगके लक्षण ।

उन्मादहेतुद्विजदेवतानां संन्यासिनां साधुपतिव्रतानाम्॥आधर्षणं कुत्सितमंत्रसाधनं दुष्टाशुचीनामशनं च पानम् ॥ ३ ॥

अर्थ—उसको पण्डितोंने उन्माद रोग कहाहै. जिसमें समस्त वा न्यून वातादि दोषों करके मनकी वृत्तिमें विक्षिप्तता अर्थात् बावलापना पाया जाय ॥ १ ॥ बात करनेकी विस्मृति, और गानेमें गीतकी विस्मृति जिस करकेहो और शौच भ्रष्टताको जो न जाने उसको पण्डितोंने उन्मादरोग कहा है ॥ २ ॥ ये उन्मादरोग होनेके कारण हैं, ब्राह्मण, देवता, संन्यासी, साधु, पतिव्रतास्त्री इनको दुःख देनेसे और खोटे मंत्रके साधनसे, अपवित्र और दुष्ट पदार्थके भोजनसे वा पीनेसे ॥ ३ ॥

वातोन्मादके लक्षण ।

वातोन्मादगृहीतः क्वचिदपि हसते रोदति क्वापि काले रूक्षांगः शून्यचित्तः परिवदति वचो निष्ठुरं ह्यर्थहीनम् ॥ शीघ्रोत्साहं विधत्ते स्मितचलनयनो गीतनृत्यं करोति स्वांगानां क्षेपणं वा विकलकृशतनुः क्षीणधातुर्मनुष्यः ॥ ४ ॥

पित्तउन्मादके लक्षण ।

पित्तोन्मादनयुक्तः सततजलरुचिर्भोजने दत्तदृष्टीः रक्ताक्षः स्तब्धनेत्रो भ्रमविकलतनुः शुष्ककंठोष्ठतालुः ॥ शीतेच्छामर्मदाहः परिवदति वचो रौत्यमर्षं विधत्ते भक्ष्याभक्ष्यं परेषां परिहरति हठाद्वाग्विवादं करोति ॥ ५ ॥

कफउन्मादके लक्षण ।

कफोन्मादे चिह्नं भवति कृशता छर्द्यरुचयः कफोद्रेकः कंठे मनसि जडतांगे विकलता ॥ गतौजो मूकत्वं श्रुतिबधिरता देहगुरुता वमिर्निद्रालालोरसि कृमिशतं वाक्शिथिलता ॥६॥

अर्थ–वात उन्मादयुक्त मनुष्यके ये लक्षण होते हैं, कभी हंसे, कभी रोवै, रूखा शरीर होजाय, शून्यचित्त, दुष्टवचन बोलै,व्यर्थ बोलै, कभी उत्साहयुक्त हो, कभी स्मितयुक्त, चंचलनेत्र, कभी गीत गावे, कभी नाचनेलगै, कभी अंगोंको चलानेलगै,विकलहो, शरीर कृश, क्षीणधातु ॥ ४ ॥ जलपीने और भोजनकी इच्छा हो, लाल तिरछे नेत्र हों, श्रम और देहमें, बेकली हो, कंठ, तालु, ओठ इनका सूखना, शीतल वस्तुकी इच्छा, मर्ममर्ममें दाह, बुरा बोलै, रोवै,क्रोधयुक्त हो, पराया भोजन, भक्ष्य अभक्ष्यको हठसे लूटले, वाद करने लगे, ये लक्षण पित्तोन्माद युक्तके हैं ॥ ५ ॥ देह कृश, वमन, अरुचि, कफका बढना, कंठमें मनमें जडता, देह विकल, गति और ताकत इनका बंदहोना, गूंगापना, बहिरापना, देह भारी, रद्दहोना, निद्रा आवे और लारका गिरना, पेटमें कृमि पडजायँ, वाणी शिथिल, ये कफके उन्मादके लक्षण हैं ॥ ६ ॥

सन्निपातके उन्मादके लक्षण ।

उन्मादेन त्रिभिर्दोषैर्जातेन ग्रसितो नरः ॥ सोपद्रवैरसाध्योयं कथितो भिषजांवरैः ॥ ७ ॥

औरभी कारण लिखतेहैं ।

चौरैर्नृपेन्द्रैररिभिस्तथान्यैः संत्रासितः क्षीणधनोभिघाती ॥ शोकाभितप्तो मुनिभिः प्रशप्तः संजायते तस्य मनोविकारः ८॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे उन्मादलक्षणम् ।

अर्थ–त्रिदोष उन्माद करके ग्रसागया जो मनुष्य और उपद्रवयुक्त हो वो रोगी असाध्य है, ऐसे श्रेष्ठ वैद्योंने कहाहै ॥ ७ ॥ चोरोंने राजाने वैरियोंने और किसीने इस मनुष्यको त्रास दिखाया हो, और जिसका धन नष्ट होगया हो, चोट लगी हो, शोकयुक्त हो,ऋषि मुनि करके शाप दियागया हो, ऐसे मनुष्यके मनोविकार अर्थात् उन्माद रोग होताहै ॥ ८ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यामुन्मादरोगस्समाप्तिमगमत् ।

अथ भूतोन्मादलक्षणम् ।

ब्रह्मण्यो गुरुदेवपूजनरतो दाता च शुद्धाक्षरःसंतुष्टो मितभुक् सुगन्धिवनिताप्रीतिर्विनिद्रोऽनिशम्॥तेजस्वी बलवान् शुचिर्नयपरोभिज्ञोतिहर्षान्वितो देवोन्मादयुतो नरः स भवति ब्रह्मात्मको ब्रह्मवित् ॥ १ ॥

दैत्य लगेहुये मनुष्यके लक्षण ।

देवब्राह्मणसाधुवैष्णवगवां स्त्रीणां च संन्यासिनां विद्वेषी भय-

दोऽतिनिष्ठुरवचास्तुष्टोन्नपानादिषु ॥ दुष्टात्मा परमर्मभिद्गत-भयः क्रोधी च मानी नरः स्तब्धो गर्वसमन्वितो दनुजयुक् क्रूरो सहिष्णुर्बली ॥ २ ॥

गंधर्व लगाहो उसके लक्षण ।

संचारी विपिने नदीपुलिनयो रम्यस्थले पर्वते हृष्टात्मारुण-कंजचारुनयनो वादित्रगीतप्रियः ॥ तुष्टो नीतिपरायणोतिच-तुरो वाग्मी सुगंधान्वितो गंधर्वग्रहपीडितः सुवचनः स्वाचा-रभुङ्मानवः ॥ ३ ॥

अर्थ–जो ब्राह्मण गुरु देव इनका पूजन कराकरे, दाता हो, शुद्ध बोले, संतुष्ट हो, थोडा-खानेवाला, सुगन्धि और स्त्रीमें प्रीति हो, रातदिन निद्रा न आवै, तेजस्वी हो, बलवान् हो, पवित्र रहै, नीतिके जाननेवालाहो, सर्व बातोंको जाने, हर्षयुक्तहो, ब्रह्मका जाननेवाला, ब्रह्मात्मक ऐसा मनुष्य देवताका उन्मादवाला जानना ॥ १ ॥ जो मनुष्य देव ब्राह्मण साधु वैष्णव गौ स्त्री संन्यासी इनसे वैर करे, इनको भय दे,तथा खोटा बोलै अन्नजलसे जो तुष्ट नहो, दुष्टहो, पराये मर्मका छेदनेवाला हो,निडर हो,क्रोधी हो,मानी हो,स्तब्ध हो,गर्वयुक्त हो,क्रूर हो, सहनशील तथा बली हो, ऐसे मनुष्यको दैत्यकी बाधा जाने॥२॥जो मनुष्य वन नदी पुलिन रमणीकस्थल पर्वत इनमें विचरनेवाला हो, प्रसन्नचित्त, लालकमलकेसे नेत्र हों, बाजा और गीत जिसको प्यारा लगे, तुष्ट हो, नीतियुक्त हो, अतिचतुर हो,शुभ बोलनेवाला हो,सुगंधयुक्तदेह हो, वाग्मी, अपने चित्तमाफिक भोजन करे ऐसे मनुष्यको गंधर्वकी बाधा जाननी ॥ ३ ॥

यक्षग्रस्तके लक्षण ।

गंभीरोल्पवचोऽरुणाम्बरधरो धीरोतिशूरो महान् भो मर्त्याः प्रवदंतु मे झटिति किं दास्यामि कस्मै वरम् ॥ यो यक्षग्रह-पीडितो वदति ना नान्योरुणाक्षोनिशं तेजस्वी बलवान् वरो द्रुतगतिर्वाग्मी सहिष्णुर्भृशम् ॥ ४ ॥

महासर्पआदियुक्तउन्मादके लक्षण ।

क्रोधात्मा भुजगग्रहेण परितो ग्रस्तो हि यो मानवो रक्ताक्षो रुधिरप्रियोतिबलवान्प्रेप्सुः पयःपायसे ॥ शौचाचारबहिर्मुखो विलिहितोऽसृक्सृक्किणीजिह्वया शून्यागाररतः क्वचित्प्रसरतः सर्प्पेव हिंसाप्रियः ॥ ५ ॥

पित्रीश्वरोंके दोषका लक्षण ।

दध्योदने पायसशर्करासु मध्वाज्यमांसेषु च रक्तवस्त्रे ॥
सुगंधपुष्पेष्वतिशीतलोदे पितृग्रहग्रस्तनरोभिलाषी ॥ ६ ॥

अर्थ–जो मनुष्य गंभीर और अल्पवाणीका बोलनेवाला हो लालकपडे पहिने, धीर, अतिशूरहो और जो कहे कि हे मनुष्यो ! मुझसे वर मांगो, क्यादूं, और लाल नेत्र हो, तेजस्वी हो, बलवान् हो, जल्दी चलनेवाला हो, श्रेष्ठ बोलनेवाला, सहनशील, ऐसा मनुष्य यक्षकी बाधायुक्त जानना ॥४॥ क्रोधी हो और रुधिर प्यारा लगे, बली हो, दूध और खीरके भोजनकी इच्छा हो, शौच और आचाररहित हो, बिले सरीखा घर प्यारा लगे, लालनेत्र हों, जीभसे ओठोंके रुधिर लगेको चाटे, शून्यघरमें रहाकरै, कभी पसरजाय, सांपकीसी तरह हिंसा करना प्यारा लगे, ऐसे मनुष्यको भुजंग अर्थात् महासर्पकी बाधा समझनी चाहिये ॥ ५ ॥ दही भात खीर बूरा शहद घी मांस लालवस्त्र सुगंध पुष्प शीतलजल ये पदार्थ जिसको प्यारे हों उस मनुष्यको पित्रीश्वरोंकी बाधा जाननी ॥ ६ ॥

राक्षस लगेहुयेमनुष्यके लक्षण ।

सुरामांसरक्तेषु लिप्सुर्विलज्जो महाक्रोधयुक्तोतिशूरः सहिष्णुः॥
बली निष्ठुरः क्रूरकर्मा विरूपो गृहीतोनिशाचारिभिर्यो मनुष्यः ७

प्रेतग्रस्तके लक्षण ।

भ्रमति रुदिति नित्यं गह्वरारण्यसेवी विलपति किल मूर्च्छामेति कंपं विधत्ते ॥ हसति लिखति भूमिं भक्ष्यपानैरतृप्तो वदति विकलवाणीं प्रेतग्रस्तो मनुष्यः ॥ ८ ॥ बालभीरुस्त्रिया देहे प्रविशंति सुरादयः ॥ शीतादयो यथा काये मन्यंते प्रतिबिम्बवत् ॥ ९ ॥

अर्थ–मद्य मांस रुधिर इनकी इच्छा हो, लज्जारहित, महाक्रोधी, शूर, सहिष्णु, बली, निठुर, क्रूरकर्मका करनेवाला, विरूप, ऐसा मनुष्य राक्षसग्रस्त जानना ॥ ७ ॥ डोलाकरे, नित्य रोयाकरे, पर्वत वनमें रहाकरे, विलापकरे, कभी मूर्च्छासे गिरपडे, काँपे, हँसे, धरतीको लिखे, भोजन और पीनेसे तृप्त न हो, विकलवाणी बोले ऐसा मनुष्य प्रेतग्रस्त जानना ॥ ८ ॥ बालक डरपोंक स्त्री इनके देहमें देवता आदि प्रवेश करतेहैं जैसे शीत घाम देहमें लगे तिसीतरह प्रतिबिंब उनका माळूम होताहै ॥ ९ ॥

विशंति देहे मनुजस्य सर्वतो ग्रहादयः कैरपि दृश्यते न ते ॥
कुर्वंति पीडां महतीं सुदुस्सहां गच्छति शांत्या बलिमंत्रका-

दिभिः ॥ १० ॥ विशंति नरदेहेषु पौर्णमास्यां सुरग्रहाः ॥ संध्ययोर्दानवा दैत्या गंधर्वाश्चाष्टमीद्वयोः ॥ ११ ॥ पितरः कृष्णपक्षे च यक्षा ये प्रतिपत्तिथौ ॥ पंचम्यामुरगा रात्रौ गंधर्वा राक्षसादयः ॥ १२ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे भूतोन्मादलक्षणं संपूर्णम् ।

अर्थ–ग्रहादि संपूर्ण मनुष्यके देहमें प्रवेशकरते किसीको नहीं दीखते और दुस्सह तथा भारी पीडाको करते हैं वे सर्व शांति और बलिदान तथा मंत्रजापसे शांत होते हैं ॥ १० ॥ देवताग्रह मनुष्यके देहमें पौर्णमासीको प्रवेश करते हैं, और असुर दानव पौर्णमासी और अमावास्या इनकी संधिमें प्रवेश करते हैं और गंधर्व दोनों शुक्ल व कृष्ण पक्षकी अष्टमीमें प्रवेश करते हैं ॥ ११ ॥ पितर कृष्ण पक्षमें और यक्ष पडवामें, सर्प पंचमीमें, रात्रिमें राक्षसादिक, चतुर्दशीमें पिशाच ये प्रवेश करते हैं ॥ १२ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां भूतोन्मादलक्षणं सम्पूर्णम् ।

वातअपस्माररोगके लक्षण ।

मासे पक्षे दशाहे प्रकुपितमरुतां संभवो घोररूपो रोगोपस्मारसंज्ञः सपदि स कुरुते पातयित्वा नरांगम् ॥ श्वासं कासं च मूर्च्छां करचरणशिरः क्षेपणं शून्यदेहं दोषोद्रेकं विसंज्ञां कफचयवमने स्वेदशोषांगपीडाः ॥ १ ॥

पित्तकी मृगीरोगके लक्षण ।

पित्तापस्माररोगी पतति भुवि नभः पीतरक्तं च दृष्ट्वा फेनं पीतं कफस्य प्रवमति मुखतः पीतनेत्रास्यकायः ॥ उत्तप्ताक्षो विसंज्ञः क्षिपति करपदः कंपते सप्रसेकः संरंभश्वासमूर्च्छो भ्रमति बहुतरं शुष्कहृत्कंठतालुः ॥ २ ॥

कफकी मृगीरोगके लक्षण ।

श्लेष्मापस्माररोगी वितरति बहुशो हस्तपादप्रकंपं संरंभादर्शयित्वा सपदि सितनभः पातयित्वा मनुष्यम् ॥ शीतांगं शुक्लनेत्रं सितकफनिचयं वक्त्रदेशोद्गिरंतं रोमांचं श्वासशीतं जडतरहृदयं गौरवांगं स्फुरंतम् ॥ ३ ॥

अर्थ—मासमें पक्षमें दशदिनमें कुपित हुआ जो वात सो अपस्मारनाम मृगीरोगको पैदाकर ये लक्षणोंको करताहै मनुष्यको पृथ्वीपर गेरदेता है, और श्वास, खांसी, मूर्च्छा, तथा हाथ पैरोंको इधर उधर पटकना, तथा शिरको पटकना, शून्य देह, दोषोंको बढ़ावे, बेहोशी, कफकी उलटी करै, पसीने, शोष, अङ्गोंमें पीड़ा ॥ १ ॥ पित्तकी मृगीवाला रोगी धरतीमें गिरपडे और आकाशको लाल पीला देखै, और मुखसे पीले झाग कफको गेरे, पीलेनेत्र, पीलाही देह होजाय, नेत्र तप्त हो जायँ, बेहोशी हो, हाथ पैर पटके, कांपे, पसीनेहों, श्वासका बढना, मूर्च्छा, बहुत डोलै, तालु कण्ठ हृदय सूखें, ये पित्तकी मृगी रोगवाला करै ॥ २ ॥ कफकी मृगीरोगवाला मनुष्य ये लक्षणोंको करे, हाथ पैरको कँपावै, जल्दीसे श्वेत आकाशको देख पृथ्वीपर गिरपडे, देह शीतल होजावे, नेत्र सपेद, श्वेतकफको मुखसे गेरे, रोमांचहो, श्वासहो, शरदी लगे, हृदय जकड जावे, शरीरभारी, तथा देह फडके ॥ ३ ॥

सन्निपातकी मृगीरोगके लक्षण ।

वातपित्तकफैर्युक्तश्चिह्नैः सर्वैः समन्वितः ॥ अपस्मारः प्रकुरुते पंचत्वं रोगिणोनिशम् ॥ ४ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे अपस्मारलक्षणम् ।

अर्थ—बादी कफ पित्त तीनों दोषोंके चिह्नों करके युक्त जो मृगीरोगवाला सो मरजावे ॥ ४ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यामपस्माररोगनिदानं समाप्तम् ।

वातव्याधिरोग लक्षण ।

व्यायामेन क्षुधातृषातिकटुकक्षाराम्लरूक्षाशनैः शोकव्याधिविकर्षणातिगमनैरत्यम्बुपानादिकैः ॥ धातोः संक्षयघातपातवनितात्यंतप्रसंगादिभिर्वातः संकुपितः करोति विविधान् रोगान्महादारुणान् ॥ १ ॥ स्रोतांसि सर्वाणि शरीरजानि रिक्तानि धातुप्रवहाणि तानि॥ प्रपूरयित्वातिरुषा शरीरे मर्माणि संतोदति चंडवातः ॥ २ ॥ हृत्पार्श्वोदरबस्तिहस्तचरणग्रीवाशिरः कूजनं नासाकर्णमुखाक्षिदंतरसनागुल्मांत्रसंपीडनम् ॥ कुब्जत्वं बधिरं कृशत्वमरतिं खांज्यं शिरःकंपनमर्द्धांगे जडतां करोति कुपितो वातो महादारुणः ॥ ३ ॥

अर्थ—दण्ड कसरतके करनेसे, क्षुधा तृषाके रोकनेसे, अति कडुआ खारा खट्टा रूखा ऐसे

पदार्थके खानेसे, शोचसे, देहमें रोगके होनेसे, बहुत चलनेसे, बहुत जल पीनेसे, धातुके क्षय होनेसे, घातसे, गिरपडनेसे, स्त्रीके बहुतसङ्ग करनेसे वात कुपित हो मनुष्योंको महादारुण अनेक वातके रोग पैदा करे ॥ १ ॥ जितनी शरीरमें धातुकी बहनेवाली नाडी तिनको वात शुष्क करदे और रोषको प्राप्त हुई जो वात सो सर्व नसोंमें प्रवेश कर प्रचण्ड वात मर्ममर्ममें पीडा करतीहै॥२॥ हृदय पसवाडा पेट बस्ती हाथ पैर नाड शिर इनका गूंजना,नाक कान मुख नेत्र दांत जीभ टकना आंत इनमें पीडा हो,कुबडा होजाय, बहिरा तथा लटजावे,मनका न लगना, खंजापना,शिरका हिलना, अर्द्धाङ्गवायु होजाय तथा बादीसे जकड जाय, ये लक्षण कुपितमहावात करती है॥३॥

सर्वांगेषु गतो मरुद्गुरुतरं शूलं करोति द्रुतं भेदं संधिषु कंपनं करपदामस्थ्नां च संस्फोटनम् ॥ सर्वांगस्फुरणं विनिद्रमनिशं शोकं शरीरे भ्रममाध्मानं कटिपीडनं हृदिरुजं विण्मूत्रयोस्स्तंभनम् ॥ ४ ॥ वातः कुर्यात्कोपितो दंतबंधं जिह्वास्तंभ कर्णयोर्गुंजशब्दम् ॥ नाडीस्तब्धं रक्तवीर्यादिशोषमस्थिस्फोटं देहसंकोचवृद्धीः ॥ ५ ॥ जृम्भोद्गारं च हिक्कां वितरति पवनः पीतवर्णं शरीरं हृल्लासं श्वासकासं मनसि विकलतां छर्द्यतीसारगुल्मम् ॥ अंतर्दाहं विसंज्ञां कृशतनुमरतिं कामलां पांडुरोगमुद्वेगं संधिभेदं व्यथयति सततं सर्वकाये मनुष्यम् ॥ ६ ॥

अर्थ–सर्व अंगोंमें प्राप्त हुई जो वात सो ये लक्षणोंको प्रगट करै प्रबल शूल, संधीनमें पीडा, हाथ पैरोंका कांपना, हड्डी हड्डीका फूटना, सब शरीरका फड़कना, नींदका न आना, सूजन तथा भ्रम, पेटका फूलना, कमरमें पीडा, हृदयमें दुःख, विष्ठा मूत्रका रुकजाना ॥ ४ ॥ कुपित वात दन्तबन्ध जीभका स्तम्भन, कानोंमें गुञ्जारशब्द, नाडियोंका स्तम्भ, रुधिर और वीर्यका सूखना हड्डी हड्डीमें पीडा देहका घटना बढना ये सर्व लक्षण करती है ॥ ५ ॥ जम्भाई, डकार, हिचकी, पीलिया, सूखी रद्द, श्वास, खांसी, मनमें बेकली, उलटी, अतीसार, गोला, भीतरी दाह, बेहोशी, शरीर कृश, मनका न लगना, कामला, शरीरका रंग पीला, उद्वेग सन्धिनमें पीडा, सब शरीरमें व्यथा, ये लक्षण सर्वांगकी पवन करती है ॥ ६ ॥

करोति कुपितोनिलो हलीमकं च गृध्रसीम् ॥ विषूचिकां विलंबिकां प्रलापमंगपीडनम् ॥ ७ ॥

त्वचामें प्राप्तवातका लक्षण ।

त्वग्गतः पवनः कुर्याद्रूक्षत्वं त्वचि कृष्णताम् ॥ कार्कश्यं शून्यतां कार्य्यं वैवर्ण्यं स्फुटितारुजम् ॥ ८ ॥

रुधिरमें प्राप्तवातका लक्षण ।

वातो रक्तगतः कुर्यात् कार्श्यं रुधिरशोषणम् ॥ तीव्रतापं व्रणं गुल्मं खर्ज्जूं दद्रूं विचर्चिकाम् ॥ ९ ॥

अर्थ–कुपितहुई जो वात सो मनुष्यकी देहमें हलीमक, गृध्रसी, विषूचिका, विलंबिका, प्रलाप, अंगोंमें पीडा करतीहै ॥ ७ ॥ त्वचामें प्राप्त पवन शरीर रूखा तथा कालावर्णको करे, कर्कशस्वभाव तथा देहमें शून्यता और कृशपना, विवण तथा देहका फटना, ये लक्षण करतीहै ॥ ८ ॥ रुधिरसे प्राप्त वादी शरीर कृशकरे, रुधिरमात्रको सुखाय देय, तीव्रज्वर करे, फोडा और गोलानको पैदाकरै, खुजली, दाद, खाजको करती है ॥ ९ ॥

मांसमेदोगतवायुके लक्षण ।

मांसमेदोगतो वातो गुर्वंगं कुरुते श्रमम् ॥ स्तब्धांगमरुचिं तापमरतिं रक्तशोषणम् ॥ १० ॥

मज्जास्थिगतवातके लक्षण ।

वातो मज्जास्थिगः कुर्याद्भेदं पर्वास्थिसंधिषु ॥ बलमांसक्षयं शूलं विनिद्रां वीर्यनाशनम् ॥ ११ ॥

शुक्रगतवातके लक्षण ।

शुक्रस्थः पवनः कुर्यादरुचिं त्रिषु पीडनम् ॥ वीर्यशोषं मनस्तापं बलकांतिसुखक्षयम् ॥ १२ ॥

अर्थ–मांस मेदामें प्राप्त वात देहको भारी करै, अनायास श्रमको करै, शरीर जकडजाय, अरुचि, ताप, मनका न लगना, रुधिरका सूखना ॥ १० ॥ मज्जा और हड्डीमें प्राप्त हुई जो वात सो गांठोंमें पीडा, हड्डी और संधिनमें पीडा मांस और बलका क्षय होना, शूल और नींदनाश तथा वीर्यका नाश ये लक्षणोंको करै ॥ ११ ॥ शुक्रमें प्राप्तहुई वात सो अरुचि, मन, वाणी, देह इनमें पीडा, वीर्यका शोष, मनमें ताप, बल कान्ति सुखका नाश ये लक्षणोंको करै॥ १२॥

नाडीगतवातके लक्षण ।

वातः शिरागतः कुर्यात्कुब्जं खांज्यं महारुजम् ॥ शिरासंकोचं स्तब्धत्वं बधिरं वमनं कृशम् ॥ १३ ॥

कोष्ठगतवातके लक्षण ।

कोष्ठस्थानगतो वातः कुरुते मूत्रबंधनम् ॥ शूलाध्मानमुदावर्तं गुल्माशांसि भगंदरम् ॥ १४ ॥

सर्वांगगतवातके लक्षण ।

सर्वांगस्थोपि कुपितः पवनो विविधा रुजः ॥ कुरुते वर्द्धते सर्वान् बाह्याभ्यंतरपीडकान् ॥ १५ ॥

अर्थ—नाडीगत वातरोग ये लक्षणोंको करै, कुबडापना, खंजापना, नाडीनका सुकडना, तथा जडता, बहिरापना, बौनापना और कृश ॥ १३ ॥ कोष्ठमें प्राप्तभई जो वात सो मूत्रबन्धको करै, शूल और अफराको करै, उदावर्त, गोला, बवासीर, भगंदर इनको करती है ॥ १४ ॥ सर्वांगमें प्राप्तभई पवन सो तरहतरहके रोगोंको पैदा करतीहै, और सर्वांगमें कुपित वात बाहरके रोगोंको तथा भीतरके रोगोंको बढातीहै ॥ १५ ॥

सन्धिनमें स्थितवातके लक्षण ।

संधिस्थः पवनः कुर्यात् शोफं शूलं च दारुणम् ॥ सधीन्विस्फोटयेत्सद्यः स च कर्षति वर्द्धते ॥ १६ ॥ वायवः पंच देहस्था हेतवः सुखदुःखयोः ॥ स्वस्थाने सुखदाः सर्वे परस्थानेषु दुःखदाः ॥ १७ ॥

पंचवातके अलगअलग लक्षण ।

प्राणो वायुर्वसति हृदयेऽपानसंज्ञो गुदांते नाभेश्चक्रे भ्रमति परितो जीवभूतः समानः ॥ कण्ठस्थाने चलति पवनो योह्निरात्रावुदानः सर्वांगेषु प्रसरति मरुद्व्यानसंज्ञो नितांतम् ॥ १८ ॥

अर्थ—संधियोंमें प्राप्त वात सूजन और दारुणशूल, संधिनमें पीडा और सुखावै तथा बढावै ॥ १६ ॥ पांच वात देहमें सुखदुःखकी देनेवाली रहती हैं । यदि वो अपने स्थानपर रहें तो सुखदायक और दूसरेके स्थानपर जानेसे दुःखदायक होती हैं ॥ १७ ॥ १ प्राणवात हृदयमें रहतीहै, २ अपानवायु गुदामें रहतीहै, ३ जीवभूत समानवायु नाभिचक्रमें रहतीहै और ४ रात दिनकी बहनेवाली उदानवायु कंठमें रहती है और ५ सब देहमें रहनेवाली व्यानवायु है ॥ १८ ॥

पित्तान्वितप्राणवातके लक्षण ।

प्राणः पित्तान्वितः कुर्य्यादूष्माणं चित्तविभ्रमम् ॥ तृष्णां शूलं च हृल्लासं हिक्कां छर्दिं च दुस्सहाम् ॥ १९ ॥

कफान्वितप्राणवातके लक्षण ।

प्राणः कफावृतः कुर्याद्दौर्बल्यालस्यसादनम् ॥ वैरस्यमरुचिं तंद्रामुत्क्लेदं दोषसंचयम् ॥ २० ॥

पित्तकफयुक्तउदानवातके लक्षण ।

उदानः पित्तयुक् कुर्य्यान्मूर्च्छां दाहं भ्रमं क्लमम् ॥ कफान्वितोतिमंदाग्निं शीतं हर्षं च कंपनम् ॥ २१ ॥

अर्थ–पित्तसंयुक्त प्राणपवन देहमें गरमीको करै तथा चित्तभ्रम, प्यास, शूल, सूखीरद, हिचकी, वमन ये लक्षणोंको करै ॥ १९ ॥ कफसंयुक्त प्राणवात ये लक्षण करतीहै दुर्बलता, आलस्यका स्थान, विरसता, अरुचि, तंद्रा, उकलाहट ,दोषके समूहको बढातीहै ॥ २० ॥ पित्तके साथ मिली जो उदानवायु सो ये लक्षण करै मूर्च्छा, दाह, भ्रम, ग्लानि, और उदानवायु कफके साथ मिलीहो तो मंदाग्नि, शीत, हर्ष, तथा कंपको करती है ॥ २१ ॥

पित्तकफयुक्तसमानवातके लक्षण ।

समानपित्तयुक्तृष्णां मूर्च्छामूष्माणमेव च ॥ कुर्यात्कफान्वितो हर्षं विण्मूत्रं रोमहर्षणम् ॥ २२ ॥

पित्तयुक्तअपानवातके लक्षण ।

अपानः पित्तयुक्कुर्य्यात् रक्तातीसारमुल्बणम् ॥ ऊष्माणमरतिं दाहमर्शांसि च भगंदरम् ॥ २३ ॥

कफयुक्त अपानवातके लक्षण ।

कफयुक्तो यदापानो गुदांते कृमिसंचयम् ॥ कुरुते गुरुतां मूत्रमालस्यं बलनाशनम् ॥ २४ ॥

अर्थ–समानवायु पित्तके साथ मिली हुई तृष्णा, मूर्च्छा, गरमीको करतीहै, इसीतरह कफयुक्त समानवायु हर्ष, विष्ठा मूत्रका रुकना, रोमांचको करतीहै ॥ २२ ॥ अपानवायु पित्तके संयुक्त ये लक्षण करतीहै–रक्तातीसार, गरमी, मनका कहीं न लगना, दाह, बवासीर, भगंदर ॥ २३ ॥ कफयुक्त अपानवायु गुदामें कृमिरोग करे, शरीर भारी, बहुत मूत्रका होना, आलस्य, बलका नाश ये लक्षणोंको करै ॥ २४ ॥

पित्तकफयुक्तव्यानवातके लक्षण ।

व्यानः पित्तान्वितः कुर्य्यादंगविक्षेपणक्लमम् ॥ दंडकं स्तम्भनं दाहं शोफं शूलं कफान्वितः ॥ २५ ॥ नाडीं यदा समभ्येत्य कुपितः पवनो बली ॥ देहविक्षेपणं कुर्य्याच्छिरःकंपं करोति च ॥ २६ ॥ यदा संकुपितो वातो नानाहेतुभिरूर्ध्वगः ॥ तदा संकुरुते दोषं हृच्छिरःशंखपीडनम् ॥ २७ ॥

अर्थ—व्यानवायु पित्तके साथ मिलीहुई अंगोंको पटकतीहै, ग्लानिको करतीहै, उपताप, स्तंभ, दाह, सूजन, शूल ये व्यानवायु कफसंयुक्त करतीहै ॥ २५ ॥ वली पवन कुपितनाडीनमें प्राप्तहो शरीरका इधर उधर पटकना, करती है—और शिर कंपको करतीहै ॥ २६ ॥ जब वादी नाना हेतूनसे कुपित उपजती है तब हृदयमें मस्तकमें कनपटीमें पीडा करती है और अनेकदोषोंको करती है ॥ २७ ॥

गत्वोर्ध्वं स्वगृहात्करोति पवनो देहं च कोदंडवत् कंठः कूजति कोकिलेव सततं गात्रं मुहुःक्षेपणम् ॥ स्तब्धत्वं नयनद्वयोर्वितनुते शोषं मुखे वक्रिमां श्वासं कासमन्वितं च जठरे शूलं तृषां संभ्रमम् ॥ २८ ॥

पित्तयुक्तवातके लक्षण ।

दाहं पित्तान्वितः कुर्य्यात्तृष्णां छर्दिं शिरोव्यथाम् ॥ हृल्लासं हृदयग्रंथिं हिक्कां कंठहनुग्रहम् ॥ २९ ॥

कफयुक्तवातके लक्षण ।

कफान्वितो वमिं कुर्य्यात्तंद्रां निद्रांगगौरवम् ॥ जाड्यं शैत्यं सरोमांचं क्षवं शोफं च वेपथुम् ॥ ३० ॥

अर्थ—अपने स्थानसे ऊपरको चढी हुई वात मनुष्यके देहको धनुषकी तरह बांका करदे, और कंठ कोकिलाकी बतौर बोले, तथा शरीरको इधर उधर पटके, दोनों नेत्रोंका स्तब्धत्वहो, मुखका सूखना, तथा मुख टेढा होजाय, श्वास, खांसीके साथ पेटमें दर्दहो, और प्यास तथा भ्रमहो ॥ २८ ॥ पित्तयुक्त वात दाह करै, प्यास, और वमनको करै, शिरमें दर्द, सूखीरद, हृदयमें गांठ, हिचकी, कंठमें हनुग्रह, इन रोगोंको करै ॥ २९ ॥ कफयुक्त वात वमन, तन्द्रा, निद्रा, देह भारी, जडता, शीत लगना, रोमांच, छींक, सूजन, कंप ये रोग करती है ॥ ३० ॥

कफपित्तयुक्तवातके लक्षण ।

कफपित्तान्वितो वायुः पक्षाघातं कटिग्रहम् ॥ कुब्जं खंजं शिरःकंपमंगभंगं प्रपीडनम् ॥ ३१ ॥

अधोभागमें प्राप्तवातके लक्षण ।

गत्वाऽधः कुपितः करोति मरुतोरुस्तंभनं कुंडलं शूलाध्मानविलंबिकां गुदरवं गुल्मोपदंशं भृशम् ॥ शूकार्शांसि भगंदरं कटिरुजं विण्मूत्रयोस्स्तम्भनं जंघोरूगुदशिश्नयोनिवृषणानां

पीडनं दण्डकम् ॥ ३२ ॥ हेतुभिः कुपितो वातो ह्यतिकोपोन्यदोषयुक् ॥ महाकोपस्त्रिदोषाभ्यां स वै भवति रोगदः ॥ ३३॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे वातव्याधिलक्षणम् ।

अर्थ–कफ पित्त मिली हुई वात पक्षाघात, कमरमें दर्द, कुवडापना, खंज व शिरका हिलना, अंगभंग और पीडा करती है ॥ ३१ ॥ नीचेके भागमें प्राप्त हुई जो पवन सो ऊरुस्तंभ, कुंडलीरोग, शूल, अफरा, विलंबिका, गुदामें शब्द, पेटमें गोला, उपदंश, शूकरोग, बवासीर, भगन्दर, कमरमें दर्द, दस्तपेशाबका रुकजाना, जंघा, ऊरू,[१] लिंगेन्द्री, योनि, अंडकोश इनमें दर्द, तथा दंडकरोग इनको करती है ॥ ३२ ॥ अपने हेतूनसे कुपित वातरोग करती है, और दोषके मिलनेसे अति कोपको प्राप्त होती है, और त्रिदोषसे महाकोपको प्राप्त होती है तब बराबर रोग करती है ॥ ३३ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां वातव्याधिरोगनिदानं सम्पूर्णम् ।

अथ वातरक्तरोगनिदानम् ।

तत्रादौ वातरक्तरोगोत्पत्तिः ।

रूक्षोष्णाम्लकषायतीक्ष्णकटुकस्निग्धाशनैर्भूयसः निष्पावांसकुलत्थशाकमधुरक्षारान्नपित्ताशनैः॥तक्राम्लासववारुणीदधिपयःपानैर्निशाजागरैः प्रायः कुप्यति वातरक्तमपरैर्व्यायामशोकादिभिः ॥ १ ॥ विरुद्धदुष्टाशुचिपानभोजनैर्जलावगाहैर्वनितातिसंगमैः ॥ रात्रौ दिवा जागरणैः प्रधर्षितो रक्तप्रकोपं कुरुते मरुत्तदा ॥ २ ॥ स्रोतांसि रक्तप्रवहाणि रुद्ध्वा करोति वातो रुधिरं च कृष्णम् ॥ रोषात्तथा शोणितमुच्छलंति समस्तरोगान्वितनोति नूनम् ॥ ३ ॥

अर्थ–रूखा, गरम, खट्टा, कसेला, तीखा, कडुआ, चिकना भोजन करनेसे, निष्पाव तथा मांस कुलथी शाकमीठा खारमिला और पित्तकी करनेवाली वस्तुके खानेसे छांछ, आम्र, आसव, मद्य, दही दूधके पीनेसे, रातमें जागनेसे, दंड कसरतके करनेसे, शोचसे, वातरक्त कोपको प्राप्त होता है ॥ १ ॥ विरुद्ध दुष्ट अपवित्र वस्तुके पीनेसे, तथा खानेसे, स्नानसे, बहुत स्त्रीसंगसे, रातदिनके जागनेसे और डरनेसे वात रक्त रोग पैदा होता है ॥ २ ॥ रुधि-

---

१ जो मूत्राघातमें कहा है ।

रकी बहनेवाली नाडीनके मार्गको रोककर वात रुधिरको कालारंगका करदेवे, फिर क्रोधको प्राप्त हुआ जो रुधिर सो देहके बाहर तथा भीतर अनेक रोगोंको पैदा करै ॥ ३ ॥

करोत्यालसं मंडलं वारतक्तं शरीरं विवर्णं रुजं रूक्षगात्रम् ॥
भ्रमं मूत्रकृच्छ्रं क्लमं मर्मतोदं ज्वरं वेपथुत्वं शिरःपीडनं तत्॥४॥

पित्तान्वितवातरक्तके लक्षण ।

करोत्येव पित्तान्वितं वातरक्तं मुदं दाहसम्मोहतृष्णांगशोषम् ॥
भ्रमोष्मारतिश्छर्दिस्वेदांगतोदं कटुत्वं मुखे शोफमूर्च्छां विनिद्रम् ५

कफयुक्तवातरक्तलक्षण ।

कफेनान्वितं वातरक्तं गुरुत्वं करोत्यालसं मंडलं रक्तपीतम् ॥
वमिं मंदचेष्टेंद्रियेषु प्रलापं शरीरेति पामां कृशत्वं क्षवत्वम् ॥६॥

अर्थ–वातयुक्त वातरक्त आलकस, कालेकाले देहमें चकत्ता, तथा शरीरका विवर्ण, रूखा देहकरदे, पीडा हो, भ्रम, मूत्रकृच्छ्र, ग्लानि, मर्ममर्ममें पीडा, ज्वर, कंप, शिरमें पीडा ॥ ४ ॥ पित्तान्वित जो वातरक्त सो मस्तपना, दाह, मोह, प्यास, अंगशोष, भ्रम, गरमी मनका डमाडोलपना, वमन, पसीनेका आना, अंगोंमें पीडा, मुख कडुआ, सूजन, मूर्च्छा, निद्राका नाश ये लक्षणोंको करता है ॥ ५ ॥ कफयुक्त वातरक्त देह भारी करै, आलकस, देहमें लालपीले चकत्ते करे, वमन, इंद्रियोंकी मंदचेष्टा होना, बकना, देहमें खाज, तथा देह कृश और छींकका आना ये लक्षणोंको करै ॥ ६ ॥

पांगुल्यं च विसर्पिकारुचिमदा मूर्च्छांगुलीवक्रता हिक्कादाहप्रवेपिका भ्रमतृषाश्वासक्लमः स्फोटता ॥ कासो मोहशरीरशोषमधिकं मर्मग्रहश्चार्बुदः संप्रोक्तास्समुपद्रवा मुनिवरैस्ते वातरक्तेऽहिताः ॥ ७ ॥ सोपद्रवं त्याज्यतम भिषग्भिर्द्विदोषजं कष्टतरेण साध्यम् ॥ जपेन दानेन शिवार्चनेन यत्नौषधीभिर्नंनु वातरक्तम् ॥ ८ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे वातरक्तलक्षणम् ।

अर्थ–पांगुरा, विसर्परोग, अरुचि, मद, मूर्च्छा, उंगली टेढी हो जाय, हिचकी, दाह, कंप भ्रम, प्यास, श्वास, ग्लानि, शरीरका फटना, खांसी, मोह, देहमें शोष, मर्मस्थानोंमें पीडा, अर्बुदरोग ये वातरक्त रोगके उपद्रव मुनीश्वरोंने असाध्य कहे हैं ॥ ७ ॥ वैद्योंकरके

उपद्रवके साथ जो वातरक्त सो त्याज्य है, और दो दोषसे पैदा हुआ जो वातरक्त सो कष्टसाध्य है वो जप दान शिवपूजन और इलाज औषधी करके अच्छा हो ॥ ८ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां वातरक्तनिदानं सम्पूर्णम् ।

अथ ऊरुस्तम्भनिदानम् ।

नीत्वाधः कुपितो वातः सञ्चयं श्लेष्ममेदयोः ॥ जंघोरुसक्थिगुल्फेषु पूरित्वा स्तम्भयेद्गतिम् ॥ १ ॥ जघोर्वौ श्लेष्ममेदाभ्यां सम्पूर्णौ भवतो बलौ ॥ ऊरुस्तम्भः स विज्ञेयो भिषग्भिः प्राकृतैर्भृशम् ॥ २ ॥

ऊरुस्तम्भलक्षण ।

ऊरुस्तम्भेति पीडा भवति चरणयो रोमहर्षो जडत्वं शीतं सर्वाङ्गकम्पो वयसि शिथिलता छर्दिनिद्राकृशत्वम् ॥ कृच्छ्रान्न्यासम्पदानामरुचिरतिवमिर्मन्दवह्निर्गुरुत्वं चिह्नान्येतानि नूनं मुनिगणवचनात्कीर्तिता हंसराजैः ॥ ३ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे ऊरुस्तम्भलक्षणम् ।

अर्थ–कोपको प्राप्त हुई जो वात सो कफ और मेदाके समूहको नीचे ले जायकर जांघ ऊरु जानू टकना इनमें व्याप्त करके चलनेकी शक्तिको स्तम्भन करदे, उसे ऊरुस्तंभरोग कहते हैं ॥ १ ॥ जांघ ऊरू जब कफ और चर्बीसे परिपूर्ण हो जाय और चला न जावे उसको वैद्योंने ऊरुस्तम्भ रोग कहाहै ॥ २ ॥ ऊरुस्तम्भ रोगमें ये लक्षण होते हैं दोनों पैरोंमें पीडा, रोमांच, जडत्व, शीतका लगना, सर्व देहमें कंप, अंगोंमें शिथिलता, रद्द, निद्रा, कृशता, पैरोंका कठिनतासे उठना, अरुचि, मनका न लगना, वमन, मन्दाग्नि, देहभारी, ये ऊरुस्तंभ रोगके लक्षण मुनीश्वरोंके वचनके अनुसार हंसराज कविने कहेहैं ॥ ३ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां ऊरुस्तम्भरोगनिदानं सम्पूर्णम् ।

अथामवातलक्षणम् ।

व्यायाममंदाग्निविरुद्धभोजनैः स्निग्धाशनेनातिविहारचेष्टया॥ रात्रौ दिवाजागरणेन कोपितः श्लेष्मस्थले ह्यामचयं नयेन्मरुत् ॥ १ ॥ आमान्नस्य रसो पक्वो मरुता क्रियते पुनः ॥ दूषितः कफपित्ताभ्यां नाडीभिः पीयतेनिशम् ॥ २ ॥ आमसंज्ञः स

एवायं यो जीर्णजनितो रसः ॥ रोगाणामाश्रयो घोरः स्रोतांसि तुदते भृशम् ॥ ३ ॥

अर्थ–तीन श्लोक करिके प्रथम आमरोगकी उत्पत्ति लिखते हैं दंड कसरतके न करनेसे, विरुद्ध भोजनसे, चिकने पदार्थ खानेसे, अत्यन्त स्त्रीआदि सेवन करनेसे, रातदिन जागनेसे, कोपको प्राप्त हुई जो वात सो कफके स्थानमें आमके समूहको प्राप्त करती है ॥ १ ॥ अन्नका जो रस विनापका उसको वात दूषित करै तथा पित्त कफ कर दूषित भया हो उसको नाडी पीती है ॥ २ ॥ उसी अजीर्णसे पैदा हुये रसको आमरोग घोररोगोंका आश्रय करते हैं और यह आम नाडीके मार्गोंको रोक देती है ॥ ३ ॥

वातजन्यआमरोगके लक्षण ।

आमो रुग्विदधाति शोफमधिकं संकोपितो वायुना जंघोरूकरसन्धिपादवृषणस्कन्धास्यनेत्रेषु च ॥ मांसास्थित्रिककुञ्चनञ्च हृदये कम्पं ज्वरं शोषणं स्तब्धांगं वितनोति दारुणभयं पाकं तृषां शून्यताम् ॥ ४ ॥

पित्तसे कुपितआमलक्षण ।

आमः संकुरुते रुषांगमरुणं पित्तेन संकोपितः शीर्षे संधिषु पीडनं कटिरुजं सर्वांगदाह ज्वरम् ॥ मूर्च्छा संभ्रमशोषणं च हृदये शूल महादारुणं बन्धं मूत्रपुरीषयोर्नयनयोःपीतत्वमार्ति तृषाम्॥५॥आमः श्लेष्मयुतः करोति जडतां निद्रां गुरुत्वन्तनौ ह्यालस्यं बहुमूत्रताञ्च गलके संकूजनं शीतताम् ॥ दौर्बल्यं मुखपादहस्तवृषणे शोषङ्गतेस्स्तम्भनं वीर्यौजोरुचितेजसां बलधियां नाशं प्रसेकं क्लमम् ॥ ६ ॥

अर्थ–वादीसे कुपित आमरोग जांघ ऊरू हाथ तथा देहकी संधी पैर अंडकोश कंधेनमें मुख तथा नेत्रोंमें सूजन करदे, मांस हड्डी त्रिक कहिये मकड इनका घटना, हृदयमें कंप, ज्वर, शोष, देहका जकडजाना, घोरभय, तथा देहका पकना, और प्यास और देहमें शून्यता ये लक्षण करती है ॥ ४ ॥ पित्तसे कुपित जो आमरोग सो देहको लाल करदे, मस्तक तथा संधीनमें दर्द, सब देहमें दाह, तथा ज्वर, मूर्च्छा, भ्रम, शोष, हृदयमें महादारुण शूल, मूत्रपुरीषका रुकना, नेत्र पीले, प्यास और खेद ये लक्षण करता है ॥ ५ ॥ कफयुक्त आमरोगके ये लक्षण हैं शरीर जकडजाय, निद्रा, देहभारी, आलकस, पेशाब ज्यादा उतरे, गलेका गूँजना, जाडा

लगे, दुर्बलपना, मुख हाथ पैर अंडकोश इनमें सूजन, गतिका रुकना, वीर्य, ताकत, रुचि, तेज, बल, बुद्धि इनका नाश, लारका गिरना, ग्लानी ॥ ६ ॥

आमस्त्रिदोषजोऽसाध्यः कष्टसाध्यो द्विदोषजः ॥ दोषैकसंयुतः साध्यः सुखेनैव भिषग्वरैः ॥७॥ त्रिदोषजनितैः सर्वैर्लक्षणैर्लक्षितो हि यः॥ सन्निपातः स विज्ञेयो द्विदोषो हि द्विदोषजैः८

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे आमवातलक्षणम् ।

अर्थ–त्रिदोषसे पैदा हुआ आमरोग असाध्य है, और दोदोषोंसे जो हुआ सो कष्टसाध्य है, और एक दोषयुक्त साध्य है ऐसे सुषेणादि वैद्योंने कहा है ॥ ७ ॥ जिसमें त्रिदोषके सब लक्षण मिलते हों उसको सन्निपातका आमवातरोग कहते हैं और जिसमें दोदोषोंके चिह्न हों उसे द्विदोषज कहते हैं ॥ ८ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां आमवातलक्षणं सम्पूर्णम् ।

अथ परिणामनिदानम् ।

अथ परिणामशूललक्षणम् ।

विण्मूत्ररोधाद्विषमासनस्थाच्छीतांबुपानात्पवनस्य रोधात् ॥ अत्युच्चभाषादतिभक्ष्यपानाद्रूक्षाशनात्कुत्सितयानरूढात् १॥ अपक्वपिष्टान्नविरुद्धभक्षणात्कषायतिक्ताशुचिदुष्टभोजनात् ॥ दिवानिशं जागरणाद्विलंघनात्करोति शूलं पवनो रुषान्वितः ॥ २ ॥ नाभिमूले गुदे बस्तौ योनौ पार्श्वे त्रिकेस्थिषु ॥ शूलं वातकृतं ज्ञेयं भिषग्भिर्नात्र संशयः ॥ ३ ॥

अर्थ–विष्ठामूत्रके रोकनेसे, खोटी सवारीपर बैठनेसे, शीतलजल पीनेसे, पवनके वेग रोकनेसे, ऊंचे बोलनेसे, अत्यंत भोजन और पानसे तथा रूखे पदार्थके भोजनसे यह शूलरोग होता है ॥ १ ॥ विना पका पिसाहुआ ऐसे अन्नके खानेसे, विरुद्ध भोजनसे, कसेला तीखा अपवित्र दुष्टभोजनसे, दिनरातके जागनेसे, लंघन करनेसे, रोषको प्राप्त हुई जो पवन सो शूलरोगको पैदा करती है ॥ २ ॥ नाभिमूलमें गुदामें मूत्रस्थानमें योनिमें पसवाडोंमें त्रिकस्थानमें हाडोंमें वादीका शूल वैद्य जानै इसमें सन्देह नहीं ॥ ३ ॥

वादीके शूलके लक्षण ।

शूलं वातोद्भवं कुर्यात्प्रभातेंगविमर्दनम् ॥ विण्मूत्रबंधनं हिक्काध्मानोद्गारस्तब्धताः ॥ ४ ॥

पित्तके शूलके लक्षण ।

तीक्ष्णोष्णपिण्याकविदाहिपूगैस्तैलाम्लनिष्पाकटुसूर्यतापैः ॥ व्यायामसौवीरसुराविकारैः प्रबुद्धपित्तं कुरुते हि शूलम्॥५॥ पित्तोद्भवं शूलमतीव रौद्रं मध्यंदिने कुप्यति चार्द्धरात्रौ ॥ करोति मूर्च्छां भ्रमदाहमोहतृट्स्वेदमार्त्तिज्वरमुग्रशीतम् ॥६॥

अर्थ–प्रातःकाल शरीरका टूटना, दस्त और पेशाबका बन्द होना, हिचकी, पेटका फूलना, डकारका आना, जडता ये वातशूलके लक्षण हैं ॥ ४ ॥ तीक्ष्ण गरम पिण्याक दाहकरनेवाली वस्तु, सुपारी, तेल, खट्टा, निष्पाव, कटु, सूर्य्यकी घाममें डोलनेसे, दंड कसरतके करनेसे, कांजीके पीनेसे, मद्यके विकारसे, कोपको प्राप्त हुआ जो पित्त सो शूलरोगको करता है ॥ ५ ॥ पित्तसे पैदा हुआ घोरशूल सो मध्याह्न और अर्द्धरात्रमें कोप करता है, और मूर्च्छा, भौंर, दाह, बेहोशी, प्यास, पसीने, खेद, घोरज्वर और शीत ये करै है ॥ ६ ॥

कुक्षौ सजठरे पार्श्वे शूलं पित्तसमुद्भवम् ॥ सोष्माणं दारुणं ज्ञेयं वैद्यैराधुनिकैर्ध्रुवम् ॥ ७ ॥

कफके शूलका लक्षण ।

मध्वाज्यमासैर्मधुराम्लतक्रैर्वृन्ताकशीतोदकदुग्धपानैः ॥ माषेक्षुमज्जातिलतैलशीतैः श्लेष्मा प्रवृद्धः कुरुते हि शूलम् ॥ ८ ॥ वक्षःस्थलभवं शूलं कफान्तस्य समुद्भवम् ॥ वमनेन शमं याति संध्ययोर्बलवत्तरम् ॥ ९ ॥

अर्थ–कूख पेट पसवाडोंमें पित्तका शूल होता है, और दारुण गरमी ये लक्षण अबके वैद्योंने कहेहैं ॥ ७ ॥ सहत, घी, मांस, मीठा, खट्टा, छांछ, बैंगन, शीतलजल, दूध इनके सेवनसे, उडद, ईख, चरबी, तिल, तेल शरदीसे कुपित हुआ जो कफ सो शूलरोग पैदा करताहै ॥ ८ ॥ कफसे पैदा हुआ जो शूल सो वक्षस्थल तथा सन्धियोंमें बढता है, यह वमनके करानेसे आराम हो ॥ ९ ॥

शूलं कफात्म्यं कुरुते प्रसेकं तंद्रालसं गौरवतां प्रकंपम् ॥ हृल्लासकासारुचिच्छर्दिदाहं कंठेऽतिपीडा स्तिमितांगशीतम् ॥१०॥

वातकफशूलके लक्षण ।

पार्श्वेषु बस्तौ हृदये च शूलं वदंति वैद्याः कफवातजातम् ॥ पित्तानिलाभ्यां जनितं सदाहं कुक्षिद्वये तद्धृदये प्रपीडयेत्॥११॥

शूलरोगकी उत्पत्ति।

चंडीशशस्त्रं कफपित्तसम्भवं जानीहि तं त्वं हृदयोदरस्थम् ॥
रूपाणि स्वं स्वं कुरुते स्वकाले दोषैः समस्तैः प्रभवं त्यजेत्तम् १२

अर्थ–कफसे पैदा हुआ जो शूल, पसीना, तंद्रा, आलकस, देहभारी, कंप, सूखी, रद, खांसी, अरुचि, वमन, दाह, कंठमें पीडा, मंद जाडा लगे, ये लक्षण करै ॥ १० ॥ जिसमें ये लक्षण हों उसको वात कफका शूल वैद्य कहते हैं, पसवाडोंमें मूत्रस्थानमें हृदयमें शूल हो, वातपित्तजनित शूल लक्षण–और जिसमें दाह हो, कूखमें और हृदयमें पीडा हो उसे वात पित्तका शूल रोग जानै ॥ ११ ॥ श्रीमहादेवके शूलसे तथा कफपित्तसे पैदा हुआ शूल सो हृदयमें पेटमें अपना अनेक तरहका रूप धारण करै, और सब दोषोंसे पैदा हो ऐसा शूलवान् रोगीको वैद्य त्याग दे ॥ १२ ॥

शूलका असाध्यलक्षण।

वायुः संनिहितश्च पित्तकफयोः स्थानं समावर्त्तयेद्यः शूलं कुरुते तदेवमपरं भुंक्तेऽतिशांतिं व्रजेत् ॥ तच्छूलं परिणामजं मुनिवरैः प्रोक्तं च दोषान्वितं ज्ञेयं प्राक्कथितैर्नरैः कफमरुत्पित्तोद्भवैर्लक्षणैः ॥ १३ ॥ सोपद्रवं त्रिदोषोत्थमसाध्यं कथितं बुधैः॥ कष्टसाध्यं द्विदोषोत्थं सुखेन निरुपद्रवम् ॥ १४ ॥

शूलके दशउपद्रवके भेद।

तंद्रा मूर्च्छा ज्वरो दाहः श्वासः कासोऽतिवेदना ॥
हिक्काङ्गगौरवं छर्दिः शूलस्योपद्रवा दश ॥ १५ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे परिणामशूललक्षणं सम्पूर्णम्।

अर्थ–जिसमें ये लक्षण हों उसे परिणाम शूल जानना जो बादीसे युक्त और पित्त कफके स्थानमें प्राप्त होकर पीछे दर्दको करै, और दूसरा खानेसे शांति हो और त्रिदोषयुक्त हो उसे मुनीश्वरोंने तथा प्राचीन वैद्योंने असाध्य कहाहै ॥ १३ ॥ जो उपद्रवके साथ हो और सन्निपातसे पैदा हुआ हो वो शूलरोग असाध्य है ऐसा वैद्योंने कहाहै और जो दो दोषोंसे पैदा हुआ हो वो शूल कष्टसाध्य है और जो उपद्रव रहित हो वो सुखसाध्य है ॥ १४ ॥ १ तंद्रा, २ मूर्च्छा, ३ ज्वर, ४ दाह, ५ श्वास, ६ खांसी, ७ अतिदुःख, ८ हिचकी, ९ देहभारी और १० वमन ये शूलरोगके दश उपद्रव हैं ॥ १५ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां शूलरोगनिदानं समाप्तम्।

अथ अनाहउदावर्तरोगनिदानं तस्योत्पत्तिः ।

पुरीषमूत्रानिलवेगरोधादनाहरोगः किल मर्मभेत्ता ॥ संजायतेऽसौ कुरुते विकारान् वातामयान् वैद्यवरा वदन्ति ॥ १ ॥ अपानवातसंरोधादूर्ध्ववातगतिर्भवेत् ॥ अनाहोऽसौ परैः प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्ववादिभिः ॥ २ ॥ हिक्काश्वासवम्युद्गारक्षुत्तृष्णायावरोधनात् ॥ उदावर्त्तो भवेद्रोगो वातवृद्धिप्रवर्त्तकः ॥ ३ ॥

अर्थ–दस्त, पेशाब, अधोवायु इनके रोकनेसे मर्ममर्ममें पीडाका करनेवाला अनाह रोग होताहै, और बादीके विकारको करताहै ऐसे वैद्य कहते हैं ॥ १ ॥ अधोवायुके रोकनेसे ऊपरलेमाग होकर वायुकी गति होती है, ईसीको अनाहरोग तत्त्ववादी ऋषियोंने कहा है ॥ २ ॥ हिचकी, श्वास, वमन, डकार, भूँख, प्यास, इनके रोकनेसे वातको बढानेवाला उदावर्त रोग पैदा होता है ॥ ३ ॥

अधोवात रोकनेसे पैदा उदावर्तके लक्षण ।

अपानवातसंरोधाद्वातविण्मूत्रसंगमः ॥ शूलं क्लमो रुजाध्मानः पीडाटोपो मरुद्भ्रमी ॥ ४ ॥

विष्ठाके वेग रोकनेके लक्षण ।

विड्वेगे निहते पुंसो वातशूलं गुदे रुजम् ॥ जठरे वातजा ग्रंथिः पीडाबस्तौ भवेद्भृशम् ॥ ५ ॥

मूत्रके रोकनेसे हुये उदावर्तके लक्षण ।

मूत्रस्य रोधनात्पुंसो मूत्रकृच्छ्रं शिरोव्यथा ॥ बस्तिमेहनयोः शूलमानाहोयमिति स्मृतः ॥ ६ ॥

अर्थ–अधोवायु रोकनेसे विष्ठा मूत्र आपसमें मिलकर शूल, ग्लानि, खेद, अफरा, दुःखका आटोप, याने समूह, पवनका मंद चलना भौंर, ये रोग होते हैं ॥ ४ ॥ विष्ठाके वेग रोकनेसे मनुष्यके वादीसे दर्द हो, गुदामें पीडा हो पेटमें वादीसे गोला हो, और मूत्रस्थानमें पीडा हो॥५॥ पेशावके रोकनेसे पुरुषोंके मूत्रकृच्छ्, शिरमें पीडा, मूत्रस्थान, लिंगेन्द्रिय इन स्थानोंमें शूल इसीको आनाह कहते हैं ॥ ६ ॥

जँभाई रोकनेसे हुये उदावर्त्तके लक्षण ।

जृम्भास्तम्भाद्गलस्तम्भो मन्यास्तम्भः शिरोव्यथा॥कर्णास्यनेत्रनासासु रोगस्तीव्रो भवेद्भृशम् ॥ ७ ॥

आंसूके रोकनेके उपद्रव ।

शोकानंदभवास्रस्य प्राप्तोदं नैव मुंचति ॥ सरुक् शिरोगुरुत्वं स्यान्नेत्ररोगस्तु पीनसः ॥ ८ ॥

छींकके रोकनेके उपद्रव ।

क्षवथोर्धारणाच्छूलं मन्यास्तम्भः शिरोर्द्धरुक् ॥ इंद्रियाणां च दौर्बल्यं भवेत्पीडास्यचक्षुषि ॥ ९ ॥

अर्थ—जंभाई रोकनेसे गला बैठ जाय, गलेके पिछली नसका जकडना, शिरमें पीडा, कान नेत्र नाक मुख इनमें पीडा हो॥७॥जो पुरुष आनंदसे अथवा शोकसे पैदा हुआ आंसू रोके उसके शिरमें दर्द,तथा शिरमें भारीपना,नेत्ररोग,और पीनसरोग, होय ॥८॥ छींक रोकनेसे शूल, गलेकी पिछली नसका जकडना, आधे शिरमें दद, इंद्रियनमें दुर्बलता, नेत्रोंमें और मुखमें पीडा होवै॥९॥

डकार रोकनेके उपद्रव ।

उद्गारेभिहते तोदः पूणत्वं वक्त्रकंठयोः ॥ पवनस्याप्रवृत्तित्वं कूजत्वं हृदये भवेत् ॥ १० ॥ छर्देर्निग्रहणाद्भवंति विविधा रोगा महादारुणा हृल्लासारतिशोफकष्टरुचयो हिक्काविसर्पज्वराः ॥ कोष्ठाशुद्धिविवर्णदाहकृमयो वातप्रसूता रुजः कंडूमोहविजृम्भणानि बहुशः पांड्वंगमर्दभ्रमाः ॥ ११ ॥

भूख रोकनेके उपद्रव ।

क्षुधाभिघाताद्बलवीर्यहानिः स्यान्मन्ददृष्टिः कृशता शरीरे ॥

प्यासरोकनेके उपद्रव ।

तृष्णाभिघाताद्धृदुरोगबाधा हृत्कंठशोषभ्रमदाहमूर्च्छाः ॥ १२ ॥

अर्थ—डकार आई हुईको रोकनेसे मुख और कंठमें पीडा हो और डकारका न आना, हृदयमें गंजान शब्द हो ॥ १० ॥ अथ वमनोपद्रव ॥ आई हुई रदको रोकनेसे दारुण अनेक तरहके रोग हों, सूखी उलटी हो, अरति, सूजन, कोढ, अरुचि, हिचकी, विसर्परोग, ज्वर, कोठेमें अशुद्धता, विवर्ण, दाह, कृमिरोग वातव्याधि, खुजली, बेहोशी, बहुतजंभाईका आना, पीलिया, अंगोंका टूटना,और ये रोग होते हैं॥११॥भूख रोकनेसे बलवीर्यका नाश हो,तथा मंददृष्टि हो शरीरमें कृशता हो,प्यास रोकनेसे बहुत रोग सतावै,प्याससे कंठ सूखे,और,दाह,मूर्च्छा,ये रोग होते हैं॥१२॥

श्वास रोकनेके उपद्रव ।

श्वासस्य निग्रहाद्गुल्मो हृद्रोगो विरतिर्भवेत् ॥
मोहो वातकृतो रोगे ह्याटोपो विद्रधिस्तथा ॥ १३ ॥

निद्रा रोकनेके उपद्रव ।

निद्राघाताद्भवज्जृम्भा तंद्रालस्यांगगौरवम् ॥ अक्ष्णोर्घूर्णत्वरक्तत्वद्रवत्वं जडतारुचिः ॥१४॥ कषायाम्लद्रवै रूक्षौर्विरुद्धकटुभोजनैः ॥ वातः संकुपितः कुर्यादुदावर्त्तं हि लक्षणम्॥१५॥

अर्थ—श्वास रोकनेसे पेटमें गोला, हृदयका रोग, मनका न लगाना, मोह, और वातके रोग पेटमें गुडगुडाहट, विद्रधिरोग, ये होते हैं ॥ १३ ॥ निद्रा रोकनेसे जंभाई, तन्द्रा, आलसक, देहका भारी होना, नेत्र टेढे, तथा लाल, अश्रुपातयुक्त, जडता, और अरुचि ये रोग होते हैं ॥ १४॥ कसैली, खट्टी, पतली, रूखी, निरुद्ध, तथा कटुवस्तुके खानेसे कुपित हुई जो वात सो दारुण उदावर्त्त रोगको करैहै ॥ १५ ॥

उदावर्तनिदानम् ।

स्रोतांस्युदावर्त्तयतेनिलोयमपानविण्मूत्रकफादिकानाम्॥ वहानिहृत्पार्श्वगुदोदरेषु ह्याटोपशूलं कुरुते शिरोर्तिम् ॥ १६ ॥ उदावर्त्तवातः करोत्यंगमर्दं मरुद्ग्रन्थिमार्तिं पुरीषं सकष्टम् ॥ तृषोद्गारहिक्काभ्रमश्वासकासं वमिं शून्यतां रूक्षतांगं प्रकम्पम १७

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रेऽनाहोदावर्त्तलक्षणं सम्पूर्णम् ।

अर्थ—विष्टा, मूत्र, कफ, आदिकी वहनेवाली जो अपानवायु सो नाडीनके मार्गको रोककर हृदय पसवाडा गुदा पेट इनका फूलना, और शूल तथा शिरमें दर्दको करैहै ॥ १६ ॥ वातका उदावर्त्त रोग हडकल, पेटमें पवनकी गांठ, तथा खेदहो, कष्टसे दस्तका होना, प्यास, डकार, हिचकी, भ्रम, श्वास, खांसी, वमन, देहमें शून्यता, शरीररूखा तथा कंप, ये लक्षण करताहै ॥१७॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यामुदावर्त्तनिदानं समाप्तम् ।

अथ गुल्मरोगनिदानम् ।

गुल्मं वातोद्भवं पैत्त्यं कफजं द्वंद्वसम्भवम् ॥ संनिपातोत्थितं रौद्रं रक्तजं कीर्तितं बुधैः ॥ १ ॥ हृन्नाभ्योरंतरे बस्तौ ग्रन्थिरूपं चलाचलम् ॥ चतुरंगुलपर्यंतं गुल्मन्तत्परिकीर्तितम् ॥२॥

वातगुल्मके लक्षण ।

निंबूदुंबरयोः फलस्य सदृशं गुल्मं मरुत्सम्भवमुद्गारं च मुहुर्मुहुर्वितनुते विण्मूत्रयोर्बंधनम् ॥ जृम्भाध्मानशरीरशोषकृश-

ताश्शूलं तृषां हृद्रुजं पीडामंत्रविकूजनं रुचिहरं भुक्ते मृदुत्वं व्रजेत् ॥ ३ ॥

अर्थ–वातसे, कफसे, पित्तसे, द्वंद्वज सन्निपातसे तथा रुधिरसे आठ प्रकारका गोलेका रोग वैद्योंने कहाहै ॥ १ ॥ हृदय नाभिके बीचमें मूत्रस्थानमें गांठके आकार गोलाहो एकतो चलायमान दूसरा अचल चारअंगुलके बीचमें उसको गुल्म अर्थात् गोलेका रोग कहते हैं॥२॥ जो नींबू गूलर फलके समानहो उसे बादीका गोला जाने, जिसमें डकार बेरबेरमें आवे दस्त पेशाबका बन्द होना जंभाई पेटका फूलना, शरीरमें शोष, तथा कृशपना, और शूल, प्यास, हृदयरोग, पीडा, आंतोंका बोलना, अरुचि और भोजनकरनेसे नरम होजाय ये बादीके गोलाके लक्षणहैं ॥ ३ ॥

पित्तगुल्मके लक्षण ।

गुल्मं कुक्षिगतं कपित्थसदृशं पीतं पुरीषं भवेदुष्माहृद्गलके रतिर्नशिस मुखे शोषाः पिपासाधिका॥ प्रस्वेदज्वरशूलदाहमधिकंस्पर्शाऽसहः संभ्रमश्चिह्नं पीतसमुद्भवस्य कथितं गुल्मस्य वैद्योत्तमैः ॥ ४ ॥

कफगुल्मके लक्षण ।

स्तैमित्यं कठिनोदरं शिथिलतालस्यं गुरुत्वं तनौ बाह्ये शीतलतान्तरे ज्वलनता निद्रा व्यथा मस्तके ॥ स्यात्कंडूस्त्वचि गुल्ममाम्रसदृशं कासोरुचिपांडुता गुल्मश्लेष्मसमुत्थितस्य भणितं चिह्नं सुषेणादिभिः ॥ ५ ॥

रक्तगुल्मके लक्षण ।

गुल्मं रक्तसमुद्भवं दृढतरं जंबीरनिम्बूसमं हृन्नाभ्यंतरभूमिकासु जनित पुंसस्त्रियो योनिषु॥हृत्कंठास्यविशोषणं च कुरुते दाहं महादारुणं प्रस्वेदं ज्वरशूलमुग्रमधिका तृष्णारती संभ्रमम्॥६॥

अर्थ–जो कैथके फल समान हो, कोखमेंहो, पीलादस्त उतरै, हृदय और गलामें गरमी हो, मनका न लगना, नाक मुखमें शोष, प्यास, अधिक पसीना, ज्वर, शूल, दाह, अधिक स्पर्श न सहाजावे, भौंर ये लक्षण, वैद्योंने पित्तके गोलाके कहे है ॥ ४ ॥ देह नीला, पेट कर्रा, शिथिलता, आलकस, देह भारी, बाहर शीतलता, भीतर ज्वालासी माळूमहो, निद्रा, मस्तकमें पीडा, देहमें खाज, आम्रफलके समान गोला, खांसी, अरुचि, पीलिया ये लक्षण सुषेणादि वैद्योंने कफसे पैदा गोलाके कहे हैं॥५॥जो गोला, जंभीरीनीम्बूके समानहो पुरुषके हृदय

नाभिके बीचमें पैदा हुआ हो, स्त्रियोंकी योनिके समीपहो हृदय, कण्ठ, मुखका सूखना, दारुण दाह, पसीना, ज्वर,शूल,अतिप्यास, अरति, ग्लानि,ये लक्षण रुधिरसे पैदा हुये गोलाके हैं॥६॥

असाध्यगुल्मके लक्षण ।

अतीसारहिक्कारतिच्छर्दिशूलैः पिपासाकृशत्वार्तिहल्लासदाहैः ॥ ज्वरश्वासकासांगशोफैर्युतो यः स गुल्मी न जीवेत्सुषेणादिवैद्यैः ॥ ७ ॥

सन्निपातगुल्मके लक्षण ।

त्रिदोषसंभवैः सर्वैर्लक्षणैर्लक्षितं हि यत् ॥
तद्गुल्मं सन्निपाताख्यं द्विदोषोत्थ द्विदोषजैः ॥ ८ ॥

साध्ययाप्यअसाध्यके लक्षण ।

एकदोषोद्भवं साध्यं द्विदोष याप्यमुच्यते॥ ह्यसाध्यं यत्त्रिदोषोत्थं गुल्मं सोपद्रव त्यजेत् ॥ ९ ॥

अर्थ-अतीसार, हिचकी, अरति, रद्द, शूल, प्यास, कृशता, खेद, सूखी उलटी, दाह, ज्वर, श्वास, खांसी, देहमें सूजन, ये लक्षण युक्त जो गुल्मरोगवाला वो सुषेणादिवैद्योंसे अच्छा नहीं हो अर्थात् असाध्यहै॥७॥ जिसमें तीनों दोषोंके चिह्न मिलतेहों उसे सन्निपातका गोलाजानै, और जिसमें दो दोषोंके चिह्न मिलतेहों वो द्विदोषज गुल्म जानै॥८॥जो एक दोषसे पैदा हुआहो वो साध्य,दो दोषयक्त याप्य है,त्रिदोषोत्थ असाध्यहै,और उपद्रवयुक्त गुल्मीको वैद्य त्यागदे ॥९॥

गुल्मक दशउपद्रव ।

शोफस्तंद्रारुचिश्छर्दिर्हल्लासः कृशता तृषा ॥
शूलं स्वेदोङ्गदाहश्च गुल्मस्योपद्रवा दश ॥ १० ॥
इति हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे गुल्मलक्षणम् ।

अर्थ-१ सूजन, २ तंद्रा, ३ अरुचि, ४ वमन, ५ हल्लास, ६ कृशता, ७ प्यास, ८ शूल, ९ पसीना; १० दाह, ये गुल्मरोगके दश उपद्रवहैं ॥ १० ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां गुल्मरोगनिदानम् ।

अथ हृद्रोगनिदानम् ।

शस्त्राभिघातात्पवनस्य रोधनादत्युष्णतिक्ताम्लकषायभोजनात् ॥ अत्युच्चपाताद्भ्रमनादविश्रमाद्धृदामयः स्याद्गुरुभारधारणात् ॥ १ ॥

बादीके हृद्रोगका लक्षण ।

हृद्बाधां कुरुते मरुत्प्रकुपितः संदूषयित्वा रसं हृत्स्थो गुंजति पीडयत्यनुदिनं मर्माणि संतोदते ॥ पार्श्वास्थीनि विदारयत्यविरतं शोषं मुखे हृद्गले ह्याध्मानं च मुहुर्मुहुर्वितनुते श्वासं सकासं ज्वरम् ॥ २ ॥

पित्तके हृद्रोगका लक्षण ।

पित्तः कोपसमन्वितो हृदि गतः संशोषयित्वा रसं हृत्पीडामधिकां निरंतरतृषां दाहं शिरःपीडनम् ॥ ऊष्माणं हृदयोदरे नसि मुखे शूल महादारुणं मूर्च्छास्वेदविपाकमोहमरतिं जानीहि तं हृद्रुजम् ॥ ३ ॥

अर्थ—शस्त्रके लगनेसे, पवनके बेगको रोकनेसे, अतिगरम तथा कडुआ, खट्टा, कसेला भारी ऐसे भोजनसे, उच्चस्थानसे गिरनेसे, वमनसे, अतिश्रमसे, भारी बोझ उठानेसे, हृदयमें रोग होताहै ॥ १ ॥ कुपित वात हृदयमें स्थित रसको बिगाड़कर हृदयरोगको करे, तथा गूंजे, नित्य हृदयमें पीडा हो, मर्मस्थानोंमें पीड़ाहो, पसवाडोंकी हड्डीनमें पीडा हो, मुख हृदय गलेमें शोष, अफरा बारबार हो, स्वास, खांसी, ज्वर, ये वातके हृदयरोगके लक्षण हैं ॥ २ ॥ कुपित हुआ जो पित्त सो हृदयमें प्राप्तहोकर रसको बिगाड हृदयमें पीडा, प्यास, दाह, शिरमें दर्द, गरमी, हृदयमें, पेटमें, नसोंमें, मुखमें, शूलहो, मूर्च्छा, पसीना, पाक, बेहोशी, अरति, ये लक्षण पित्तके हृद्रोगके हैं ॥ ३ ॥

कफके हृद्रोगका लक्षण ।

श्लेष्मा संकुपितः करोति हृदये पीडां सकण्ठेऽरुचिं माधुर्यं वदनेऽनलस्य कृशतां तंद्रां गुरुत्वं तनौ ॥ संस्रावं कफसंचयस्य वमनं हल्लासशूलं ज्वरं हृद्रोगो भिषगुत्तमैर्निगदितश्चिह्नैरमीभिर्भृशम् ॥ ४ ॥

सन्निपातके हृद्रोगका लक्षण ।

तद्धृद्रोगं त्रिदोषोत्थं विद्याच्चिह्नैस्त्रिदोषजैः ॥ युक्तं सोपद्रवं वैद्यस्त्यजेन्नूनं विदूरतः ॥ ५ ॥

कृमिके हृद्रोगका लक्षण ।

शोफश्चेतसि संभ्रमो नयनयोः कार्ष्ण्यं तमो गौरवं चोत्क्लेदो

विकृतिस्तृषा भवति तन्निष्ठीवनं मेहनम् ॥ हृल्लासोऽरुचिरंतरे कृशवपुः शूलं सकंडूव्यथा हृद्रोगे कृमिसंभवे निगदितं चिह्न सुषेणादिभिः ॥ ६ ॥ शोषः क्लमो भ्रमः स्वेदो हृद्रुजः स्युरुपद्रवाः ॥ चत्वारो घोररूपास्ते मुनिभिः परिकीर्तिताः ॥ ७ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे हृद्रोगलक्षणम् ।

अर्थ–कुपित हुआ जो कफ सो हृदयमें, कंठमें पीडाकरै, अरुचि, मुख मीठा, अग्नि मंद, तंद्रा, देहभारी, कफका गिरना, वमन, हृल्लास, शूल, ज्वर, इन लक्षणोंसे कफका हृद्रोग कहाहै ॥ ४ ॥ त्रिदोषयुक्त चिह्नोंसे सन्निपातका हृद्रोग जाने और उपद्रव युक्तहो उसे वैद्य असाध्य जानकर त्यागदे ॥ ५ ॥ सूजन चित्तमें भ्रम, नेत्र काले, अँधेराआवे, देह भारी, उकलाहट, देहकी विकृति, प्यास, बारबार थूकना, मेहन, हृल्लास, अरुचि, देह कृश, शूल, खुजली, व्यथा, इन लक्षणोंसे सुषेणादि वैद्योंने कृमिका हृदय रोग कहा है ॥ ६ ॥ १ शोक, २ ग्लानि, ३ भ्रम, ४ पसीना, ये चार हृदयके घोर उपद्रव मुनीश्वरोंने कहे हैं ॥ ७ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां हृद्रोगनिदानम् ।

अथ मूत्रकृच्छ्रलक्षणम् ।

अनूपमांसाशनमद्यसेवनैः कषायतीक्ष्णोष्णविदाहिभोजनैः ॥ व्यायामघर्माध्यशनाध्वजागरैः स्यान्मूत्रकृच्छ्रं बहुकष्टदं नृणाम् ॥ १ ॥ प्रपीडयत्यधो गत्वा मार्गं रुद्ध्वा कफादयः ॥ मूत्रं मुहुर्मुहुः स्वल्पं सकृच्छ्रं कारयति ते ॥ २ ॥

वातके मूत्रकृच्छ्रका लक्षण ।

मुहुर्मुहुः कष्टतरेण तुच्छं मूत्रं भवेत् पीतनिभं सशूलम् । मेढ्रे च बस्तौ महती प्रपीडा तन्मूत्रकृच्छ्रं पवनात् प्रसूतम् ॥ ३ ॥

अर्थ–अनूप मांसके खानेसे, मद्य पीनेसे, कसेली, तीखी, गरम, दाहकरनेवाली ऐसी वस्तुके खानेसे, दंड कसरतके करनेसे, घाम, अध्यशन, अर्थात् भोजनके ऊपर भोजनसे, रास्ताके चलनेसे, रातमें जागनेसे, मनुष्योंके बहुत कष्टका देनेवाला आठ प्रकारका मूत्र कृच्छ्र रोग होताहै ॥ १ ॥ कफादिकदोष नीचे जायकर मूत्रके मार्गको रोककर और पीडाकरैं तब मनुष्यके कठिनसे बारबार थोडाथोडा पेशाब उतरै उसे मूत्रकृच्छ्ररोग कहते हैं ॥ २ ॥ जो मनुष्य बारबारमें थोडाथोडा मूतै, पीला, शूलयुक्त, अंडकोष तथा मूत्रस्थानमें पीडाहो, उसे वातका मूत्रकृच्छ्र कहते हैं ॥ ३ ॥

पित्तके मूत्रकृच्छ्रका लक्षण ।

मूत्रं भवेद्दाहयुतं मुहुर्मुहुः पीतारुणाभं रुधिरेण संप्लुतम् ॥
तप्तं सकष्टं गुदमेढ्रयोर्व्यथा तन्मूत्रकृच्छ्रङ्किल पित्तजं वदेत्॥४॥

कफके मूत्रकृच्छ्राका लक्षण ।

मूत्रं सिताभं परिबुद्बुदान्वितं सपिच्छिलं मेदुरमार्तिदं गुदे ॥
लिंगे च योनौ बहुशोफगौरवं तन्मूत्रकृच्छ्रङ्कफसंभवं त्यजेत्॥५॥

कष्टसाध्यासाध्यलक्षण ।

द्विदोषोद्भवं मूत्रकृच्छ्रं सदाहं भवेत्कष्टसाध्यं प्रयत्नौषधीभिः॥
त्रिदोषोत्थितं दारुणं प्राणनाशं निरुक्तं मुनींद्रैरसाध्यं नितांतम्६

अर्थ–जिस रोगीका पेशाब दाहके साथ उतरै, बारबार और पीलाहो, लाल हो, रुधिर मिलाहो, तप्त और कष्टसे उतरै, गुदा और अण्डकोशमें दर्दहो उसे पित्तका मूत्रकृच्छ्र कहते हैं ॥ ४ ॥ जिसका मूत्र सपेद और बबूले संयुक्त गाढा और चिकनाहो, गुदामें दर्दहो, लिंग और योनिमें सूजन हो, देह भारी, ये लक्षण कफके मूत्रकृच्छ्रकेहैं॥५॥दो दोषसे हुआ जो मूत्रकृच्छ्र दाहयुक्त सो मंत्र औषधियोंसे कष्टसाध्य कहाहै, और त्रिदोषसे हुआ सो प्राणका नाशक मुनीश्वरोंने असाध्य कहाहै ॥ ६ ॥

मूत्रकृच्छ्रम्भवेद् घातात्संरोधान्मूत्रशुक्रयोः ॥ शल्यात्पातात्क्षतात्कष्टाद्वस्तिमेहनशूलकृत् ॥ ७ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे मूत्रकृच्छ्रलक्षणं समाप्तम् ।

अर्थ–मूत्र और वीर्यके रोकनेसे, घात, शल्यसे, पडनेसे, घावसे, कष्टसे मूत्रस्थान लिंगमें दर्दका करनेवाला मूत्रकृच्छ्ररोग पैदा होताहै ॥ ७ ॥

इति हंसराजार्थबोधिन्यां मूत्रकृच्छ्रनिदानम् ।

मूत्राघातकी उत्पत्ति ।

नाभेरधोधः प्रगतास्त्रिदोषा भवन्ति ते कुंडलिकासमानाः ॥
स्वहेतुभिः संकुपिता भ्रमंति कुर्वंति पश्चाद्बहुमूत्रघातान् ॥१॥
नाभेरधो यदा वायुः कुंडलाकारसंस्थितः ॥ आध्मापयन् गुदं बस्तिं मूत्राघातो भवेत्तदा ॥२॥ मूत्रस्य वेगं विदधाति तीव्रम-

पानवायुः कुपितस्तु तेन ॥ नाभेरधोर्ध्वं महतीं प्रपीडां करोति यस्तस्य नरस्य नूनम् ॥ ३ ॥

अर्थ—दोष नाभिके नीचे जाय कुंडलीके समान होकर और अपने हेतूनसे कुपितहो भ्रमण करै पश्चात् मूत्राघातरोगको प्रगट करतेहैं ॥ १ ॥ जब पवन नाभीके नीचे कुंडलाकारहो गुदा मूत्रस्थानमें भरजावै तब मनुष्यके मूत्राघात रोग होताहै ॥२॥ जो पुरुष मूत्रके वेगको रोके तब उसके अपान वायु कुपितहो नाभीके ऊपर नीचे भारी पीडा करै उसे मूत्रकृच्छ्र कहतेहैं ॥ ३ ॥

वातके मूत्रकृच्छ्रका लक्षण ।

वातोधःप्रगतो रुणद्धि पुरुतो मूत्रं पुरीषान्वितं मेढ्रे बस्तिगुदे दधाति महतीं पीडां च शोफान्विताम् ॥ आध्मानं कुरुते मुहुर्मुहुरतो मूत्रं सकृत्कष्टदं कृष्णाभं पवनोद्भवं निगदितं तन्मूत्रघातं परैः ॥ ४ ॥

पित्तके मूत्राघातके लक्षण ।

मेढ्रं बस्तिं गुदाग्रं दहति बहुतरं मूत्रमार्गं रुणद्धि स्वल्पं स्वल्पं सकृच्छ्रबहुरुधिरयुतं कारयत्येव मूत्रम् ॥ धत्तेधोगत्यकोपं वितरति वलयाकाररूपं च पित्त तत्पैत्त्यं मूत्रघातं निगदितमृषिभिर्मानसैः सद्भिषग्भिः ॥ ५ ॥

कफके मूत्राघातका लक्षण ।

श्लेष्माधोगत्यशोफं वितरति गुरुतां मूत्रमार्गं रुणद्धि मेढ्रे बस्तौ गुदाग्रे प्रवहति सरुजं कारयत्येव मूत्रम् ॥ तुच्छं तुच्छं सकष्टं क्वचिदपि बहुशो मेदुरं श्वेतवर्णं सांद्रं शीतं सफेन कथितमृषिवरैर्मूत्रघातं कफस्य ॥ ६ ॥

अर्थ—वात नीचे जायकर दस्त पेशाबको रोंक अंडकोश और मूत्रस्थानमें सूजनके साथ भारीपीडा करै, अफरा, और वारबार कष्टसे थोडा पेशाब कालेरंगका उतरे, उसे वातका मूत्राघात कहते हैं ॥ ४ ॥ कुपित हुआ जो पित्त सो नीचे जायकर कंकणके आकारहो अंडकोश और मूत्रस्थानमें तथा गुदाग्रमें पीडाकरै, मूत्रके मार्गको रोकदे, थोडाथोडा कठिनतासे बहुत रुधिरमिला मूतै, उसे ऋषि और वैद्योंने पित्तका मूत्राघात रोग कहाहै ॥ ५ ॥ कफ नीचे प्राप्तहो सूजनको करै देह भारी, मूत्रके मार्गोंको रोकदे, मेढ्र, बस्ति, गुदा इनमें पीडा करै, थोडा थोडा कठिनतासे कभी बहुतसा चिकना सपेदरंगका गाढा शीतल झागमिला ऐसा पेशाब उतरै, उसे कफका मूत्राघातरोग ऋषियोंने कहा है ॥ ६ ॥

मूत्राघातं द्विदोषोत्थ त्रिदोषोत्थं भिषग्वरैः ॥ ज्ञायते लक्षणैः सर्वैर्वातपित्तकफोद्भवैः ॥ ७ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे मूत्राघातलक्षणम् ।

अर्थ–दो दोषोंके लक्षणोंसे द्विदोषका मूत्राघातरोग जानना, त्रिदोषसे सन्निपातका मूत्राघात वैद्यों करके जानना ॥ ७ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां मूत्राघातनिदानम् ।

अथाश्मरीरोगनिदानम् ।

स्त्रियां योनिरंध्रे शिशूनां च मेढ्रे भवत्यश्मरी मूत्रवेगस्य रोधात् ॥ मरुच्छ्लेष्मपित्तैर्भवा शुक्रजन्या महादुःखदा प्राणहंत्री प्रसिद्धा ॥ १ ॥

वातकी अश्मरीका लक्षण ।

रूक्षा वातभवाश्मरी गुरुतरा भल्लातमज्जासमा शिश्न छिद्रगतारुणद्धि परितो मूत्र विगंधान्वितम् ॥ पीडां मूत्रपुरीषयोर्वितनुते मेढ्रे गदे बस्तिषु ह्याध्मान कुरुते रुचिं कृशतनुं ग्लानिं ज्वरं बिभ्रते ॥ २ ॥

पित्तकी पथरीके लक्षण ।

सूक्ष्मा पित्तसमुद्भवा मणिनिभा खर्जूरतुल्यारुणा तप्ता कंटकसंयुताथ चिपिटा शिश्ने गता याश्मरी॥ छिद्रं मूत्रपुरीषयोर्दहति या योनौ रुजं वर्द्धते मूत्रं कृच्छ्रतमं सदाहमनिशं तृष्णाङ्करोति द्रुतम् ॥ ३ ॥

अर्थ–मूत्रके वेग रोकनेसे स्त्रियोंकी योनिमें और बालकोंके अंडकोशोंमें पथरीका रोग होताहै १ वादीसे, २ पित्तसे, ३ कफसे, ४ शुक्रसे, चार तरहकी है महादुःखकी देनेवाली प्राणकी नाशक प्रसिद्ध ॥ १ ॥ वातकी पथरी रूखी भारी भिलावेकी मज्जाके समानहो, इंद्रीमें प्रासहो, इन्द्रीके छिद्रको रोकदे, मूत्रमें बास आवै, पेशाब और दस्तके समय गुदा मूत्रस्थान और पोतोंमें दर्द हो, अफरा, अरुचि, कृशदेह, ग्लानि, ज्वर ये लक्षण वातकी पथरीकेहैं ॥ २ ॥ छोटी हो, मणिके समानहो, खजूरके फलके तुल्य, लाल हो, गरम तथा कांटे और

चपटी लिंगमें हो मूत्र दस्तके छिद्रको दहन करै, योनिमें दर्दहो, कठिनतासे दाहयुक्त पेशाब उतरै, प्यास हो, ये लक्षण पित्तकी पथरीके हैं ॥ ३ ॥

शूलं मेढ्रगुदे भगे प्रलपनं कार्श्यं ज्वरं कंपनमूष्माणं विदधाति बस्तिगुदयोर्मूत्रस्य धारारुणम्॥वैक्षीण्यं परितो रुणद्धि सहसा पार्श्वोदरे पीडनं घोरा पित्तभवाश्मरी निगदिता वैद्योत्तमैः प्राणहा ॥ ४ ॥

कफकी पथरीका लक्षण ।

स्निग्धाऽऽमज्जासदृशा कफोद्भवा श्वेताश्मरी कंटकवेष्टिता दृढा॥ शीतातिमध्ये गुदशिश्नयोर्भवा संजायते मूत्रनिरोधनाच्छिशोः ॥ ५ ॥ शैथिल्य कुरुतेश्मरी कफभवा शिश्नान्तरे तोदनं धैर्यं नाशयतेऽरुचिं वितनुते ह्यङ्गं मुहुः कंपते ॥ मूत्रं श्वेतनिभं रुणद्धि गुरुतां काये शिरःपीडनं धत्ते पांडुरुजं तनौ कृशवपुर्निद्रालसं बिभ्रते ॥ ६ ॥

अर्थ–अंडकोश, गुदा, भग इनमें शूलहो, प्रलाप, कृशता, ज्वर,कम्प, गुदा और मूत्रस्थानमें गरमी, तथा मूत्रकी धार लालहो, क्षीणता, पेशाबका रुकना, पसवाडोंमें तथा पेटमें दर्द ऐसे लक्षणोंसे वैद्योंने प्राणकी नाशक पित्तकी पथरी कहीहै ॥ ४ ॥ चिकनी, आमकी गुठलीके समान हो, सपेद और कांटेयुक्त, दृढ, शीतल, तथा गुदा और लिङ्गेंद्रियके मध्य हुई हो, ये बालकके मूत्रबाधा रोकनेसे पैदा होतीहै ये लक्षण कफकी पथरीके हैं ॥ ५ ॥ शिथिलता, इन्द्रियमें पीडा, धैर्यका नाश, अरुचि, अंगोंमें कम्प, सपेद पेशाबहो, और रुकरुक कर उतरै, देहभारी,शिरमें दर्द, पाण्डु, और कृशता देहमें, निद्रा, आलस्य ये लक्षण कफकी पथरीके हैं ॥ ६ ॥

वीर्य्यरोधकी पथरीका लक्षण ।

यूनां वीर्यस्य रोधाद्भवति च महती शुक्रजाताश्मरी या शिश्नं बस्तिं गुदां वै रुजयति वृषण मूत्रमार्गं रुणद्धि ॥ दौर्बल्यं कुक्षिरोगं वितरति सहसा शुक्रनाशं करोति तुच्छं तुच्छं सकष्टं क्वचिदपि बहुशः कारयत्येव मूत्रम् ॥ ७ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे अश्मरीलक्षणम् ।

अर्थ–जवानपुरुषोंके वीर्यके रोकनेसे जो पथरी रोगहो उसके ये लक्षण हैं. लिंग, मूत्रस्थान, गुदामें पीडाहो, तथा अंडकोशोंमें दर्दहो, मूत्रके मार्गको रोकदे, दुर्बलता, कूखमें दर्द, शुक्रका नाश, कष्टसे कभी थोडा कभी बहुत पेशाब उतरे ॥ ७ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यामश्मरीलक्षणम् ।

अथ प्रमेहलक्षणम् ।

दधिमधुघृतदुग्धं मद्यपानं नवान्न फलरसमतिमिष्टं तक्रमिक्षोर्विकारम् ॥ रविकृतपरितापः सुन्दरीस्त्रीकटाक्षैर्भवति विषमचेतो मेहहेतुर्नितांतम् ॥ १ ॥

वातके प्रमेहका लक्षण ।

मूत्राग्रे वाथ पश्चात्प्रपतति सततं शुक्रमिक्षोरसाभं यामे यामद्वये वा क्वचिदपि समये पातमाप्नोति दोषैः ॥ निर्गंध तक्ररूपं लवणजलनिभ दुग्धतुल्यं सुराभ रूक्षं वातप्रमे प्रवदति चरकः कृष्णवर्णं च नीलम् ॥ २ ॥ मेहो वातसमुद्भवः प्रकुरुते शूलं महादारुणं हृद्रोगं पिटिका मुखे मधुरतां श्वासं शरीरं कृशम् ॥ आध्मानं तनुपीडनं विकलतां शोष च कासान्वित ह्युन्निद्राम्बलनाशनश्चपलतां रूक्षां त्वचं साहसम् ॥ ३ ॥

अर्थ–दही, सहत, घी, दूध, मद्यके पीनेसे, नवीन अन्न फल रस अतिमीठा छांछ ईखके विकारसे, सूर्यके घामसे सुंदरस्त्रीके कटाक्षसे चित्तमें प्रमेहका हेतु होताहै ॥ १ ॥ पेशाब करनेके पहिले वा पीछे ईखकासा रंग ऐसा शुक्र गिरे पहर पहरमें या दोपहरमें दोषोंके होनेसे दुर्गंधयुक्त छांछके समान, वा नोनके पानीसरीखा, दूधके समान, मद्यके समान रूखाहो ये लक्षण वातके प्रमेहके चरक ऋषिने कहे हैं ॥ २ ॥ वातका प्रमेह दारुणशूल हृदयरोग मरोडी मुखमें मिठास श्वास देह कृश अफरा देहमें पीडा बेकली शोष खांसी निद्रा बलका नाश चपलता त्वचामें रूखास साहस ये लक्षण करताहै ॥ ३ ॥

पित्तके प्रमेहका लक्षण ।

घनं पावकाभ हरिद्रानिभं वारुण रक्ततुल्यं च सिंदूरवर्णम् ॥ प्रमेहं च पित्तोद्भवं वैद्यराज विजानीहि मंजिष्ठकावर्णतुल्यम् ॥४॥ कषायश्च मूत्रं करोति प्रमेहो रतिं पित्ततः कष्टसाध्योऽ-

तिकृच्छ्रम् ॥ ज्वरं बस्तिशूल कृशांगं पिपासां क्लमं मेढ्रदाहं भ्रमं शोषमंगे ॥ ५ ॥

कफके प्रमेहका लक्षण ।

घृतदधिवसरूप दुष्टदुर्गंधयुक्त घनमधुसदृशं वा पिच्छिलं मेह-वर्णम् ॥ सितलवणनिभं वा मेदुरं तंतुमिश्रं बुधजन किल मेहं विद्धि साध्य कफात्म्यम् ॥ ६ ॥

अर्थ–गाढा, अग्निके समान वर्ण, तथा पीला वा लाल, अथवा जलके सदृश,वा मंजीठके वा सिंदूरके रंगकासा पेशाब उतरे, उसे हे वैद्यराज ! पित्तका प्रमेह जानो ॥ ४ ॥ कसेले रंगका रुधिरके रंगका ज्वरकरे मूत्रस्थानमें पीडा कृश देह प्यास ग्लानि अडकोशोंमें दाह, भ्रम, शरीरमें शोष, अरति ये पित्तके प्रमेहके लक्षणहैं, ये कष्टसाध्य हैं ॥ ५ ॥ दही, घृत, चरबीके समान मूते, दुर्गंधयुक्त गाढा सहतके समान, तथा सपेद मिश्री और नोनके रंगसा और चिकना पेशाब उतरे तन्तुयुक्तहो उसको पंडित कफका प्रमेह कहते हैं ॥ ६ ॥

मेहः श्लेष्मसमुद्भवो बलहरः शुक्रस्य विध्वंसक आलस्यं कुरुते रुचिवृषणयोः शोथं तनौ पांडुताम् ॥ शैथिल्य गुरुतां वमिं नयनयोश्शौक्ल्यं त्वचि स्फोटनं तंद्रा रात्रिदिनेऽनिशं मल-चयं दन्तांघ्रिहस्तेष्वलम् ॥ ७ ॥

प्रमेहरहितके लक्षण ।

यदा प्रमेहिणो मूत्रं कटुतिक्तमपिच्छिलम्॥ शुद्धं रूक्ष शुभ्रधारं तदाऽऽरोग्यं वदेद्भिषक ॥ ८ ॥

साध्यअसाध्यकष्टसाध्यविचार ।

मेहः कफोत्थितः साध्यः साध्यः कष्टेन पित्तजः॥वातजस्त्वृ-षिभिः पूर्वैरसाध्यः परिकीर्तितः ॥ ९ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे प्रमेहलक्षणम् ।

अर्थ–कफका प्रमेह बल हरता, शुक्रका नाशकरता, आलकस, अरुचि पोतोंपर सूजन; शरीर पीला, और शिथिल तथा भारी, वमन, नेत्र सपेद, त्वचाका फटना, रात, दिन तन्द्राका होना, दांत, जीभ, हाथ पैरोंमें मैलका संग्रह होना ये लक्षण करताहै ॥ ७ ॥ जिस प्रमेहवा-लेका पेशाब कडुआ, तीखा, पतला, शुद्ध, रूखा, सपेद धारका उतरे, उसका प्रमेह दूर भया

जानिये ॥ ८ ॥ कफका प्रमेह साध्यहै, पित्तका कष्टसाध्यहै, वातका प्रमेह पूर्व ऋषियोंने असाध्य कहाहै ॥ ९ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां प्रमेहनिदानम्।

अथ पिटिकारोगनिदानम्।

तिक्ताम्लोष्मविदाहिरूक्षकटुकक्षारातपाध्याशनैर्मद्यस्निग्धविरुद्धभोजनरसैर्दुष्टैर्नवान्नद्रवैः॥ दोषं पित्तमरुत्कफाद्विदधते संदूष्य रक्तामिषं त्वक्संभेद्य बहिर्गताश्च पिटिका रूपेण कुप्यन्ति ते ॥१॥ दुष्टग्रहप्रकोपेन दोषा मर्मप्रभेदिनः॥ जनयंति शरीरेषु पिटिका बहुधा मताः ॥ २ ॥ ज्वरश्छर्दिरतीसारो रक्तांगो तीव्रवेदना ॥ स्वेदे तृषारुचिः श्वासो वैवर्ण्यं विकलोरतिः॥३॥

अर्थ–तिक्त, खट्टा, गरम, दाहकरनेवाला, कटु, रूखा, खारी भोजन, घाममें डोलनेसे भोजनपर भोजन करनेसे मद्य चिकनी विरुद्ध भोजन और पानसे दुष्ट नवान्न और पतली वस्तुसे कुपितहुये जो वातपित्त कफ सो रुधिर और मांसको बिगाड कर त्वचाको फाडकर फुंसीरूप पिटिका रोग कोप करताहै ॥ १ ॥ दुष्टग्रहके कोपसे तीनोंदोष मर्मस्थानको भेदकर देहमें अनेक प्रकारके पिटिका रोग पैदा करते हैं ॥ २ ॥ ज्वर, रद्द, अतीसार, देहलाल, तीव्रदुःख, पसीना, प्यास, अरुचि, श्वास, विवर्ण, बेकली, अरति ॥ ३ ॥

पिटिकाका पूर्वरूप।

अस्थिस्फोटोङ्गदाहश्च शोषः कंडूरुचिर्भ्रमः ॥ पिटिकानां पूर्वरूपं मुनिभिः परिकीर्तितम् ॥ ४ ॥

वातकी पिटिकाके लक्षण।

तृष्णा पावकसंनिभाश्च पिटिका वातोद्भवास्त्वग्गताः सूक्ष्मा मुद्गसमा मसूरसदृशाः सप्ताह्निपाकारुजाः ॥ सूक्ष्माभाश्चिपिटा घनाश्च परितः कुर्वंति पीडाभयं दाहानाहतृषाक्षवार्तिवमथुश्वासातितापाकराः ॥ ५ ॥

पित्तकी पिटिकाका लक्षण।

अस्थिस्फोटः पर्वभेदोंगदाहः श्वासः शोषो विड्ग्रहो मूत्रकृच्छ्रः॥ रौद्रास्फोटारक्तजारक्तवर्णा वैद्यैरुक्तं पित्तकोपस्य चिह्नम् ॥ ६ ॥

अर्थ–हडफूटन, देहमें दाह, शोष, खुजली, अरुचि, भ्रम, ये मुनीश्वरोंने पिटका रोगका

पूर्वरूप कहाहै ॥ ४ ॥ काली, अग्निके रंगकी, त्वचामें, फुंसीहों, छोटी और मूंगके समान तथा मसूरके समान सात दिनमें पक, कमदीखें, चपटी और कठोरहों और पीडा भयको देनेवाली, दाह, आनाह, प्यास, छींक, मथवाय, श्वास, अत्यंत तापकी करनेवाली, वातकी पिटिका जाने ॥ ५ ॥ हडफूटन, गांठोंमें दर्द, अंगोंमें दाह, श्वास, शोष, दस्तका रुकना, मूत्रकृच्छ्र, रौद्र, फोडे, रक्तसे पैदा लालरंगके हों तो वैद्य पित्तकी पिटिका जाने ॥ ६ ॥

कफकी पिटिकाके लक्षण ।

पिटिकाःकफकोपभवाः कठिनाः स्फटिकद्युतयो बहुधाकृतयः॥ चिरपाकरुजास्तनुशोककरा बदरीफलपक्वसमारुचयः ॥ ७ ॥ श्लेष्मा कोपेन कुर्यात्त्वचि पिटकशतं बुद्बुदाकारतुल्यं शोफप्रांतं कठोरं बदरफलसमं मांसत्वग्भेदजातम् ॥ निद्रां तन्द्रां पिपासां भ्रममरुचिवमिं कासमंगेषु पीडां श्वासं कंडूप्रसेकं ह्यवयवशिथिल शीर्षरोगं ज्वरार्तिम् ॥ ८ ॥ वातपित्तभवा नीला मध्ये निम्ना ज्वरान्विताः ॥ भवंति पिटिकाः क्षुद्राः शोषदाहतृषा युताः ॥ ९ ॥

अर्थ—कफकोपकी पिटिका कठिन, स्फटिक मणिके समान, तरह तरहकी, देरमें पकें, देहमें सूजनहो, पके बेरके समान कान्तिहो ॥७॥ कफकोपकी पिटिका त्वचामें सैंकडों फुन्सीको बबूलेके आकार; उसके चारों ओर सूजन, तथा कठिन बेरफलके समान मांसत्वचाको फाडकर प्रगटहो, निद्रा, तंद्रा, प्यास, भ्रम, अरुचि, वमन, खांसी, अंगोंमें पीडा, श्वास, खुजली, लारका गिरना, शरीरके अवयव शिथिल, शिरमें दर्द ज्वर तथा खेद, ये कफकी पिटिकाके लक्षणहैं॥८॥वातपित्तकी पिटिका नीले रंगकी, बीचमें बैठीसीहो, ज्वरहो और क्षुद्रा पिटिका दाह, शोष, प्यासयुक्त होतीहैं९॥

स्थूलाः श्वेताः प्रोन्नता दुश्चिकित्स्याः पूयस्रावाः स्फोटकाःकष्टपाकाः॥स्निग्धाः कडूशोफतंद्रापिपासाकासश्वासारोचकातापयुक्ताः॥१०॥संभूताः कफवाताभ्यां विज्ञेयाःपंडितैर्नरैः॥अतः परं तु ज्ञातव्या विस्फोटाः कफपित्तजाः॥११॥रोगार्त्तैःपिटिका घना बुधजनैर्ज्ञेयाश्च निम्नोन्नताः पित्तश्लेष्मभवा विवृत्तवदनास्स्थूलाः शिरोर्तिप्रदाः ॥ वक्रेभ्यो रुधिरस्रवाश्चिमिचिमामूर्च्छापिपासान्विता निद्राकंडुविवर्णताशिथिलताकंठांगपीडाकराः ॥ १२ ॥

अर्थ–मोटी, सफेद, ऊंची, जिनका कठिन उपाय, राधबहे, कष्टसे पके, चिकनी और खुजली,सूजन, तंद्रा, प्यास, खांसी, श्वास, अरुचि, ज्वर ऐसी पिटिका वातकफकी जाननी ॥ १० ॥ इस श्लोकका अन्वय दूसरे अगाडीके श्लोकमें लगता है॥ अब इसके आगे पित्तकफकी पिटिकाके लक्षणजानो ॥ ११ ॥ रोगीकी फुन्सी कठिन, नीची, ऊंची,मोटी, खुले मुखकी, शिरमें दर्दकी करनेवाली, रुधिर चुचावे, चिमचिर्मीयुक्त, मूर्च्छा, प्यास, निद्रा, खुजली, विवर्णता, शिथिलता, कंठ अङ्गोंमें पीडाहो, ये लक्षण पित्तकफकी पिटिकाके होते हैं ॥ १२ ॥

संनिपातकी पिटिकालक्षण ।

असाध्याःपिटिका ज्ञेया वातपित्तकफोद्भवाः॥उत्पद्यन्ते विलीयंते शरीरे रोगिणां पुनः ॥१३॥ पित्तश्लेष्ममरुद्भवाश्च पिटिकाः पूयस्रवा रक्तदा आध्मानं तनुगौरवं विकलतां कुर्वंत्यसाध्यारुजाः॥दाहं शोफतरं तृषां बहुमुखाःपाके च दुःखप्रदा अस्थिस्फोटमहर्निशं बहुतरं श्वासं विवृत्ताननाः॥१४॥ रक्तस्राव नासिकाकर्णनेत्रास्येभ्यो मूर्च्छां मंडलं मांसकोचम्॥हिक्कां कासं मूत्रकृच्छ्रांगभेदं कृष्णाः स्फोटा मृत्युदा दुश्चिकित्स्याः ॥ १५ ॥

अर्थ–वात पित्त कफकी पिटिका रोगीके देहमें पैदाहों और नाशहों वो असाध्य हैं ॥ १३ ॥ सन्निपातकी पिटिकामें रुधिर और राध चुचाय, अफरा, देहभारी, बेकली, दाह, सूजन, प्यास बहुतसे मुखहों, पकनेके समय दुःखहो, हडकल हो, श्वास, तिरछे नेत्र ये असाध्य पिटिकाके लक्षणहैं ॥१४॥ नाक कान नेत्र मुख इनसे रुधिर चुचाय, मूर्च्छाहो, खूनके चकत्तेहों, मांसका संकोचहोना, हिचकी, खांसी, मूत्रकृच्छ्र, अंगोंमें पीडा, कालेरंगके फोडा ये लक्षण मृत्युके करनेवाले चिकित्सा रहित जानने ॥ १५ ॥

त्वचामें गतपिटिकालक्षण ।

त्वग्गताः पिटिका ज्ञेया जलबुद्बुदसन्निभाः ॥
स्वल्पदोषजलस्रावाः सुखसाध्या भिषग्वरैः ॥ १६ ॥

रक्तमें प्राप्तपिडिकालक्षण ।

रक्तस्था रक्तभाः साध्याश्शीघ्रपाकास्तनुत्वचः ॥
रक्तस्रवा विदीर्णास्याः विज्ञेया पिटिकाः परैः ॥ १७ ॥

मांसमें प्राप्तपिडिकालक्षण ।

मांसस्थाः पिटिकाः स्निग्धाः कठिनाः कठिनत्वचः ॥
चिरपाका ज्वरश्वासकंडूदाहतृषान्विताः ॥ १८ ॥

मेदमें प्राप्तपिडिकालक्षण ।

मेदजाः पिटिकाः स्निग्धाः स्थूला ज्वरसमन्विताः ॥
मृदवो मंडलाकाराः पीताभाः किंचिदुन्नताः ॥ १९ ॥

मज्जामें प्राप्तपिडिकालक्षण ।

रूक्षा मुद्गसमाः क्षुद्राश्चिरपाकसमन्विताः ॥
मज्जस्थाश्चिपटा ज्ञेयाः सव्यथाः किंचिदुन्नताः ॥ २० ॥

अर्थ–जलके बबूलेके समानहो, थोडे दोषयुक्त, जल चुचावे और त्वचामेंहो वो वैद्योंने सुख साध्य कही है ॥ १६ ॥ जो फुन्सी लालरंगकी हो; जल्दी पके, नर्मत्वचाहो, रुधिर चुचाय, खुलेमुखकी, वो रक्तगत पिडिका जाननी येभी साध्यहै ॥ १७ ॥ मांसमें प्राप्त पिडिका कठिन, चिकनी, करडी त्वचावाली, देरमें पके, ज्वर, श्वास, खुजली, दाह, प्यास इनसे युक्त होती है ॥ १८ ॥ चरबीमें प्राप्तपिडिका चिकनी, मोटी, ज्वरयुक्त, गरम, गोलमंडलके आकार, पीली, कुछ ऊंची होती है ॥ १९ ॥ रूखी, मूंगके समान छोटी, देरमें पकनेवाली, चपटी, दर्द युक्त, कुछऊंची, मज्जागत पिडिका जाननी ॥ २० ॥

हाडमें प्राप्तपिडिकालक्षण ।

अस्थिस्थाः पिटिकाः कुर्य्युर्भ्रमं दाहं तृषां ज्वरम् ॥
छिंदंति मर्मधामानि प्राणानाशु हरंति च ॥ २१ ॥

शुक्रमें प्राप्तपिडिकालक्षण ।

शुक्रस्थाः पिटिकाः कुर्य्युः स्तैमित्यं बहुवेदनाम् ॥
प्राणनाशं शिरःकंप श्वासं कासं ज्वरान्वितम् ॥ २२ ॥

असाध्यशीतलका लक्षण ।

मसूराभिभूतस्य कर्णाक्षिनासामुखेभ्यः स्रवेदस्यरक्तंनितांतम् ॥
विवर्णार्तिहिक्कातृषापीडितस्यस रोगीयमस्यालयेयाति नूनम्२३

अर्थ–अस्थिमें प्राप्तपिडिका ये लक्षण करतीहै. भ्रम, दाह, प्यास, ज्वर, मर्ममर्ममें पीडा और जल्दी प्राणोंका नाश करै ॥२१॥ शुक्रमें प्राप्त पिडिका देहगीला, बहुत दुःख, प्राणोंका नाश करे, शिरमें कंप, खांसी, श्वास, ज्वर ये लक्षणकरतीहै ॥२२॥ शीतलावाले रोगीके कान नाक मुख नेत्रसे रुधिरगिरै विवर्ण तथा दर्द हिचकी प्यास ये लक्षण होनेसे असाध्य जानना ॥२३॥

दोषैकेनोत्थिताः साध्याः कष्टसाध्या द्विदोषजाः ॥ पिटिकाः सन्निपातोत्था मृत्युदाः कीर्त्तिताः परैः ॥२४॥ ॥ इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे मसूरिकानिदानम् ।

अर्थ—एकदोषसे उठी साध्य, द्विदोषसे उठी कष्टसाध्य, त्रिदोषसे उठी वो फुन्सी मौतकी देनेवाली कहीहै ॥ २४ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां पिटिकारोगनिदानम् ।

अथ पिटिकारोगनिदानम् ।

सराविका कच्छपिकाथ जालिनी मसूरिका सर्षपिका च पुत्रिणी ॥ विदारिका विद्रधिका तु पिंडिका तथांजली ज्ञैः पिटिका दश स्मृताः ॥ १ ॥

प्रमेहसे उत्पन्नपिटिका ।

मेहोत्थाः पिटिका भवंति दशधा बाल्ये क्वचिद्यौवने कायस्यांतरबाह्ययोः प्रजनिता नॄणां स्त्रियां भूयशः ॥ ताः कुर्वंति महज्ज्वरं नयनयोर्मुद्रां शिरःपीडनं हृल्लासांतरगुंजनं विकलतां निद्रांगविक्षेपणम् ॥ २ ॥ अस्थिस्फोटनमंगदाहमरतिं श्वासं च कासं रुजं दौर्गंध्यं परितःस्रवं विलपनं शोषं शरीरेनिशम्॥ मूकत्वं बधिरं कृशत्वमरुचिं संधिग्रहं संभ्रमं वैवर्ण्यं शिथिलं नरं गतबलं कुर्वंति वीर्यक्षयम् ॥ ३ ॥

अर्थ—१ सराविका, २ कच्छपिका, ३ जालिनी, ४ मसूरिका, ५ सर्षपिका, ६ पुत्रिणी, ७ विदारिका, ८ विद्रधिका, ९ पिण्डिका, १० अंजली ये वैद्योंने दश प्रकारकी पिटिका कही हैं ॥ १ ॥ प्रमेहसे उठी पिटिका दसतरहकी बालक अवस्थामें कभी जवानपनेमें होतीहैं, देहके बाहर भीतर स्त्रीपुरुषोंके बहुतसी वे ज्वर, नेत्रका मुंदजाना, शिरमें दर्द, सूखी रद्द, आंतोंका बोलना, बेकली, निद्रा, अंगोंका फैंकना इन लक्षणोंको करतीहैं ॥ २ ॥ हडकल, अंगोंमें जलन, अरुचि, श्वास, खांसी, दुर्गंध, स्राव, विलाप, शोष, बहिरापना, तथा गूंगापना, कृशता, अरुचि, संधियोंमें पीडा, भ्रम, विवर्णता, शिथिलता, बलहीन, वीर्यका क्षयपना, ये लक्षण पिटिका रोगके हैं ॥ ३ ॥

पिटिकाः कर्बुरा नीला मलिनांतर्गताः शिताः॥मृत्युप्रदारक्तवर्णाः पाटलाः कष्टदाः स्मृताः ॥ ४ ॥ किंचित्कष्टप्रदाः पीताः पिशंगाः पिंगलास्तथा ॥ स्वभ्राः स्फटिकसंकाशाः स्निग्धाः सुखकराःस्मृताः॥५॥मर्मस्थलेषु वांसेषु जायंते संधिषून्नताः ॥ पिटिकाः श्वेतरक्ताभा मध्यगर्त्ताः सराविकाः ॥६॥

अर्थ—धूसरे रंगकी, नीले रंगकी मलिन, भीतर सपेदहो वो मृत्युकी देनेवाली पिटिका जाननी और लाल वा गुलाबीरंगकी कष्टदेनेवाली होतीहै ॥ ४ ॥ पीलेरंगकी हरतालके रंगकी पिटिका कुछ कष्ट देती है नीबुआ रंगकी,स्वच्छस्फटिक मणिके रंगकी, चिकनी, सुखकरनेवाली होती है ॥ ५ ॥ मर्ममें और मांसमें तथा संधियोंमें उठीहुई सफेद लाल रंगकी बीचमें गड्ढाहो उसको सराविका कहतेहैं ॥ ६ ॥

कूर्मरूपा महापुष्टा वर्त्तुला ज्वरदाहदाः॥जायंते पिटिकाः सर्वाः कच्छप्यस्ता उदाहृताः ॥ ७॥ तीव्रदाहप्रदामांसे सक्लेदा वर्द्धते रुजम् ॥ जालवद्वेष्टयत्यंतं प्रोक्ता सा जालिनी बुधैः॥८॥ मसूरदेहवत्सूक्ष्मा रक्ताभा सा मसूरिका॥ गौरसर्षपभाःस्निग्धा तत्प्रमाणा च सर्षपा ॥ ९ ॥

अर्थ—कछुएकेसा स्वरूप हो ज्यादा मोटी हो,बत्तीकी तरहहो,ज्वर और जलनको करे ये लक्षण कच्छपिकाके हैं ॥ ७ ॥ तीव्र जलन, मांसमेंही क्लेशयुक्त पीडाको बढावै, और जालकी तरह चिपटे उसे पंडित जालिनी कहते हैं ॥८॥ मसूरकी दालकी समान छोटी, और लाल हो, उसे मसूरिका कहतेहैं और सपेद सरसोंके समान हो और चिकनी हो उसे सर्षपिका कहते हैं ॥९ ॥

पिटिकासु प्रजायंते पिटिका घोरदर्शनाः ॥ पुत्रिण्यस्त्वार्तिदा नीलाः प्रोक्ता वैद्यैर्विशारदैः॥१०॥अतिदीर्घा सशोफा या परस्परयुतारुणा ॥ विद्रधेर्लक्षणैर्युक्ता प्रोक्ता विद्रधिका बुधैः ॥ ११ ॥ विदारिकंदवद्दीर्घा कठिना दुःखकारिणी ॥ ज्वरार्तिदा क्षुधाहारी विज्ञेया सा विदारिका ॥ १२ ॥

अर्थ—जो फुन्सीमें दूसरी फुन्सी घोर पैदा हो और पीडायुक्त हो और नीलेरंगकी हो उसे पुत्रिणी कहते हैं ॥१०॥ बहुत बडी सूजनयुक्त और परस्परमिली हुई हो लालरंग हो और विद्रधिके लक्षण मिलतेहों उसे वैद्योंने विद्रधिका कही है ॥ ११॥ विदारीकंदके समान मोटी हो कडी दुःखकारक ज्वर, खेद, भूखका नाश करनेवाली उसको विदारिका कहते हैं ॥ १२ ॥

पिंडीवत्पिडिका ज्ञेया देहशोफकरी सिता ॥ व्यक्तांगुल्याकृतिर्ज्ञेया वैद्यैः सा विततांगुला ॥ १३ ॥ पिटिकार्तेर्विनाशाय शीतलां पूजयेत्सुधीः॥पुष्पैर्धूपाक्षतैर्दीपैर्नैवेद्यैर्मंगलैस्तथा॥ १४॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे मसूरिकापिटिकालक्षणम् ।

अर्थ–जो पिंडीके आकार हो उसे पिडिका जाननी, वो देहमें सूजनको करतीहै जो मिलीहुई अंजलीके आकारमें हो उसे वैद्य विततांजुली कहते हैं ॥१३॥ पिटिका और शीतला एकही है इसी वास्ते पिटिकाके दुःखके नाशनार्थ शीतलाका पूजन धूप दीप चावल पुष्प नैवेद्य और मंगलाचरणके साथ करै ॥ १४ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां पिटिकामसूरिकारोगनिदानं समाप्तम् ।

अथ मेदोरोगनिदानम् ।

मेदउत्पत्तिः ।

अव्यायामैर्दिवास्वप्नैर्मांसमिष्टान्नभोजनैः ॥ अतिस्निग्धाशनैर्देहे मेदोवृद्धिः प्रजायते ॥ १ ॥ जठरे मेदसो वृद्धिः करोति बलसंक्षयम् ॥ निद्रां दौर्गंध्यमंगे षुचाशक्ति सर्वकर्मसु ॥ २ ॥ स्थूलोदरमनुत्साहं गौरवं तनुशीतलम् ॥ जठराग्नेः क्षयं जाड्यं श्वासं कंपनसादनम् ॥ ३ ॥

अर्थ–दंड कसरतके न करनेसे सोनेसे, मांस मिष्टान्नके खानेसे, अति चिकनी वस्तुके खानेसे देहमें मेद बढा है ॥१॥ पेटमें मेदके बढनेसे बलका नाशहोताहै, और निद्रा तथा दुर्गंध देहमें और सर्वकर्ममें अश्रद्धा होतीहै ॥२॥ पेटको बढावै, उत्साह रहित, तथा देह भारी तथा शीतल, जठराग्निका नाश और जडता, श्वास, कंप और देहका रहजाना करैहै ॥ ३ ॥

कायं स्थूलतरं मेदः सस्वेदं स्वल्पमैथुनम् ॥
धातुक्षयं त्वचं पीतां बहुमूत्रां सितेक्षिणीम् ॥ ४ ॥
इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे
मेदसोवृद्धिलक्षणम् ।

अर्थ–जिसकी देह मोटी मेदसे और पसीने युक्त, मैथुन थोडा कराजाय, और धातु गिराकरै पीली त्वचा होजाय, मूत्र बहुत उतरे, सपेद नेत्र हो, ये मेद रोगके लक्षण हैं ॥ ४ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां मेदोरोगलक्षणम् ।

अथ गंडमालारोगनिदानम् ।

विस्फोटमाला गलकेशशोफमेदोद्भवा तोदयुतातिरक्ता॥ कर्कन्धुजंब्वामलकप्रमाणा तां गंडमालां प्रवदंति वैद्याः ॥ १ ॥

वातकी गंडमालाके लक्षण ।

वातोद्भवा या गलगंडमाला कृष्णारुणाभा कुरुतेतितोदम् ॥

स्तब्धा शिरातालुगले प्रशोषं भिन्नस्वरं रूक्षतमं शरीरम्॥ २॥
वैरस्यमास्ये विदधाति कष्टं संस्रावयेद्रक्तनिभं च पूयम् ॥
भिन्नस्वरं कष्टतरेण पाकं करोति वातात्मकगंडमाला ॥ ३ ॥

अर्थ—फोडे मालाकी तरह सूजनयुक्त गलेमें हो और लालहो तथा बेर जामुन आमलेके प्रमाणहो मेदसे पैदा हुआहो उसे वैद्य गंडमाला रोग कहते हैं ॥ १ ॥ वातकी गंडमालाके ये लक्षण हैं कालीहो, लालहो, अतिपीडाकरै, नाडिनको स्तंभन करदे, तालु गलेमें शोषहो, बुरा-स्वर, शरीररूखा करे ॥ २ ॥ मुखमें स्वाद न रहै, कष्टको बढावै, तथा राधरुधिरबहै, बुरास्वर होजाय कष्टसे पकै येभी वातकी गंडमालाके लक्षणहैं ॥ ३ ॥

पित्तकी गंडमालाका लक्षण ।

ज्वरं शोफशूलं करोत्युग्रदाहं कटुत्वं मुखे कंठताल्वोष्ठशोषम्॥
महत्पित्तकोपोद्भवा रक्तवर्णा गलेमुष्कपंक्त्याकृतिर्गण्डमाला४॥

कफकी गंडमालाका लक्षण ।

जम्बूकर्कंधुपूगीफलकलितरुभापक्कनारंगपिंगा काठिन्या ग्रंथि-पक्तिर्वितरतिपरतःकंठदेशेषु शोफम्॥ कंडूं पीडां विधत्ते प्रति-दिनमरुचिं गौरवाङ्ग च कासं पूय रक्तं सगंधं स्रवति भवति सा श्लेष्मजा गडमाला ॥ ५ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे गडमालालक्षणं समाप्तम् ।

अर्थ—ज्वर, शूल, दाह, मुखकडुआ, कंठ तालु ओठ इनका सूखना, लाल वर्ण, गलेमें अंडकोशकी पंक्तिके आकारहो उसे पित्तकी गंडमाला कहते हैं ॥ ४ ॥ जामुन बेर सुपारी बहेडा, पके नारंगीके समान पीलीहो, कठिन गांठकी पंक्तिभीहो, और कंठमें सूजनहो खुजली पीडाको बढावे अरुचि, देहभारी, खांसी, राध रुधिर बासके साथ निकलै, उसे कफकी गंडमाला कहते हैं ॥ ५॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां गंडमालारोगनिदानम् ।

अथ श्लीपदरोगनिदानम् ।

शोफो नृणां पादगतोऽतिरौद्रो वल्मीकतुल्योंतरमांसवर्ती ॥
मेदाश्रयःकंटकवेष्टितांगो वैद्योत्तमैः श्लीहपदो निरुक्तः ॥ १ ॥

वातकी श्लीपदका लक्षण ।

निमित्तशून्यं बहुशोफपादं कृष्णं च रूक्षं स्फुटतीव्रतोदनम् ॥

वातोद्भवं श्लीहपदं ज्वरार्तिनिरूपितं वैद्यवरैर्नितांतम् ॥ २ ॥

पित्तकी श्लीपदका लक्षण।

शोफाधिकं रक्तज्वरार्तिदाहं संस्रावयुक्तं बहुरक्तवर्णम् ॥ पित्तात्मकं श्लीहपदं गुरुत्वं ज्ञेयं भिषग्भिः किलकष्टसाध्यम् ॥ ३ ॥

अर्थ—मनुष्योंके पैरमें सूजनहो, और क्रमसे बढके सर्पकी गांबीके समान लम्बी पेडू जंघा मांसमें प्राप्तहो, और मेदके आश्रयहो, कांटेयुक्त हो उसे वैद्य श्लीपदरोग कहते हैं ॥ १ ॥ विना-कारण बहुत सूजन हो, काली रूखी फटी तीव्र वेदनायुक्त, ज्वर, स्वेदहो, उसे वैद्य वातका श्लीपदरोग कहते हैं ॥ २ ॥ जिसमें सूजन ज्यादा हो, लालरंगहो, ज्वर, खेद, दाह रुधिर गिरै, भारीहो वो वैद्योंने कष्टसाध्य पित्तका श्लीपद कहा है ॥ ३ ॥

कफके श्लीपदका लक्षण।

स्निग्धं श्लीहपदं गुरुत्वमनिशं शोकाधिकं सज्वरं श्वेताभं बहुकंटकैः परिवृतं वल्मीकतुल्यं दृढम् ॥ मेदोमांसपराश्रयं चरणगं स्थूलं च शीतान्वितं भोभो वैद्यविशारदाः कफभवं जानीहि तत्पांडुरम् ॥ ४ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे श्लीहपदलक्षणम्।

अर्थ—चिकना, भारी सूजन, विशेष ज्वर, सपेदरंग, बहुत कांटेयुक्त, बामीके तुल्यहो, और दृढहो, मेदमांसके आश्रयहो, पैरोंमेंहो, मोटी और शीतल हो उसे हे वैद्य! तू कफकी श्लीपद रोग जानो ॥ ४ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां श्लीपदरोगनिदानम्।

अथ विद्रधिरोगनिदानम्।

त्वग्रक्तामिषमेदांसि दूष्यदोषास्थिगाः पुनः ॥ नाभेरधोमहच्छोफं ज्वरं कुर्वन्ति ते शनैः ॥ १ ॥ स विद्रधीरुक्परितो विचार्य्य प्रीतैर्भिषग्भिःकिलशास्त्रपारगैः ॥ महार्त्तिकृद्दाहविवर्द्धनोऽसौ शोफान्वितो हृज्जठरे च शूलम् ॥ २ ॥ विद्रधिः षड्विधः प्रोक्तो मुनिभिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ दोषैर्व्यस्तैः समस्तैश्च रक्तजः सप्तमः स्मृतः ॥ ३ ॥

अर्थ—वात, कफ, पित्त ये त्वचा, रुधिर, मांस, मेदा उनको बिगाडकर हड्डीमें प्राप्त हो नाभीके नीचे भारी सूजन और ज्वरको पैदा करते हैं ॥ १ ॥ बहुत स्वेद और दाह और सूजनको बढावै, तथा हृदय और पेटमें दर्दहो उसे वैद्योंने विचारकर विद्रधि रोग कहाहै ॥२॥ विद्रधि रोग छः तरहकाहै १ वात, २ पित्त, ३ कफसे, ४ वात पित्तसे, ५ वातकफसे, ६ पित्त-कफसे, और सातवां ७ रुधिरसे ॥ ३ ॥

वातविद्रधिके लक्षण ।

रक्तश्यामोऽतिविषमो वेदनाबहुभिर्युतः ॥
शीर्षपाको विचित्राभो वातजो विद्रधिः स्मृतः ॥४॥

पित्तके विद्रधिके लक्षण ।

पक्वनिंबूफलाकारोरक्ताभोज्वरदाहकृत् ॥
शीर्षपाकोमहत्यार्त्तिर्विद्रधिः पित्तजो भवेत् ॥ ५ ॥

कफके विद्रधिके लक्षण ।

स्निग्धः शीतश्चिरोत्थोयं चिरपाकोल्पवेदनः ॥
श्लेष्मजो विद्रधिः पांडुः शरावसदृशो भवेत् ॥ ६ ॥

अर्थ—लाल और काली तथा विषम बहुतपीडायुक्त, जल्दीपके, और विचित्र स्वरूप हो ये वातके विद्रधिके लक्षण हैं ॥ ४ ॥ पके नींबूके समान सूजन हो, लालरंग, ज्वर दाहके करने वाली, शीर्ष पाक हो, अत्यंत पीडायुक्त ये पित्तकी विद्रधिके लक्षण हैं ॥ ५ ॥ चिकनी, शीतल, बहुत दिनकी उठी और बहुत कालमें पकैं, मंदपीडा हो, पीलेरंगकी शरावके समान हो, ये कफकी विद्रधिके लक्षण हैं ॥ ६ ॥

सन्निपातके विद्रधिके लक्षण ।

नानावर्णो दाहशूलो ज्वरार्तिः कोष्ठोत्थानं कष्टपाकोऽतिरौद्रः॥
आधिस्रावोबस्तिहृत्कुक्षिशोथो वैद्यैः प्रोक्तो विद्रधिः सन्निपातः७

रुधिरके विद्रधिके लक्षण ।

दीर्घोष्णा परिपक्वचूतसदृशो विस्फोटको मांसलः कृष्णाभो बहुदाहकृज्ज्वरकरस्तृष्णान्वितः क्षुद्धरः ॥ कुक्षौबस्तिगुदोदरेषु हृदये पीडाकरोऽहर्निशं प्रोक्तो रक्तभवोभिषग्वरगणैः पित्तात्मको विद्रधिः ॥ ८ ॥ विद्रधिं रक्तजं विद्यात्कुक्षौलग्नमचञ्चलम् ॥ मांसशोणितयोर्ग्रंथिं बस्तिहन्नाभिसंभवम् ॥९॥ ॥ इति भिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे विद्रधिलक्षणम् ।

अर्थ–विचित्र रंगहो, दाह, शूल, पीडा, कोष्ठमें पैदा हुई कष्टसे पके, अति रौद्र, आधिस्रात्र, मूत्रस्थान, हृदय, कूख इन स्थानोंमें सूजन हो, इसे वैद्योंने संनिपातका विद्रधि रोग कहा है ॥ ७ ॥ दीर्घ, गरम, पके आमके समान फोडा हों, तथा मोटाहो, कालेरंगके समान, बहुत दाह, ज्वर, भूखका नाशकरै, प्यास बढावै, कूख, मूत्रस्थान, गुदा, पेट, हृदय इनमें रातदिन पीडा करै, ऐसी विद्रधिको वैद्यगणोंने पित्तात्मक रुधिरकी कही है ॥ ८ ॥ और नामी मूत्रस्थान हृदयमें मांसकी गांठ हो, उसे रुधिरकी विद्रधि कहते हैं, तथा कांखमें स्थिर जो हो॥९॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां विद्रधिरोगनिदानम्।

अथोपदंशलक्षणम्।

हस्तस्य घातात्करजस्य पाताद्दंतस्य दंशात्तृणकाष्ठलग्नात् ॥ दुष्टस्त्रियो योनिविकारसेवनात्पश्चोपदंशाः प्रभवंति शिश्ने१॥

वातके उपदंशके लक्षण।

वातोपदंशो बहुवेदनान्वितो विस्फोटसूक्ष्मैः स्फुरणैस्तु कृष्णभैः ॥ युक्तः सतोदैः किल जायते नृणां शिश्नस्य बाह्योपरितोऽन्तरेऽनिशम् ॥ २ ॥

पित्तके उपदंशके लक्षण।

पित्तोपदंशं तमवेहि नूनं तीव्रार्तिदाहं पिशितावभासम् ॥ विशीर्णमांसं पिटिकाभिषिक्तं शिश्नांतरे गर्तमतीवरौद्रम् ॥ ३ ॥

अर्थ–हाथके चोटसे तथा नखके लगनेसे, किसी तरहसे दांतके लगनेसे, तिनका, लकडीके लगनेसे, गरमीवाली औरतके संग करनेसे, लिंगमें पांच प्रकारका उपदंश रोग पैदा होता है ॥ १ ॥ वातका उपदंशवाला पुरुष बहुत वेदनायुक्त हो, प्रकाशमान कालेरंगकी छोटी छोटी पिडिका हों, पीडायुक्त, लिंगके बाहर भीतर मनुष्योंके होती हैं ॥ २ ॥ उसे पित्तका उपदंश जानो जिसमें ये लक्षण हों, तीव्रदाह, मांसके रंग सरीखा तथा बिखरा हुआ मांस हो, पिटिका युक्त लिंगके भीतरी भारी गढाहो ॥ ३ ॥

कफके उपदंशका लक्षण।

वैद्योपदंशं कफसंभवं हि तं जानीहि कंडूपिटिकाभिराश्रितम्॥ शोफाधिकं पांडुरवर्णशीतलं स्निग्धं गरिष्ठं पिशितांकुरान्वितम्४॥

सन्निपातके उपदंशका लक्षण।

आसुष्कशोफं कृमिजं तु जग्धं विशीर्णमांसं बहुगर्तशोफम् ॥ त्रिदोषजं विद्ध्युपदंशमेतमसाध्यमार्तिज्वरशूलदाहम् ॥ ५ ॥

जातमात्रे महारोगे चिकित्सां नैव कारयेत् ॥ बद्धमूलेन रोगेण रोगी याति यमालयम् ॥ ६ ॥

अर्थ–हे वैद्य ! उसे तू कफका उपदंश जान जिसमें खुजली हो, पिटिका हो, अधिक सूजनहों, पीलारंग हो, शीतल और चिकना भारी मांसांकुर युक्त हो ॥४॥ लिंगसे अंडकोशों पर्यंत सूजन हो, कृमिपडगये हों, मांस बिखर गया हो, बडा गड्ढा हो, सूजनहो, ज्वर, शूल, दाह युक्त, ऐसे लक्षणोंसे असाध्य त्रिदोषका उपदंश जानना ॥५॥ जो मनुष्य उपदंश रोगको पैदा होतेही इलाज नहीं करै और रोग बद्धमूल होजाय तो वह रोगी यमराजके घर जाता है॥६॥

महाक्षतो भवेद्यस्य शिश्ने स्फोटो निशीर्य्यते॥ शिरःपीडा ज्वरो देहे निर्लोमो मुखमंडले ॥ ७ ॥ गुह्यदेशे महाशोफो नेत्रयोर्बहुरक्तता ॥ पतेच्छिश्नः समुष्काभ्यां स रोगी नैव जीवति ॥ ८ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचितोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे उपदंशलक्षणम् ।

अर्थ–जिसके लिंगमें बडा घाव हो, और घाव फटजावै, तथा शिरमें दर्द, और ज्वर, मुखपर बाल न रहै ॥ ७ ॥ गुह्यइन्द्रियमें महासूजनहो, और नेत्र लालहों, और जिसका अंडकोशके साथ लिंग गिरपडे वह रोगी नहीं जीवै ॥ ८ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यामुपदंशरोगनिदानम् ।

अथ शूकदोषलक्षणम् ।

यो लिंगवृद्धिं मनुजोभिवांछति शूकोद्भवा तस्य भवन्ति व्याधयः॥ अष्टादशाख्याः कफवातपित्तजा द्वंद्वोद्भवा रक्तभवास्त्रिदोषजाः १॥

सर्षपिकाका लक्षण ।

सर्षपिका सा सर्षपरूपा लिंगसमीपे दारुणशूका ॥
वातकफाभ्या संजनितारुक् स्यात्पिटिकेयं पुंस्त्वहरीति ॥२॥

कुम्भिकाका लक्षण ।

रक्तपित्तोत्थिताकुम्भी पिटिका रक्तपूरिता ॥
शिश्नोपरि गता शूकदोषजा तीव्रवेदना ॥ ३ ॥

अर्थ–जो मनुष्य लिंग बढनेकी इच्छा करैं, और मूढवैद्यके कहनेसे लेप वा पट्टी बांधे उसके अठारह तरहका, वात, पित्त, कफ ३ दो दोषोंके ३ और त्रिदोषका १ शूकसे पैदा व्याधि होती है ॥ १ ॥ सर्षपिका सरसोंके समान छोटी फुंसी लिंगपर होतीहैं, और वात,

कफसे पैदा तथा पुरुषपनेको दूर करती हैं ॥२॥ रक्तपित्तसे पैदा कुंभिकाफुंसी रुधिरसे पूरित और लिंगपर शूकदोषसे पैदाहुई तीव्रपीडायुक्त ॥ ३ ॥

मूढपिटिकाका लक्षण ।

पाणिभ्यां मृदितं शिश्नं पीडितं वातकोपतः ॥
तस्मिन्वातसमुद्भूतासामूढपिटिका भवेत् ॥ ४ ॥

दीर्घिकापिटिका लक्षण ।

दीर्यंते मध्यतो बद्धाः पिटिका रोमहर्षदाः ॥ संधिमध्यगताः शुभ्राः कफजा दीर्घिकाः स्मृताः ॥ ५ ॥

पुष्कारिका पिटिकाका लक्षण ।

पित्तोद्भवा पुष्करकर्णिकासमा सिंदूरवर्णा निबिडाऽतिदुःखदा ॥ दाहादिपीडां महतीं करोति या सोक्ता परैः पुष्करिका मुनीन्द्रैः६

अर्थ—हाथके मीडनेसे, वातके कोपसे पैदाहुई लिंगपर फुंसी उसे मूढपिटिका कहते हैं॥४॥ रोमांचको करै, और बीचमेंसे फटजाय, और सन्धियोंके बीचमें सपेद रंगकी हो, वो कफसे पैदा हुई दीर्घिकानाम पिटिका जाननी ॥ ५ ॥ पित्तसे पैदा कमलकी कर्णिकाके समानहो, तथा लाल रंगहो, चिपटी, अतिदुःख देनेहारी, दाह, पीडा बहुतकरै, उसे मुनीश्वरोंने पुष्करिका पिडिका कही हैं ॥ ६ ॥

स्पर्शं नोत्सहते ज्वरं वितनुते पीडां करोति द्रुतं यः शूकं पिटिकाशतं बहुरुजं लिंगे विधत्ते चिरम् ॥ कृष्णारक्तनिभं विपाककठिनं पाकार्तिकृत्सद्रवं विद्यात्पित्तमरुद्भवं तमनिशं मुद्गादलाभं रुजम् ॥ ७ ॥

कफपित्तके शूकके लक्षण।

कफपित्तभवा विविधा कृतयः पिटिकाबहुशोफयुताः कठिनाः॥
ज्वरदाहविलापरुजो दधते कृमिशोणितपूयवहा विषमाः॥८॥

त्रिदोषजनितशूकके लक्षण ।

मांसपाकं बहुच्छिद्रं लिंगभंगं त्रिदोषजः ॥
कुर्याच्छूको ज्वरं दाहं शोथ च पिटिकान्वितम् ॥ ९ ॥

अर्थ—स्पर्श न सहाजाय, ज्वर, पीडा, और सैकडों फुन्सी लिंगके ऊपर काली, लाल हों, कठिनसे पकैं, दुःखकी देनेवाली, और चुचावैं, उसे वातपित्तसे पैदाहुई पीडिका मूंगके पत्तेके समान

जाननी ॥ ७ ॥ कफ पित्तसे पैदाहुआ जो शूक रोग उसके अनेक तरहकी फुन्सीकी आकृतिहो, और सूजनहो, कठिनज्वरके और दाहके करनेवाली, रुदनकरै, कृमी, और रुधिर तथा राधबहे, और विषम हो ॥ ८ ॥ मांसका पाक तथा बहुतसे छिद्र होजायँ और लिंग गिरपडे, तथा ज्वर, दाह, सूजन, और अनेक मरोडी हों, ये सन्निपातके शूकरोगके लक्षण हैं ॥ ९ ॥

मांसशोणितयोर्ग्रन्थिमर्बुदं तं विदुर्बुधाः ॥
विद्रधेर्विद्रधिं विद्यात्संनिपातसमुद्भवाम् ॥ १० ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे शूकदोषलक्षणम् ।

अर्थ–मांस और रुधिरकी गांठ उसे पण्डित अर्बुद कहते हैं, और विद्रधिके आकार हो उसे संनिपातसे पैदा विद्रधि कहतेहैं ॥ १० ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां शूकरोगनिदानम् ।

अथ कुष्ठरोगलक्षण ।

अथकुष्ठरोगोत्पत्तिः ।

महापापतः कुष्ठिनो देहदाहात्तथात्यंतसंसर्गतो मांसभक्षात् ॥ भवेत्कुष्ठरोगो गुडक्षीरपानादजीर्णाशनाद्रक्तपित्तस्य कोपात् ॥ १ ॥ विरुद्धान्नपानात् स्त्रियोत्यंतसंगाद्दिवास्वापतो रौद्रघर्मादितापात् ॥ गुरुस्निग्धरूक्षाशनान्मूत्रबंधाद्भवेद्रौद्रकुष्ठो जलस्यावगाहात् ॥ २ ॥ मांसचर्मविकारोत्थाः कुष्ठाष्टादशसंज्ञकाः ॥ वातपित्तकफोद्भूता द्वंद्वोत्थाः सन्निपातजाः ॥३॥

अर्थ–ब्रह्महत्यादि महापापके करनेसे कुष्ठीको दाह देनेसे कोढीके पास रहनेसे मांसके खानेसे भारी तथा दुग्ध आदि पदार्थके सेवन करनेसे, अजीर्णमें खानेसे, रक्तपित्तके होनेसे, कुष्ठरोग पैदा होताहै ॥ १ ॥ तथा विरुद्ध अन्न और जलके सेवन करनेसे अत्यन्त स्त्रीके संग करनेसे, दिनमें सोनेसे, धूप आदि गरमीके खानेसे, भारी चिकना रूखे आदिके खानेसे, मूत्रबंध होनेसे, बहुत जलमें रहनेसे, घोर कुष्ठरोग पैदा होताहै ॥ २ ॥ मांस और चर्मके विकारसे पैदा कोढरोग अठारह प्रकारका है, वातसे, पित्तसे, कफसे, द्वन्द्वज और सन्निपातसे ॥ ३ ॥

उदुंबरकुष्ठके लक्षण ।

यद्रूक्षं परुषं कपालसदृशं तोदं कपालेऽधिकं तत्कुष्ठं विषम वदंति सुधियः कृष्णारुणाभं भृशम् ॥ यत्कुष्ठं स्फुटितमुदु-

म्बरसमं रुग्दाहकंडूवृतं शुष्कं रक्तनिभं परैर्निगदितं तत्कुष्ठ-मौदुंबरम् ॥ ४ ॥

मूकजिह्वनामकुष्ठके लक्षण।

वृषजिह्वोपमा जिह्वा रोमहर्षोन्तरव्यथा ॥
जायते येन कुष्ठेन मूकजिह्वन्तदुच्यते ॥ ५ ॥

मंडलकुष्ठके लक्षण।

श्वेतरक्तनिभं स्निग्धं स्थिरं कृच्छ्रसमुन्नतम् ॥
परस्परसमालग्नं कुष्टं मंडलसंज्ञकम् ॥ ६ ॥

अर्थ–जो रूखा, कठोर, खोपडीके समान, कपालमें पीडा करै तथा काला, लाल उसे कपाल संज्ञक कुष्ठ कहते हैं, और जो फटगया हो गूलरके समान पीडा दाह,खुजली,तथा सूखा हुआ रुधिरके समान उसे वैद्य उदुम्बर नाम कुष्ठ कहते हैं ॥ ४ ॥ बैलकी जीभके समान जीभ हो रोमांच तथा भीतर पीडा हो, उसे मूकजिह्व कुष्ठ कहते हैं ॥५॥ सपेद,लाल, चिकना स्थिर करडा ऊंचा, और आपसमें मिला हुआ हो उसे मण्डल कुष्ठ कहते हैं ॥ ६ ॥

करवालकुष्ठके लक्षण।

वर्द्धतेऽहर्निशं स्थूलं कृष्णकंडूभिरावृतम् ॥
रूक्षं बहुतरं कुष्टं करवालं तदुच्यते ॥ ७ ॥

किणिकुष्ठके लक्षण।

तत्कुष्टं किणिसंज्ञं स्यात्किणं शोथसमन्वितम् ॥
श्यामवर्णं खरस्पर्शं परुषं बहुवेदनम् ॥ ८ ॥

दादनामकाढके लक्षण।

कृष्णाभं मंडलाकारं कंडूभिर्बहुभिर्युतम् ॥
अतापे दुष्करं रूक्षं तत्कुष्टं दद्रुसंज्ञकम् ॥ ९ ॥

अर्थ–जो नित्य बढता जावे,और मोटा हो काला और खुजली युक्त रूखा,और बहुत हों उसे करवाल कुष्ठ कहते हैं ॥ ७ ॥ जो कोढ किणी संज्ञक है, जिसमें घाव सूजनके साथ हो कालावर्ण, खरदरा, स्पर्श, कठोर, बहुत ·खेद युक्तहो ॥ ८ ॥ काला, गोल चकत्ते, खुजली होतीहो, गरमीमें दुःख बहुत हो, रूखा, उसको दादनाम कोढ कहते हैं ॥ ९ ॥

चर्मदलकोढके लक्षण।

कंडुमद्रक्तवर्णं च विस्फोटकसमन्वितम् ॥
सार्द्रस्पर्शासहं शूलं कुष्टं चर्मदलं भवेत् ॥ १० ॥

गजचर्मकोढके लक्षण ।

गजचर्मसमाकारं स्थूल बहुतरं दृढम् ॥
कंडूमच्छ्यामवर्णं यत्कुष्टं तच्चर्मसंज्ञकम् ॥ ११ ॥

पामाकुष्ठके लक्षण ।

स्फोटाभिर्बहुभिर्युक्ता सूक्ष्माभिः पाटलादिभिः ॥
कडूदाहार्तिभिर्युक्ता पामा सा कीर्तिता बुधैः ॥ १२ ॥

अर्थ—जिसमें खुजलीहो, और लालवर्ण तथा फोडाहो गीला, स्पर्श न सहा जाय, शूलयुक्त उसे चर्मदल नाम कुष्ठ कहते हैं ॥ १० ॥ जो हाथीके चर्मके आकार हो, और मोटाहो, तथा विशेष और दृढ हो, खुजलीयुक्त, कालारंगहो, उसे गजचर्म कुष्ठ कहते हैं ॥ ११ ॥ जिसमें फोडा छोटे और सपेद लाल रंगके बहुत हों, और खुजली दाह पीडा युक्तहो उसे पामा अर्थात् खाज कहते हैं ॥ १२ ॥

विचर्चिका और चित्रकुष्ठ ।

सैवं नूनं बहुस्रावा कथिता सा विचर्चिका ॥
यत्पुष्पसदृशं वण चित्रकुष्टं तदुच्यते ॥ १३ ॥

वातक कुष्ठका लक्षण ।

श्यामारुणं खरस्पश रूक्षं वेदनयान्वितम् ॥
विवर्णं वातज कुष्टं कथितं तद्भिषग्वरैः ॥ १४ ॥

पित्तके कुष्ठके लक्षण ।

श्यामारुणनिभं स्रावं कंडूरोगार्तिदाहदम् ॥
तीक्ष्णपित्तोद्भवं कुष्टं कीर्तितं वैद्यसत्तमैः ॥ १५ ॥

अर्थ—वही श्यामा बहुत स्रवै तो उसेही विचर्चिका कहते हैं, और जिसका पुष्पके वर्णके समान रंगहो उसे चित्रकुष्ठ कहते हैं॥१३॥ जिसका काला, लाल और खरदरा स्पर्श हो, रूखा तथा पीडा युक्त विवर्ण उसे वातका कुष्ठ कहते हैं ॥ १४ ॥ जिसका काला, लालरंगहो, और स्रवे तथा खुजली दाह पीडा हो उसे तीखा पित्तका कुष्ठ वैद्योंने कहाहै ॥ १५ ॥

कफके कुष्ठके लक्षण ।

कुष्टं कफोद्भवं विद्यात्स्निग्धं कंडुयुतं घनम् ॥ गौरवं शीतलं क्लेदि शोथस्रावसमन्वितम् ॥१६॥ चिह्नैर्द्विदोषजैर्युक्तं द्विदोषो त्थ विदुर्बुधाः ॥ त्रिभिर्दोषैर्विमिश्रं यत्कुष्टं कष्टतरं भवेत्॥१७॥

त्वचामें स्थितकुष्ठके लक्षण ।

बहूपद्रवसंयुक्तमसाध्यं तत्प्रकीर्त्तितम् ॥
त्वक्स्थे कुष्ठे शरीरेषु वैवर्ण्यं रूक्षता भवेत् ॥ १८ ॥

अर्थ–जो चिकना और खुजलीयुक्त घन, भारी शीतल, क्लेदी, सूजनयुक्त, तथा स्रवै, उसे कफका कुष्ठ कहते हैं ॥ १६ ॥ जिसमें द्विदोषके लक्षण मिलते हों, उसे पण्डित द्विदोषका कुष्ठ कहते हैं, और त्रिदोषके लक्षण मिले हों, उसे कष्टतर जान वैद्य त्यागदे ॥१७॥ और बहुत उपद्रव युक्तहो, उसे वैद्योंने असाध्य कहाहै, त्वचामें स्थित कुष्ठ शरीरको विवर्ण करदे, और रूखा कर देता है ॥ १८ ॥

रक्तगतकुष्ठके लक्षण ।

कुष्ठे रक्तगते नेत्रे क्लमो हर्षोरुचिर्भवेत् ॥
प्रस्वेदः कंठशोषश्च विसर्पो रक्तमंडलम् ॥ १९ ॥

मांसगतकुष्ठके लक्षण ।

हस्तांघ्रिषु नृणां शोफं विस्फोटं तोदगौरवम् ॥
कुष्ठे मांसं गते तस्य विरेको वमनं भवेत् ॥ २० ॥

मेदगतकुष्ठके लक्षण ।

गात्रभग्नोंगदुर्गंधं क्षते पूयं च जंतवः ॥
गतिक्षयोऽग्निमंदत्वं कुष्ठे मेदगते भवेत् ॥ २१ ॥

अर्थ–नेत्रोंमें क्लम, तथा, हर्षका नाश, अरुचि, पसीना, कंठका सूखना और विसर्प रुधिरके मण्डल ये रक्तगत कुष्ठके लक्षणहैं ॥१९॥ हाथ पैरोंमें सूजन, तथा फोडा पीडा, शरीरभारी रहे, रद्द, दस्त ये मांसगत कुष्ठके लक्षण हैं ॥ २० ॥ शरीरका टूटना, देहमें दुर्गन्ध व्रण, पीव, कृमिहों, गतिका नाश, मन्दाग्नि, ये मेदगत कुष्ठके लक्षणहैं ॥ २१ ॥

अस्थिमज्जागतकुष्ठके लक्षण ।

नासाभंगोऽक्षिणी रक्ते क्षतेषुकृमिसंभवः॥ स्वरघातोव्रणे दाहः
कुष्ठे मज्जास्थिसंस्थिते॥२२॥ दंपत्योः कुष्ठिनोर्वीयशोणिता-
भ्यां च संभवः॥यदपत्यविकाराभ्यां ज्ञेयं तदपि कुष्ठितम् २३॥

कुष्ठके साध्यलक्षण ।

त्वग्रक्तमांसगं कुष्ठं साध्यं यंत्रौषधादिभिः ॥
मेदोजं च द्विदोषोत्थं दानस्नानजपादिभिः ॥ २४ ॥

अर्थ–नाकका भंग, नेत्र लाल, घावोंमें कीडा पडजायँ, मन्दस्वर, व्रणोंमें दाह, ये हड्डी और मज्जागत कुष्ठके लक्षणहैं ॥ २२ ॥ माता और पिताके कोढी होनेसे उन्होंके वीर्य्य और रजसे पैदा जो सन्तान वो भी कोढी होता है ॥ २३ ॥ त्वचा, रुधिर, मांसमें जो स्थित कुष्ठ सो यंत्र मंत्र औषधियोंसे साध्यहै, और जो मेदा मज्जामें प्राप्तहो और द्विदोषसे उठाहो वो स्नान दान जपादिसे शांतहो ॥ २४ ॥

कुष्ठके असाध्यलक्षण ।

नरं कुष्ठिनं हन्ति कुष्ठं प्रवृद्धं त्रिदोषोद्भवं संधिमज्जास्थिसं-स्थम् ॥ प्रभिन्नस्वरं श्वासवाहं सदाहं कृमीणां क्षतेऽसृक् स्रवं रक्तनेत्रम् ॥ २५ ॥ अंगानि येन शीर्यंते क्षतेषु कृमिसंभवः ॥ भ्रूनासाक्षिस्वरा भग्नाः कुष्ठं तं परितस्त्यजेत् ॥ २६ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे कुष्ठलक्षणम् ।

अर्थ–संधि मज्जा अस्थिगत त्रिदोषसे पैदा हुआ जो कुष्ठ और बढा हुआ वो कोढी मनुष्यको मारडाले तथा भ्रष्टस्वर, श्वासवान्, दाह, और कृमियुक्त घाव रुधिरस्रवे, लालनेत्र॥२५॥ जिससे अंग फटजाय, और घावोंमें कृमि पडजाय, तथा भृकुटी नाक नेत्र जाते रहैं, स्वर बैठजाय, उस कोढीको वैद्य त्यागदे ॥ २६ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां कुष्ठरोगनिदानम् ।

शीतपीत्तोदर्दलक्षण ।

शीतवातस्य सस्पर्शाद्वातपित्तकफास्त्रयः ॥
त्वग्रक्तमांसं संदूष्य विसर्प्पतोंतरे बहिः ॥ १ ॥

उदर्दके लक्षण ।

वरटीदष्टवच्छोथो जायते त्वचि सर्वतः ॥ दाहकंडूशिरस्तोदः स्यादुदर्दस्य लक्षणम् ॥ २ ॥ मंडलानि विचित्राणि रागवंति बहूनि च ॥ सकंडूनि सतोदानि स्थूलानि परितस्त्वचि॥३॥

अर्थ–शीतल पवनके स्पर्शसे, वात, कफ, पित्त, तीनों रुधिर, मांस, त्वचा बिगाड कर भीतर और बाहर शीत पित्तरोगको पैदाकैं हैं ॥ १ ॥ जैसे वरटी (मोहारकी मक्खी) के काटनेसे सूजन होतीहै इसीतरह, सब त्वचामें हो और दाह, खुजली, शिरमें दर्दहो, उसे शीत पित्तवायु जिसे लोकमें पित्तीका रोग कहते हैं ॥ २ ॥ और जिसमें चित्रविचित्र चकत्ते रागवान् हों, और बहुतसेहों उनमें खुजली और पीडाहो तथा मोटी त्वचाहो ॥ ३ ॥

भवंति सर्वतो देहे शीतवातोद्भवानि च ॥ कफात्मकानि चिह्नानि उदर्दस्य विदुर्बुधाः ॥ ४ ॥ पित्ताधिकं भवेत्कोष्ठमुदर्दं तु कफाधिकम् ॥ वाताधिकं शीतपित्तं संनिपातं त्रिदोषजम्॥५॥

उदर्दरोगका पूर्वरूप ।

पूर्वरूपमुदर्दस्य नेत्रयोरक्ततारुचिः॥ हृल्लासतृड्ज्वरो दाहो देहसादोंगगौरवम् ॥ ६ ॥

अर्थ—सबदेहमें शीतल पवनसे और कफाधिक्यसे जो चकत्तेहों, उसे पंडित, उदर्दरोग कहते हैं ॥ ४ ॥ पित्ताधिकसे कुष्ठ होताहै, कफाधिकसे उदर्द होता है, वाताधिकसे शीतपित्त, सन्निपातसे त्रिदोषज उक्तरोग होते हैं ॥ ५ ॥ नेत्र लालहों, अरुचि खालीरद, प्यास, ज्वर, दाह, देहमें पीडा तथा भारीपना, ये उदर्दके पूर्वरूपहैं ॥ ६ ॥

कोढउत्कोढका लक्षण ।

त्वक् संदूष्य बहिर्गतो रुग्महाकाये मरुच्छीततो देहे मंडलमंडितं वितनुते शोफं सरोगान्वितम् ॥ कंडू निस्त्वचिसर्वतो वमितरा तोदं च विड्बन्धनं शैथिल्यं बलनाशनं प्रकुरुते रोमोद्गमं गौरवम् ॥ ७ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे उदर्दकुष्ठलक्षणम् ।

अर्थ—शरदीसे पवन त्वचाको बिगाड शरीरके बाहर महादारुण रोगको प्रगट करै, देहमें रुधिरके चकत्ते, सूजनयुक्तहों, उनमें खुजलीचले, त्वचा न रहै, वमन और पीडा तथा दस्तका बंद होना शिथिलता बलनाश, रोमांच, और देहभारी ॥ ७ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां शीतपित्तउदर्दकोढउत्कोढनिदानम् ।

अम्लपित्तकी उत्पत्ति ।

स्निग्धाम्लैर्बहुभोजनैरपचितैर्वैश्वानरैर्नोदरे रात्रौ जागरणेन वासरसुखं स्वापेन तापेन वा॥सक्षोभ्योपजिताम्लपित्तमुदरे हृत्कंठयोर्मस्तके नाभौ बस्तिगुदांतरेषु विविधं धत्ते रुजं दारुणाम् ॥१॥ आध्मानं कुरुतेम्लपित्तमनिशं शोषं तनौ कृष्णतामुद्गारं वितनोति धूमसहितं साम्लं मुहुर्दुःखदम्॥हृल्लासं भ्रममोहकंप-

मरुचिं दाहं च हृत्कंठयोः कंडूमंडलमंडितं सपिटिकं देहं विधत्तेऽरतिम् ॥ २ ॥ अम्लत्वमेति भुक्तान्नमपक्वं याति वह्निना ॥ शिरोर्तिशूलहृच्छोषमम्लपित्तस्यलक्षणम् ॥ ३ ॥

अर्थ–चिकना, खट्टा, बहुत भोजन करनेसे, मंदाग्निसे, रातमें जागनेसे, दिनमें सोनेसे, गर्मीमें डोलनेसे; कुपितहुआ अम्लपित्त पेटमें, हृदयमें, कंठ और मस्तकमें तथा नाभी और मूत्रस्थानमें गुदामें नानाप्रकारका रोग पैदा करताहै ॥ १ ॥ अफरा, शोफ, शरीर काला, धूमसहित खट्टी डकार बारबारमें आवें, खाली रहहो, भौंर, मोह, कम्प, अरुचि, हृदय, कण्ठमें दाह, खुजली, देहमें चकत्ते, और फुंसी, तथा अरतिको करै ॥ २ ॥ खायाहुआ अन्न मंदाग्निके कारणसे अपक्व हुआ खट्टेपनेको प्राप्त होताहै, शिरमें दर्द, शूल हृदयमें शोष, ये अम्लपित्तके लक्षणहैं ॥ ३ ॥

वातके अम्लपित्तके लक्षण ।

वाताम्लपित्तं प्रकरोति पीडां शूलं भ्रमं हृत्कमलेऽतिशोषम् ॥ मूर्च्छां प्रकंप पिटिकानि देहे कृष्णानि सूक्ष्मानि च मंडलानि४॥

पित्ताम्लपित्तके लक्षण ।

पित्ताम्लं शीतजन्यं रुजयति मनुज पित्तकोपाधिकारं रक्तांगं मण्डलाभं त्वचिगतमनिश छर्दिमूर्च्छाविपाकम् ॥ कंडूरूप सशोफं पिटिकशतचितं मोहशोकादिकारि अतर्बाह्येतिदाहं हृदि जठरगुदे शूलकृच्चर्महारि ॥ ५ ॥

कफाम्लपित्तके लक्षण ।

पित्ताम्ल कफजं करोति पिटिकां देहे सशोफान्वितामालस्य मलबंधनं वितनुते कंडूरुजं दारुणाम् ॥ निद्राभंगविमर्दनं च जडतामुद्गारमम्लान्वितं हृत्पीडामरुचिं तमः कफचयं काये गुरुत्वं वमिम् ॥ ६ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे अम्लपित्तलक्षणम् ॥

अर्थ–वातका अम्लपित्त पीडा, शूल, भ्रम, हृदयमें शोष, मूर्च्छा, कंप, फुंसी, काले और छोटे चकत्ते करताहै ॥ ४ ॥ पित्तका अम्लपित्त शीतसे पैदाहुआ मनुष्यको रोगी करै, देहमें लाल चकत्तेहों, रद्द, मूर्च्छा, अजीर्ण, खुजली, सूजन, अनेक फुंसी, मोह, शोक, भीतर बाहर दाह; हृदय, पेट, गुदा इनमें शूल, चर्मको दूर करैहै ॥ ५ ॥ कफका अम्लपित्त फुंसी, सूजन,

आलकस, मलबंध, खुजली, जडता, दारुणपीडा, निद्राका नाश, अंगोंका टूटना, खट्टीडकार, हृदयमें पीडा, अरुचि, अँधेरा, कफ गिरे, भारीपना और रद्द ये लक्षण करै है ॥ ६ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यामम्लपित्तरोगनिदानम् ।

विसर्परोगलक्षणम् ।

लवणकटुरसानांसेवनाद्धर्मतापात् प्रभवति किलरोगो दोषकोपाद्विसर्पः ॥ वपुषि चलनशीलो दग्धविस्फोटरूपो बदरफलसमानः श्वेतपीतारुणाभः ॥ १ ॥

वातके विसर्परोगका लक्षण ।

संदूष्यामिषमेदचर्मरुधिरं जातो विसर्पो बहिर्वात्मान विदधाति विद्रुमनिभान् विस्फोटकान् चञ्चलान् ॥ दीप्तांगारसमानदाहजनकान् पीडाकरान् कंडुरान् कासाध्मानमहाज्वरश्रममथोशीर्षार्तिमोहाकरान् ॥ २ ॥

पित्तके विसर्परोगका लक्षण ।

मूर्च्छां कुर्याद्विसर्प्पः प्रसरति बहुशः पैत्तिको घोररूपस्तप्ताग्र्यंगारदाहं पिटिकचयशतं नीलपीतारुणाभम् ॥ निद्रानाशं शरीरं ज्वरयति सततं रक्तमांसावशोष कासं श्वासं विचेष्टां भ्रममरुचितृषास्फोटमंगेषु मोहम् ॥ ३ ॥

अर्थ–नोनका खट्टा आदि पदार्थ खानेसे, धूपमें रहनेसे, कुपितहुये जो वात, पित्त, कफ सो, विसर्परोग फैलानेवाला दग्धफोडारूप बेरके समान सपेद पीला लालरंगके पैदा करते हैं ॥ १ ॥ वातका विसर्परोग मांस मेदाको बिगाडकर बाहर मूंगके समान चंचल फुंसीको पैदाकरै, जैसा प्रज्वलित अंगार दाहको करनेवाले, तथा पीडा कारक खुजली, खांसी, अफरा, महाज्वर, श्रम, प्यास, शिरमें दर्द, मोहको करनेवाले करताहै॥२॥पित्तका विसर्प देहमें फैल जावे मूर्च्छा हो, अंगारके समान दाह, नीली, पीली लालरंगकी फुंसी, निद्राका नाश, ज्वर, रुधिर मांसका शोष, खाँसी, श्वास, चेष्टा हीन, भ्रम, अरुचि, प्यास अंगोंका फटना, और मोहको करै है ॥ ३ ॥

कफके विसर्परोगके लक्षण ।

पिटिकाश्च विसर्पकृता रुचिराः स्फटिकद्युतयो बलवीर्यहराः॥ कफजा मिलिता बहुदुःखयुता ज्वरकासतृषालसशोफकराः ॥४॥ आग्नेयाख्यो विसर्प्पः स्याद्वातपित्तसमुद्भवः ॥ कफवा-

तोद्भवो ग्रंथिः कर्दमः कफपित्तजः ॥ ५ ॥ स सांनिपातिको ज्ञेयः सर्वलक्षणसंयुतः ॥ विसर्प्पो द्वंद्वजः साध्योऽसाध्यः स्याद्यस्त्रिदोषजः ॥ ६ ॥

विसर्परोगके उपद्रव ।

विसर्पोपद्रवा ज्ञेया मांसशोथो ज्वरो मदः ॥
मर्मरोधस्तृषाश्वासो हिक्कादाहो भ्रमो रुचिः ॥ ७ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे विसर्पलक्षणम् ।

अर्थ—कफका विसर्प रोग रुचिर (रूपवाली), स्फटिक मणिके समान, बल वीर्य की नाशक, बहुत दुःखकी देनेवाली, ज्वर, खांसी, प्यास, आलकस, सूजनको करै है ॥ ४ ॥ वात पित्तसे आग्नेय विसर्प रोग होताहै, कफवातसे ग्रंथिनाम रोग होताहै, और कफ पित्तसे कर्दमनाम विसर्प रोग पैदा होताहै ॥ ५ ॥ और जिसमें सब लक्षण मिलतेहों उसे संनिपातका विसर्प रोग जानना. द्विदोषसे पैदा विसर्प रोग साध्यहै, और त्रिदोषका असाध्य कहाहै ॥ ६ ॥ ये विसर्प रोगके उपद्रव जानने मांसमें सूजन, ज्वर, मस्ती, मर्मोंका रुकना, प्यास, श्वास, हिचकी, दाह, भ्रम, अरुचि ॥ ७ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां विसर्परोगनिदानम् ।

क्षुद्ररोगलक्षणम् ।

अजगल्लिका लक्षण ।

मुद्गासमाना पिटिकासवर्णा स्निग्धामरुच्छ्लेष्मविकारजाता ॥
देहे शिशूनां ग्रथिता च नीरुजां तामाजगल्लीं प्रवदंति संतः ॥ १ ॥

यवप्रच्छाका लक्षण ।

अरुणभा पिटिका बहुवेदना कफमरुज्जनिता ग्रथितामिषे ॥
यवसमा कठिनाभिषजांवरैर्निगदिताज्वरकृत्किल सा यवा २॥ ॥

अंजलीनामफुंसीके लक्षण ।

उन्नता मंडलाकारा वितताञ्जलिसंनिभा ॥
घना वक्राद्विदोषोत्था तां जानीहि बुधांजलीम् ॥ ३ ॥

अर्थ—जो फुन्सी मूंगके समान देहके वर्णसरीखी हो और चिकनी हो, उसे वात, कफसे पैदाहुई अजगल्लिका कहते हैं, ये बालककी देहमें पीडारहित होतीहैं ॥ १ ॥ जो फुन्सी लाल

रंगकी और पीडा युक्त मांसमें रहतीहो यवके आकारहो करडीहो वो वातकफसे पैदा ज्वरकर्त्ता यवप्रच्छा कहते हैं ॥ २ ॥ जो फुन्सी ऊंचीहो, मंडलके आकारहो, झुडीहुई अंजली सदृशाहो, भारीहो, टेढीहो, उसे पण्डित द्विदोषसे पैदा अंजलीनाम कहते हैं ॥ ३ ॥

विवृतानामफुंसीके लक्षण ।

पक्कोदुंबारिसदृशा विवृतास्या मंडलाकारा ॥
पिटिका बहुदाहयुता विद्वज्ज्ञेया विवृताख्या ॥ ४ ॥

कच्छपिकाके लक्षण ।

पिटिका कच्छपाकारा कफवातसमुद्भवा ॥
ग्रन्थियुक्तोन्नता घोरा ज्ञेया सा कच्छपी बुधैः ॥ ५ ॥

वाल्मीकफुंसीके लक्षण ।

ग्रीवासंध्यंसकक्षोदरहृदयकटीहस्तपादेषु घोरो रोगो वाल्मीकसंज्ञः प्रभवति बहुशो वर्द्धते संक्रमेण ॥ कायात्कायान्तरेषु प्रसरति बहुधा श्लेष्मपित्तानिलोत्थः पूयं वक्त्रैरनेकैर्वमति च रुधिरं वीर्यसौख्यापकारी ॥ ६ ॥

अर्थ—पके गूलरके समान फटे मुखकी मण्डलके आकार और जिसमें दाह ज्यादाहो, उसे विवृता फुन्सी कहते हैं ॥४॥ जो फुन्सी कछुयेके समान ऊंची हो, गांठहों, वात कफसे पैदाहो, उसे घोर कच्छपिका कहते हैं ॥५॥ ग्रीवाकी संधि,कंधे,कांख, पेट,हृदय,कमर, हाथ, पैर इनमें वाल्मीक नामका घोर रोग पैदा होताहै, और बांबीकी तरहहो, और क्रमसे देहमें फैलै और अनेक मुखहों उनसे राध निकले रुधिर गिरे वो वीर्यसुखको दूर करनेवाला तीनों दोषोंसे पैदा होताहै॥६॥

इन्द्रवृद्धिके लक्षण । *

शोफान्विता पद्मकर्णिकावद्दाहार्तितृष्णारतिमोहदात्री ॥
पित्तानिलोत्था पिटिकाचिता या तामिन्द्रवृद्धिङ्कथयंति वैद्याः ७

गर्दभिकाके लक्षण ।

उन्नता मंडलाकारा शोफयुक्पिटिकान्विता ॥
वातपित्तभवा रक्ता तां विद्याद्गर्दभीं बुधः ॥ ८ ॥

पाषाणगर्दभिकाके लक्षण ।

हनुसंधिगतः शोथो मंदरुक्कफवातजः ॥
स्थिरः स्निग्धो बुधैर्ज्ञेयः सैव पाषाणगर्दभः ॥ ९ ॥

* एतच्च स्त्रीणां न भवति विदेहवचनम् व्याख्यानयन्ति यदुक्तम् 'अत्यन्तसुकुमारांगा रजो दुष्टं स्रवंति च ॥ अन्यायामवता यस्मात्तस्मान्न स्खलति' स्त्रियम् इति ।

अर्थ–सूजनहो, तथा कमलकी कार्णिकाके समान हो, दाह, पीडा, तृष्णा, अरति, मोह, युक्त फुंसीहों वो वातपित्तसे पैदा इन्द्रवृद्धि नाम कहते हैं॥७॥जो फुँसी मंडलके आकार गोलहो, ऊंचीहो सूजनको लिये लालहो उसे वातपित्तसे पैदा गर्दभिका कहते हैं ॥८॥ जो फुंसी ठोडीकी संधिमें सूजन मंदपीडाको लिये हो स्थिर चिकनी वो कफवातसे पैदा पाषाणगर्दभिका कहते हैं॥ ९॥

पनसिकाके लक्षण ।

पिटिकाकफवातविकारभवा बहुवेदनकृच्छ्रवणेन्तरजा ॥
ज्वरदाहतृषारतिमोहकरा पनसा मुनिभिर्गदिता किल सा १०

जलगर्दभिकाके लक्षण ।

विसर्प्पवत् सर्पति यो हि शोफो रुजाकरः पित्तविकारजातः॥
ज्वरार्तिदाहारतिमोहपूयकृत्परैर्निरुक्तो जलगर्दभोयम् ॥११॥

इरिवेल्लिकाके लक्षण ।

पिटिकां सर्वदोषोत्थां सर्वचिह्नशिरोगताम् ॥
वर्तुलां तां विजानीहि बुध त्वं इरिवेल्लिकाम् ॥ १२ ॥

अर्थ–जो फुंसी वात कफके विकारसे पैदाहो और पीडायुक्त कानके भीतरहो, ज्वर, दाह, प्यास, अरति, मोह, लियेहो उसे मुनीश्वर पनसिका कहते हैं ॥ १० ॥ जो सूजन पहले थोडीहो फिर विसर्प रोगकी तरह फैलजाय पीडाकारक ज्वर, दाह, अरति, मोह, राध बहै, उसे जलगर्दभिका कहते हैं, वो पित्तके विकारसे होतीहै ॥ ११ ॥ जो मस्तकमें फुंसी त्रिदोषसेहो, गोलहो और त्रिदोषके लक्षण मिलतेहों उसे इरिवेल्लिका कहते हैं ॥ १२ ॥

कखलाईके लक्षण ।

कृष्णास्फोटापार्श्वकक्षांसबाहौ संस्था नून वेदनादाहयुक्ता ॥
कक्षासंज्ञांपित्तकोपाभिजातांजानीहि त्वं वैद्यराजोरुजाताम् १३

गंधमालाके लक्षण ।

कक्षाकुक्षिभवामेकां पिटिकाम्पित्तकोपजाम् ॥
त्वग्गतां दाहकृत्कृष्णां गंधमालां च तां वदेत् ॥ १४ ॥

अग्निरोहिणीके लक्षण ।

कक्षा या पिटिकोद्भवा ज्वरकरा दीप्ताग्निदाहप्रदा मांसं भेद्यविनिर्गता कफमरुत्पित्तोच्छ्रिता दारुणाः॥ सप्ताहे दशमे दिने च मनुज हतीह नूनं हठाद् दस्राद्यैर्भिषजांवरैर्निगदिता ज्वालामुखी रोहिणी ॥ १५ ॥

अर्थ—पसवाडोंमें व भुजाके एक देशमें व कंधाके एक देशमें काला फोडा हो, और पीडा दाह युक्तहो, उसे हे वैद्यराज! तू कखलाई जान ये पित्तके कोपसे होती है ॥ १३ ॥ कांखमें अथवा पसवाडोंमें काले रंगका फोडाहो त्वचामेंहो दाहयुक्त उसे गंधमाला कहते हैं, येभी पित्तके कोपसे होती है ॥ १४ ॥ कांखमें मांसको विदीर्णकर दीप्त अग्निके समान जो फोडाहो ज्वर, दाहका करनेवाला, उसे अश्विनीकुमारको आदिले वैद्योंने ज्वालामुखी रोहिणी नाम कहाहै, ये रोग मनुष्यको सात या दशदिनमें मारडालें ये सन्निपातसे पैदा होती है ॥ १५ ॥

विदारिकाके लक्षण ।

कक्षायां संधिदेशेषु विस्फोटो जायते नृणाम् ॥ विदारीकंदवद्वृत्तः सर्वलक्षणलक्षितः ॥१६॥ बहुशीर्षा विदीर्णास्या वातपित्तकफोद्भवा॥चिरपाकारुणाभेयं प्रोक्ता वैद्यैर्विदारिका ॥१७॥

शर्कराबुर्दके लक्षण ।

मेदःस्नायुशिरामांसं दूष्य वायुर्बहिर्गतः ॥
ग्रन्थि शोष्यामिषं कुर्यात्त विद्याच्छर्करार्बुदम् ॥ १८ ॥

अर्थ—कांखमें या संधियोंमें फोडा विदारीकंदके समान गोलहो, और सब लक्षण मिलतेहों ॥ १६ ॥ बहुतसे शिरहों और खुलेमुखकी, देरमें पकै, लालरंगकी इसे वैद्योंने विदारिकानाम कहीहै, ये भी सन्निपातसे होतीहै ॥ १७ ॥ वात, मेदा, मांस, नस इनमें प्राप्तहो और इनको बिगाडकर बाहर प्राप्तहो फेर गांठको पैदाकरे और शोषको करै, उसे शर्करार्बुद कहते हैं॥१८॥

शर्करार्बुदरुक्कुर्याच्छर्करासदृशामिषम् ॥
शिरास्रावं च दुर्गंधं क्लिन्न गात्रं निरामिषम् ॥ १९ ॥

कदरफुन्सीके लक्षण ।

कंटकैः शर्करैः पादे सक्षते ग्रन्थिरुद्भवः ॥
कीलवद्वर्द्धते नित्यं तं विद्यात्कदरं बुधैः ॥ २० ॥

बिवाईके लक्षण ।

अतिक्रमणशीलस्य पादयोरुक्षयोर्महत् ॥
दारी च कुरुते कोपात्तं विद्यात्तलसंश्रितम् ॥ २१ ॥

अर्थ—शर्करार्बुद रोग मांसको शर्कराके समान करदे और नस चुचावै तथा दुर्गंध युक्तहो ारीरखेदित और मांस रहित करदेताहै ॥ १९ ॥ कांटे व कंकरीके पैरमें लगनेसे जो गांठ दाहो और कीलकी तरह बढे उसे, कदर नाम कहतेहैं ॥ २० ॥ जो मनुष्य बहुत डोलाकरै सके पैरोंमें रूखापनहो और पैरकी एडी फटजाय उसे तलसंश्रित अर्थात् बिवाई कहते हैं ॥२१॥

खारुयेके लक्षण ।

दुष्टकर्दमसंस्पर्शात्पादांगुल्योंतरे बहुः ॥
कंडूसुखात्तिदाहार्तिशोथयुक्तोऽलसंविदुः ॥ २२ ॥

इन्द्रलुप्तके लक्षण ।

रोमाणां कूपमध्येषु वातपित्तौ विनिर्गतौ॥मूर्छितौ तत्र रोमाणां तौ प्रच्यावयतेहटात् ॥ २३ ॥ श्लेष्मासृग्रोमकूपांस्तु रुणद्धि परितो भृशम्॥बध्नात्युत्पत्तिमन्येषामिंद्रलुप्तन्तमादिशेत् २४॥

अर्थ-दुष्टकीच पैरकी उंगलियोंमें लगनेसे सूजनहो और खुजानेसे सुखहो दाह और पीडाहो उसे अलसनाम अर्थात् खारुए कहते हैं ॥ २२ ॥ रोमकूपसे वात पित्त निकलकर मूर्च्छित हो, हठसे बालोंको दूरकरदेवै ॥ २३ ॥ फिर कफ और रुधिर बाल जमनेके स्थानको रोकदें बाल उगने नहीं दे उसे इन्द्रलुप्त कहते हैं ॥ २४ ॥

इन्द्रलुप्तस्य नामानि प्रोक्तानि भिषजांवरैः ॥
खालित्यमपरेरुह्या प्राहुश्चाचैंति चापरे ॥ २५ ॥

अरुंषिकाके लक्षण ।

अतिरूक्षतमे शीर्षे बहुकण्डुसमन्विते ॥ जायते दारुणो रोगः कफमारुतरोगतः ॥ २६ ॥ अत्यंतश्रमकोपाभ्यां जातं पित्तं च मूर्द्धनि ॥ तेन पक्वाः कृताः केशाज्ञेयानि पलितानि च ॥ २७ ॥

अर्थ-इंद्रलुप्तके ये नाम और भी वैद्य कहते हैं, खालित्य और रुह्या तथा चांदलो ये रोग ठीक नहीं होता ॥ २५ ॥ केश पैदा होनेकी भूमिमें खुजली चलै, और वह जगह रूखी होजाय, उसके वात कफसे अरुंषिका दारुण रोगहो ॥ २६ ॥ अतिश्रम और क्रोधसे पित्त शिरमें प्राप्तहोकर बालोंको सपेद करदेता है, उसे पलित रोग कहतेहैं ॥ २७ ॥

मुखदूषिकाके लक्षण ।

कफानिलाभ्यां सहशोणिताभ्यां यूनां शरीरे पिटिकाभिजाता ॥
दाहार्तिकृत्कण्टकतीव्रवेधी बुधैर्निरुक्ता मुखदूषिका सा ॥ २८ ॥

तिलके लक्षण ।

तिलप्रमाणानि च नीरुजानि स्थिराणि गात्रेषु समुद्भवानि ॥
कृष्णानि पित्तानिलकोपजानि तिलानि तानि प्रवदंति संतः २९

मस्सेका लक्षण ।

दृढोन्नतं पित्तकफानिलोत्थं माषप्रमाणं पलग्रन्थिरूपम् ॥

कृष्णं स्थिरं नीरुजवद्विपाकं तं माषसंज्ञं कथयन्ति वैद्याः ॥३०॥

अर्थ–वात, कफ और रुधिरके कोपसे जवान पुरुषोंके जो फुन्सी मुखपरहो दाह और पीडा तथा सेमलके कांटेकेसमान उसे मुखदूषिका अर्थात् मुहांसे कहते हैं॥२८॥तिलके समान पीडा रहित स्थिर देहमें जो कालादागहो उसे वातपित्तसे पैदा तिलनाम कहतेहैं॥२९॥ दृढ और ऊंचा तथा उडदके समान मांसकी गांठ काली और पीडा तथा पाकरहितहो उसे वैद्य मस्सा कहते हैं॥३०॥

न्यच्छके लक्षण ।

गात्रोत्थं मंडलं कृष्णं शीतं वा महदल्पकम् ॥
नीरुजं कफजं विद्यात्तं रुजं न्यच्छसंज्ञकम् ॥ ३१ ॥

व्यंग अर्थात झाईके लक्षण ।

कोपश्रमाभ्यांकुपितोऽनिलोनिशमाश्रित्य वक्रंवितनोति मंडलम्॥
कृष्णं मुखोत्थं तनुनीरुजंभृशं व्यंगं रुजं तंप्रवदंति साधवः॥३२॥

नीलिकाके लक्षण ।

ऊष्मणा सहितो वायुर्बहिरागत्य कोपतः ॥
विदधाति मुखे छायां नीलिकां तां विदुर्बुधाः ॥ ३३ ॥

अर्थ–शरीरमें काला वा सपेद मण्डल छोटा वा बडाहो, और पीडारहितहो, उसे न्यच्छसन संज्ञक कहते हैं ॥ ३१ ॥ कोप और श्रमसे कुपितहुये वात पित्त सो मुखमें प्राप्तहो मंडलको करैं हैं, और वो कालाहो पीडा रहित उसे महात्मा व्यंगरोग कहते हैं ॥ ३२ ॥ गर्मीके साथ पवन कोपहो बाहर निकल मुखपर जो छाया करदे उसे पंडित नीलिका कहते हैं ॥ ३३ ॥

कर्णिकाके लक्षण ।

संमर्दनात्पीडनतोभिघातान्मेढ्रस्य चर्मानुगतो हि वातः ॥
मणेरधस्तात्प्रकरोति कोशं ग्रंथिं च विद्यात्किलकर्णिकां ताम् ३४

अवपाटिकाके लक्षण ।

नखाभिघाताद्युवतीप्रसंगादुद्वर्तनाद्वीर्यगतेः प्ररोधात् ॥ संपी-
डनाद्यस्य च चर्मपाटचते बुधैर्निरुक्ताकिलपाटिका सा ॥३५॥

निरुद्धप्रकाशरोगलक्षण ।

स्रोतांसि मूत्रस्य रुणद्धि वातो मणिस्थितो वीर्यगतेर्निरोधात्॥
मूत्रं प्रवर्त्तेत मणिं विदीर्य विद्यान्निरुद्धप्रकाशं हि वैद्यः ॥३६॥

अर्थ–मसलनेसे वा पीडासे अथवा चोट लगनेसे अंडकोशकी चर्ममें प्राप्तभई वात सो कुपितहो सुपारीके नीचे गांठको पैदा करै, उसे कर्णिका कहते हैं ॥ ३४ ॥ नखके लगनेसे अथवा जिस स्त्रीकी योनि छोटीहो उससे संग करनेसे उबटनेसे, वीर्यकी गति रोकनेसे लिंगेन्द्रीके

मीडनेसे लिंगकी चाम उतर जाय उसे पंडित अवपाटिका कहते हैं ॥ ३५ ॥ वीर्य्यकी गति रोकनेसे लिंगकी सुपारीके बीचमें स्थित जो वात सो मूत्रके मार्गको रोकदे फिर मूत्र सुपारीको खेदकरता उतरे, उसे वैद्य निरुद्ध प्रकाशरोग कहते हैं ॥ ३६ ॥

सन्निरुद्धगुदाके लक्षण ।

अपानवातस्य गतेर्विघातात्प्रकुप्य वातो विहितो गुदस्थः ॥ रुणद्धिमार्गं कुरुतेऽतिसूक्ष्मं द्वारं च विद्यात्किलदुस्तरं तत्॥३७॥

गुदभ्रंशरोगका लक्षण ।

निर्गच्छन्ति बहिर्गुदाः कृशतनोरूक्षाशिनो रोगिणोऽतीसारेण युतस्य तं मुनिगणाः प्राहुर्गुदभ्रंशकम् ॥

शूकरदंष्ट्ररोगका लक्षण ।

त्वक्पाको बहिर्निर्गतः किल गुदः कंडूधरो दाहकृद्रोगः शूकरदंष्टको मुनिवरैः प्रोक्तो ज्वरार्तिप्रदः ॥ ३८ ॥

वृषणकच्छूरोगके लक्षण ।

वृषणस्थं मलं स्वेदात्कंडूस्फोटं वितन्वते ॥ संस्रावं कफपित्तोत्थं विद्याद्वृषणकच्छुरम् ॥ ३९ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे क्षुद्ररोगाणां नानाप्रकाराणां लक्षणम् ।

अर्थ—अपान वातकी गति रोकनेसे कुपितहुई गुदाकी पवन सो गुदाके मार्गको छोटा करदे उसे दुस्तर रोग कहते हैं ॥ ३७ ॥ कृशदेहवाले पुरुषकी तथा रूखा खानेवालेकी तथा अतीसारवाले पुरुषकी गुदा बाहर निकल आवे उसे गुदभ्रंश रोग कहते हैं, जिसकी गुदा बाहर निकसि आवै और त्वचा पकजाय उस जगह खुजली चलै तथा ज्वर पीडा दाह हो उसे मुनीश्वरोंनें शूकरदंष्ट्ररोग कहा है ॥ ३८ ॥ अंडकोशोंके नहीं धोनेसे मैल जमजावे तब उस जगह पसीना आवै और खुजली चलै, और खुजानेसे फोडा होजावे, और वो स्रवै उसे, वृषणकच्छु रोग कहते हैं, ये रोग कफ पित्तसे होता है ॥३९॥ इति हंसराजार्थबोधिन्यां क्षुद्ररोगनिदानम् ।

अथ मुखरोगलक्षणम् ।

ओष्ठौ मारुतकोपतोऽतिपरुषौ स्तब्धौ महावेदनौ भिद्येते दलसंयुतौ मुनिवरैः प्रोक्तौ च वातात्मकौ ॥ रक्तौष्ठौ खरदाहपाकपिटिकायुक्तौ च तौ पित्तलौ कृष्णौ पिच्छिलशोफशीतपिटिकापीडान्वितौ श्लेष्मलौ ॥ १ ॥

सन्निपातजनितओष्ठलक्षणम् ।

नानावर्णधरावोष्ठौ नानारोगसमन्वितौ ॥
पिटिकाभिर्युतौ स्थूलौ विज्ञेयौ सान्निपातिकौ ॥ २ ॥

दंतरोगनिदानम् ।

आवृत्य दंतान्परितोऽपि रक्तं प्रवर्त्तते दन्तपल विशीर्यते ॥
सक्लेददुर्गंधयुतं च कृष्णं शीतोदसंज्ञः कफरक्तजोयम् ॥ ३ ॥

अर्थ–प्रथम ओठके रोग कहते हैं ॥ बादीसे ओठ कठोर और टेढे तथा पीडायुक्त और फटजायँ, ऐसे मुनीश्वरोंने कहाहै, और लाल करडे दाह युक्त और पकजावे पीडिकायुक्त हों, उनको पित्तके कोपसे जानना और काले तथा गाढे सूजन युक्त शीतल पीडिका युक्त तथा पीडायुक्त ऐसे लक्षणोंसे कफका ओठमें रोग जानना ॥ १ ॥ जिनका अनेक प्रकारका वर्ण हो और अनेक रोगयुक्त हों, पीडिका और मोटेहों ऐसा, ओठोंका रोग सन्निपातका जानना ॥ २ ॥ दांतोंमें प्राप्त हो और रुधिर निकाले और दांतोंमें जो मांस उसको दांतोंसे छुडाय दे तथा क्लेद और दुर्गंध युक्त हो तथा काला हो वो कफरुधिरसे पैदा शीतोद संज्ञक दांतरोग जानना ॥ ३ ॥

दंतपुप्पुटरोगके लक्षण ।

मध्येषु त्रिषु दंतेषु नीरुक्शोफः प्रजायते ॥
दंतपुप्पुटको रोगो गदितो भिषजांवरैः ॥ ४ ॥

दंतवेशरोगके लक्षण ।

रचयति बहुशोफ दंतमुत्पाटनाय पचयति किलमांसंदंतसंलग्नजातम् ॥ व्यथयति मुखदेश स्रावयत्याशु रक्त कफपवनविकारात्संभवो दंतवेशः ॥ ५ ॥

सौषिरनामदंतरोगलक्षण ।

लालास्रावी महातापी दंतमूलेषु शोफवान् ॥
सौषिराख्यो हि विज्ञेयो रोगो रक्तसमुद्भवः ॥ ६ ॥

अर्थ–जो मध्यके तीन दांतोंमें पीडारहित सूजन हो उसे दंतपुप्पुटरोग कहते हैं ॥४॥ जो दांतोंके उखाडनेके लिये सूजनको प्रगट करै, और दांतके संलग्न मांसको पृथक् करै, और मु खमें पीडाकरै, रुधिर स्रवे उसे वातकफसे पैदा दंतवेश नाम रोग कहते हैं ॥ ५ ॥ लार टपका करै, महा ताप होय, दांतोंकी जड़में सूजन हो वो रुधिरसे पैदा सौषिर नामक दंत रोगहै॥६॥

महासौषिरदंतरोगलक्षण ।

दंतानावेष्टय यस्तालुं दारयेच्च विसर्प्पवत् ॥ नानाव्याधिकरं

विद्यात्तं महासौषिरं रुजम् ॥ ७ ॥ दंतसंलग्नमांसानि विदारयति शोणितम् ॥ निष्ठीवयति यः पित्तादसृक्परिषरोहिसः ८॥

शोफकशदंतरोगलक्षण ।

दंतानापीडच यो रोगश्चालयेच्च मुहुर्मुहुः ॥
पित्तरक्तकफोद्भूतो ज्ञेयः शोफकशो बुधैः ॥ ९ ॥

अर्थ–दांतोंको ढक कर और विसर्प रोगकीसी तरह तालुयेको विदीर्ण करै, और नानाप्रकारके रोग युक्त हों उसे महासौषिर दंतरोग कहते हैं॥७॥जो दांतसे लगे मांसको विदीर्ण करै और रुधिर मुखसे गिरै, वो पित्तसे पैदा असृक्परिषर दंतरोग जानना॥८॥जो दांतोंको पीडाकरे और बारबार चलायमान करदे पित्त,कफ और रुधिरसे पैदाहो सो शोफकश रोग जानना ॥९॥

वैदर्भरोगके लक्षण ।

वैदर्भरोगः कथितोभिघातजः सरक्तपित्तानिलकोपसंभवः ॥ संपीड्य दंतान्परिचालयत्यलं क्वचित्क्वचिच्छ्रावयतीवशोणितम् १०

करालनामदंतरोगके लक्षण ।

वायुर्दंतांतरे दन्तान्कुरुते तीव्रवेदनाम् ॥
वर्द्धते विकटान् रूक्षान् सकरालोऽभिधीयते ॥ ११ ॥

अधिकमांसरोगके लक्षण ।

हनुगते दशने किलपश्चिमेऽधिकतरार्तिकरेबहुशोफवान् ॥
कफकृतः पवनेन युतोनिशं मुनिवरैर्गदितोधिकमांसकः ॥१२॥

अर्थ–वैदर्भ रोग चोटके लगनेसे रुधिरसे वात और पित्तके कोपसे दांतोंमें पीडाकरे और चलायमान करदे और कभी कभी रुधिर भी मुखसे गिरै ॥ १० ॥ वादी दांतोंके अन्दर दांत को पैदा करै, और उनमें दर्द हो तथा वे टेढे हों, रूखे हों, और बडे वो कराल नाम दंतरोग कहाहै ॥ ११ ॥ ठोडीके पश्चिम देशमें दांत पैदा हो और उसमें पीडा अधिक हो और सूजनहो, वो वात कफसे पैदा मुनीश्वरोंने अधिक मांसरोग कहाहै ॥ १२ ॥

कीटदंतरोगके लक्षण ।

दंते दंते कृष्णछिद्रं करोति लालास्रावी चञ्चलो दुष्टगंधिः ॥
पीडायुक्तः शोफसंरंभकारी प्रोक्तो वैद्यैः कीटदंतः स रोगः॥ १३॥

भंजनकदंतरोगके लक्षण ।

यो दंतभंगं कुरुते हि वक्त्रे पापात्मनां भोजनदुःखितानाम् ॥
वातेन जातः कफमिश्रितेन जानीहि तं भंजनकं हि वैद्यः॥ १४॥

दंतविद्रधिरोगके लक्षण ।

दंतसंलग्नजं मांसं बलाढ्यम्बहुशोफयुक् ॥
रक्तपूयाश्रयं क्लिन्न त विद्याद्दंतविद्रधिम् ॥ १५ ॥

अर्थ–दांत दांतमें काले छिद्र करदे लार टपके चंचल और दुष्ट गन्ध आवे पीडा और सूजनको बढावे वो वैद्योंने कीट दंतरोग कहा है ॥ १३ ॥ पापीमनुष्योंके मुखसे दांतोंको उखाडडाले इसीसे भोजन करनेमें दुःखित हो वो बादीसे और कफसे प्रगट ऐसा भंजनक नाम दंतरोग जानना ॥ १४ ॥ दांतोंसे मिलाहुआ जो मांस उसमें मैल बहुतहो और सूजनहो, तथा रुधिरराध स्रवै, वो दंत विद्रधि रोग जानना ॥ १५ ॥

दंतहर्षरोगके लक्षण ।

शीतवाताम्लसंस्पर्शाद्दंतपीडासहो गदः ॥
दंतहर्षः स विज्ञेयो वातपित्तसमुद्भवः ॥ १६ ॥

दंतशर्करारोगके लक्षण ।

मलो दंतगतः स्थूलः शर्करेव चिरस्थितः ॥
कफोद्भूतो बुधैर्ज्ञेयः सा रुजा दंतशर्करा ॥ १७ ॥

दंतश्यावरोगके लक्षण ।

दंडादीनां विघाताद्वा कोपाच्छोणितपित्तयोः ॥
प्राप्नोति कृष्णतां दंतोदंतश्यावो रुगुच्यते ॥ १८ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे ओष्ठदंतरोगलक्षणम् ।

अर्थ–शीतल वात और खट्टी वस्तुके स्पर्शसे जो दांतोंमें पीडाहो वो वातपित्तसे प्रगट दंतहर्षरोग जानना ॥ १६ ॥ दांतोंमें मैल बहुत शर्कराकीसी तरह रहै, वो पंडितोंने शर्करा रोग कहा है ॥ १७ ॥ दंड आदि चोट लगनेसे और रुधिर पित्तके कोपसे जो कालेदांत पडजायँ उसे दन्तश्यावरोग कहते हैं ॥ १८ ॥

इति माथुरदत्तरामकृते हंसराजार्थबोधिनीभाषाविवरणे ओष्ठदन्तरोगलक्षणम् ।

अथ जिह्वारोगनिदानम् ।

वातेन स्फुटिता कठोररसना रूक्षाप्रसुप्तार्तिदा पित्तेनोष्णतरार्ति-
दाहसहितादीर्घारुणैःकंटकैः॥संयुक्ताचकफेन सा गुरुतरामांसो-
त्थितैरंकुरैःश्वेतैःशाल्मलिकंटकाकृतिधरैर्युक्तातिशोफान्विता १॥

उल्लासनामजिह्वारोगके लक्षण।

जिह्वातले महाशोथो गुरुग्रंथियुतो दृढः॥ पूयशोणितयुक्पाकः सोल्लासः कथितो बुधैः॥ २॥ जिह्वाग्रमानम्य करोति शोथं लालान्वितं तीव्रविपाकमुग्रम्॥ कंडूयुतं रक्तकफाधिशूलं रुक्शोफजिह्वा कथिता भिषग्भिः॥ ३॥

अर्थ–वादीसे जीभ कठोर और फटी तथा रूखी प्रसुत पीडायुक्त होती है, पित्तसे गरम, दाहयुक्त, बडे और लालकांटोंसे युक्त जाननी कफसे भारी सपेद, सेमरके कांटे सरीखे कांटे और सूजन युक्त होती है॥ १॥ जीभके नीचे सूजन बहुत हो तथा भारी और कठिन गांठहो रुधिर और राधयुक्त हो वो पकजाय उसे उल्लासनाम जीभका रोग कहते हैं॥ २॥ जीभके अग्रभागमें सूजन हो और लारगिरै बहुत पके तथा खुचली चलै और रुधिर कफसे शूल ज्यादे हो वो शोफजिह्वानाम रोग कहा है॥ ३॥

तालुमूलोत्थितः शोथः कासश्वासतृषान्वितः॥ सव्यथः कफरक्तात्मा कंठतुण्डः स कथ्यते॥४॥ तालुकोशगतः शोथश्चिरपाकी ज्वरान्वितः॥दाहार्तिकासकृत्स्रावी तुंडकेशीसउच्यते ५॥

कच्छपरोगके लक्षण।

कूर्माकारः प्रोन्नतस्तालुदेशे शोथःसोक्तःकच्छपो वैद्यराजैः॥रक्ताज्जातो रक्तवर्णो ज्वराढ्यः स्तब्धः शोफः कोलमात्रः कफात्मा ६॥

अर्थ–और जो तालुयेके मूलमें सूजन, खांसी, श्वास, युक्त तथा प्याससे संयुक्त हो, और दर्द होताहो वो कफ पित्तसे प्रगट तुंडनाम रोग कहा है॥ ४॥ जो तालुके कोशमें सूजन हो और देरमें पके ज्वर युक्त और उसमें खांसी, दाह, पीडाहो, स्रवै, उसे तुंडकेशी रोग कहते हैं॥५॥ तालुयेमें कछुयेके आकार ऊंची सूजनहो उसको वैद्योंने कच्छप नाम रोग कहाहै, रक्तसे पैदा भया और लालवर्ण तथा ज्वरयुक्त टेढा और सजनहो बेरके प्रमाण वो कफसे पैदा जानना॥ ६॥

तालुपाकतालुशोषलक्षण।

पित्ताज्जातं शोथमुग्रं सदाहं तृष्णायुक्तं तालुपाकं वदेद्ज्ञः॥ वातोद्भूतः श्वासकासार्तिशोषैर्युक्तः शोथस्तालुशोषो भवेत्सः ७॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे जिह्वातालूनां लक्षणानि।

अर्थ–सूजन जार दाह तथा प्यासहो, उसे पंडित तालुपाक रोग कहतेहैं, ये पित्तसे पैदा होताहै और जिसमें श्वास, खांसी, शोथ और सूजनहो वो वातसे पैदा तालुशोष रोगहै॥ ७॥

इति माथुरदत्तरामपाठकप्रणीतायां हंसराजार्थबोधिनीटीकायां जिह्वातालुरोगनिदानं समाप्तम्।

गलरोगस्यनिदानम् ।

पित्तश्लेष्मशरीरिणां गलगताः संदूष्य रक्तामिषं ते तत्रैव विमूर्च्छिताः प्रकुपिताः कुर्वंति नानागदान् ॥ मांसोत्थैः कठिनांकुरैश्च परितो रुंधंति कंठानिलं प्राणानाशु विकर्षयंति मुनिभिः सा रोहिणी प्रोच्यते ॥ १ ॥

वातरोहिणीके लक्षण ।

चिह्नानि वातरोहिण्या गले मांसभवांकुराः ॥
ज्वरार्त्तिकारिणी तीव्रा शोषिणी कंठरोधिनी ॥ २ ॥

पित्तरोहिणीके लक्षण ।

मांसांकुरा गलोत्पन्ना दाहिनस्तीव्रवेदनाः ॥
सूक्ष्मत्वचस्त्वरापाकाश्चिह्नैः स्यात्पित्तरोहिणी ॥ ३ ॥

अर्थ–मनुष्योंके वात, पित्त, कफ गलेमें प्राप्तहो रुधिर और मांसको बिगाड फिर आप दुष्ट हो नानाप्रकारके गलेमें रोग करते हैं, और मांससे प्रगट भये जो कठिन अंकुर उनसे कंठको रोक तथा श्वासको रोकदे और प्राणको निकालदे उसे रोहिणी नाम कंठरोग कहतेहैं ॥१॥ वातरोहिणीके ये लक्षणहैं, गलेमें मांसके अंकुर हों, सो ज्वर और पीडा, शोष, तथा कंठको रोकदे ॥२॥ मांसके अंकुर जो हों, उनमें दाह और तीव्र पीडा छोटे जल्दी पकें ये पित्तरोहिणीके लक्षण हैं ॥ ३ ॥

कफरोहिणीके लक्षण ।

मांसांकुरैः स्थूलतरैरपाकैः कंठांतरोत्थैः कठिनैरवेदनैः ॥
दीर्घैस्स्थिरैः कंडुरशोथवद्भिर्ज्ञेयाभिषग्भिः कफरोहिणी सा॥४॥

रुधिरकी रोहिणीके लक्षण ।

कंठांतरोत्थैः पिटिकैरुजान्वितैः सूक्ष्मैः सशोथैर्गलरोगकारकैः ॥
श्वासार्तिकासज्वरदाहमोहैर्ज्ञेया बुधै रक्तभवा च रोहिणी ॥५॥

कंठशालूकरोगके लक्षण ।

कठे जातं ग्रन्थिरूपं कफोत्थं साध्यं शास्त्रैः कोलमज्जासमानम्॥
स्थैर्यं कण्डूशोफयुक्तं कठोरं विज्ञेयं तं कंठशालूकरोगम् ॥ ६ ॥

अर्थ–मांसके अंकुर गलेमें मोटेहों,पकें नहीं,तथा कठिन पीडारहित,लंबेहों,स्थिरहों,खुजली, सूजन रहित, वो वैद्योंने कफरोहिणी कही है ॥४॥ कंठमें अंकुर छोटेहों और उनमें पीडा हो और सूजन तथा गलेके रोगोंको प्रगट करनेवाले,श्वास,पीडा,खांसी,ज्वर,दाह,मोहयुक्तहो,उसे रुधिरकी रोहणी रोग कहते हैं ॥५॥ कोलकी मज्जा अर्थात् बेरकी गुठलीके समान कंठमें गांठ पैदा हो वो कफसे प्रगट साध्य है,स्थिर हो खुजली सूजन कठोर ये कंठशालूक रोगके लक्षण कहेहैं॥६॥

अधिजिह्वारोगके लक्षण ।

शोथो जिह्वाग्रभागस्थः पाकरक्तकफोद्भवः ॥
जिह्वाबंधो महोग्रार्त्तिरधिजिह्वो विधीयते ॥ ७ ॥

बलासाक्षरोगके लक्षण ।

श्लेष्मानिलौ गले शोथं कुरुतः श्वाससंभवम् ॥
मर्मच्छिद्रं गुरुस्थूलं बलासाक्षं विदुर्बुधाः ॥ ८ ॥

नासाशतघ्नीरोगके लक्षण ।

वर्तिर्गलस्था बहुवेदनान्विता मांसांकुरस्था परिकंठरोधिनी॥
दोषैर्युता प्राणहरी सकंटका नासाशतघ्नी परिकीर्त्तिता बुधैः॥९॥

अर्थ–जिह्वाके अग्रभागमें सूजन हो, पके जीभको स्तम्भन करदे, बहुत पीडा हो उसे रुधिर कफसे प्रगट अधिजिह्वरोग कहा है ॥ ७ ॥ कफ और वात गलेमें सूजन करै तथा श्वास और मर्म स्थानमें छिद्र तथा मोटा और भारी हो उसे बलासाक्ष रोग कहा है ॥ ८ ॥ उसे पंडितोंने नासा शतघ्नीरोग कहा है, जिसमें पीडायुक्त गलेमें बत्तीसीहो तथा मांसके अंकुरनसे कंठ रुकाहो दोषोंसे परिपूर्ण हो प्राणके हरनेवाली कांटे युक्त हो ॥ ९ ॥

गलायुरोगके लक्षण ।

ग्रन्थिर्गलस्थोबदरप्रमाणो नीरुक्स्थिरोऽसाध्यतमः कफात्मा॥
प्रोक्तोगलायुर्मुनिभिः कदाचिद्रोगं सपक्षं परितो न पश्येत्॥ १०॥

गलविद्रधिरोगके लक्षण ।

शोथः सर्वं गलं व्याप्य वर्द्धते बहुरोगवान् ॥
त्रिदोषोत्थो महान्वैद्यैः स ज्ञेयो गलविद्रधिः ॥ ११ ॥

गलौघरोगके लक्षण ।

शोथो गलस्थो बहुरूपधारी कंठावरोधी गलदाहकारी ॥
श्लेष्मासृगुत्थो बलवीर्यहारी प्रोक्तो गलौघो मुनिभिर्विकारी १२

अर्थ–गलेमें गांठ बेरके समान हो, पीडारहित, स्थिर हो तो असाध्य कहा है ये कफसे प्रगट होताहै पक्षउपरांत नहीं रहै ॥१०॥ जो सूजन सब गलेमें व्याप्त हो फिर बढै और बहुतसे रोगयुक्त हो उसे सन्निपातसे प्रगट गलविद्रधि रोगकहाहै ॥ ११ ॥ अनेक प्रकारकी सूजन गलेमेंहो और कंठको रोकनेवाली तथा गलेमें दाहके करनेवाली और बल वीर्यका नाशक कफरुधिरसे पैदा गलौघनाम रोग मुनीश्वरोंने कहाहै ॥ १२ ॥

अतिसूक्ष्मतरा वदनांतरगाः परितः खचिता सुखतोदकराः ॥

पवनस्य विकारभवा बहुधा परिपाकयुताःसितभा ज्वरदाः ॥
॥१३॥अरुणद्युतयो मुखमध्यभवास्तनुरूपधरा बलवीर्यहराः॥
वदनार्तितृषाज्वरदाहकराः पिटिकाः किल पित्तभवा भणिताः
॥१४॥ चिरपाकयुता विरुजाकठिनाः कफकोपविकारभवा मु-
खजाः॥गुरवोऽल्पमसूरदलाकृतयः खरकंडुरदामुखपाककराः१५

अर्थ–बहुत छोटीफुन्सी मुखके भीतर पैदाहोयँ,और मुखमें पीडाकरैं, तथा सपेद और ज्वरके करनेवाली और पकनेवाली ये वातके बिकारसे पैदा होती हैं॥१३॥ लालरंगकी फुन्सी मुखमेंहों छोटी तथा बलवीर्यकी नाशक मुखमें पीडाकरै,तथा प्यास,ज्वर,दाहको करैं, वो पित्तके विकारसे पैदा होती हैं॥१४॥जो फुन्सी देरमें पकैं पीडाहो, या नहीं,कठिन और मसूरके दालकी समानहों, तीखी खुजली चलै और बडीहों तथा मुखके पाककरनेवाली ये कफके विकारसे होती हैं ॥१५॥

पित्तशोणितकोपेन मुखपाकोभिजायते ॥
ऊष्मारतिव्यथादाहज्वरशोपतृषार्त्तिकृत् ॥ १६ ॥
इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे
गलमुखरोगाणां लक्षणानि।

अर्थ–पित्त और रुधिरके कोपसे मुखपाक होताहै, वो गरमी तथा अरति, पीडा, दाह, ज्वर, शोष, प्यास, इनका करनेवाला होताहै ॥ १६ ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामपाठकप्रणीतहंसराजार्थबोधिनीटीकायां गलमुखरोगनिदानं समाप्तम्।

अथ कर्णरोगनिदानम्।

वातः प्रचंडः स्वगतिं निरुध्य श्लेष्मान्वितो वक्रगतिं विधाय॥
कर्णांतरे पीडयतीव कोपात्तत्कर्णशूल कथितं भिषग्भिः ॥ १ ॥

कर्णनादके लक्षण।

कर्णस्रोतांसि संवेष्टय संभ्रमन्मारुतो बली ॥करोति विविधा-
ञ्छब्दान्कर्णनादः स कथ्यते॥२॥ स्रोतांसिकर्णयोर्यस्यवहंति
श्लेष्ममारुतौ॥स मनुष्योऽल्पकालेन बधिरत्व प्रजायते॥३॥

अर्थ–प्रचंड जो वात सो अपनी गतिको रोक और कफके संग है टेढी गतिसे चलै, और कानमें पीडाकरै उसे वैद्य कर्णशूल कहते हैं ॥ १ ॥ प्रबल जो वात सो भ्रमणकर्त्ताहुआ कानोंके छिद्रोंको बंदकर और अनेक प्रकारके शब्द करै, उसे कर्णनाद कहते हैं ॥ २ ॥ जिसके कानमें वात और कफ प्राप्तहो वो मनुष्य थोडेही कालमें बहिरा हो ॥ ३ ॥

शब्दछेडके लक्षण ।

पित्तश्लेष्मान्वितो वायुः कर्णरन्ध्रेषु संस्थितः ॥
करोति गुंजवच्छब्दं स शब्दछेड उच्यते ॥ ४ ॥

स्रावगदरोगके लक्षण ।

जलस्य पाताच्छुतिरन्ध्रमध्ये शस्त्रादिकैर्वा शिरसोभिघातात्॥
वातार्दितो यः श्रवणः सरक्तं पूयं स्रवेत्स्रावगदो निरुक्तः ॥ ५ ॥

कर्णगूथरोगके लक्षण ।

वातेरितः कफः कुर्यात्कंडूं श्रवणयोर्द्वयोः ॥
श्लेष्मापित्तोष्मणा शुष्कः कर्णगूथः स जायते ॥ ६ ॥

अर्थ–पित्त कफयुक्त जो वात सो कानोंके छिद्रोंमें स्थित होय, तब मनुष्यके कानोंमें गुञ्जार शब्दहो, उसे शब्दछेडरोग कहते हैं ॥ ४ ॥ कानमें जलके पडनेसे तथा शस्त्रआदिके लगनेसे अथवा शिरमें चोटके लगनेसे वातसे पीडित कानमेंसे जो रुधिर और राध निकले उसे स्रावगद रोग कहते हैं ॥ ५ ॥ वातकरके प्रेरित जो कफ सो दोनों कानोंमें खुजली पैदा करै और पित्तकी गर्मीसे कफ शुष्क होजाय तब कर्णगूथ रोग पैदा हो ॥ ६ ॥

प्रतीनाहके लक्षण ।

सकर्णगूथो द्रवतां यदा नयेत्पुनश्च तत्रैव विलीयतेऽनिशम् ॥
मुखं च नासां स पुनः प्रपद्यते बुधैः प्रतीनाहमिहोच्यतेतत् ॥७॥

कृमिकर्णरोगके लक्षण ।

श्लेष्मामूर्च्छांगतः कर्णे जंतूंश्च सृजते बहून् ॥ शिरोर्द्धे कुरुते पीडां कृमिकर्णो बुधैः स्मृतः ॥ ८ ॥ श्रवणे श्लेष्मणा पूर्णे संप्रविश्येव मक्षिका ॥ जंतूंश्च स्रवते शीघ्रं कृमिकर्णोऽभिधीयते९

अर्थ–वोही कर्णगूथ रोग पतला होकर फेर जातारहै फेर मुख और नाकमें पैदा हो, उसे वैद्योंने प्रतीनाह रोग कहाहै ॥७॥ कफ कानमें मूर्च्छित हो बहुत कृमि पैदा करै, और आधे मस्तकमें पीडा हो, उसे कृमिकर्णरोग कहाहै ॥ ८ ॥ कफसे परिपूर्ण कानमें मक्खी प्रवेशकर कीडोंको पैदा करै, उसको भी कृमिकर्णरोग कहतेहैं ॥ ९ ॥

पतंगो वाथवा कीटः प्रविश्य श्रवणांतरे ॥ नराणां कुरुते पीडां व्याकुलं क्षतसंचयम्॥ १०॥कीटःप्रविश्य कर्णांते किल्ली स्फोटयतेऽनिशम् ॥ विद्रधिं कुरुते शीघ्रम्बधिरत्वं प्रकल्पयेत् ११

कर्णपाकरोगके लक्षण।

कर्णस्य मध्ये पिटिकाब्जकर्णिकाकाराकृतिस्तोदतृषाज्वरान्विता ॥ शोषोल्पपाकाः पवनात्मकोयं प्रोक्तो भिषग्भिः किल कर्णपाकः ॥ १२ ॥

अर्थ–पतंग अथवा कीडा कानमें प्रवेशकर मनुष्यको पीडित करैं, तथा कानमें घाव करदें ॥ १० ॥ कीडा कानमें धसकर किल्ली मरै वो विद्रधि और बहिरापना करदे ॥ ११ ॥ कानमें फुन्सी कमल कर्णिकाके आकार पैदा हो तथा पीडा, तृषा, ज्वर, शोष थोडा पाकयुक्त हो, वो वातसे पैदा वैद्योंने कर्णपाकरोग कहाहै ॥ १२ ॥

पित्तकर्णपाकके लक्षण।

कर्णांतरे कोशविदीर्णकारी दाहार्तिक्लेदस्य विकारधारी ॥ वैकल्यकृद्वीर्यबलोपहारी पित्तात्मकोयं किल कर्णपाकः॥१३॥

कफकर्णपातके लक्षण।

स्थूलत्वक्कर्णविस्फोटकंडूशोषार्तिपाकवान् ॥ पूयस्रावी महाक्लेदी कर्णपाकः कफात्मकः ॥ १४ ॥ क्षतोत्पाटनात्कर्णपाकेंबुपूर्णाद्भवेद्विद्रधिः कर्णविध्वंसकारी ॥ महारुक्करोतिप्रदो दीर्घशोफं मुहुः स्रावदुर्गंधकृत्कष्टपाकी ॥ १५ ॥

अर्थ–जो फुंसी कानके भीतरी झिल्लीको फोडकर दाह, पीडा, क्लेदयुक्त, बेकली करै, तथा वीर्य बलका नाश करै, उसे वैद्योंने पित्तका कर्णपाक कहाहै ॥ १३॥ स्थूलत्वचा और कानमें फूटन खुजली, शोष, पीडा, पाकयुक्त हो, राध निकले, महाक्लेदयुक्त, उसे वैद्य कफका कर्णपाक रोगकहते हैं ॥ १४ ॥ कानमें घाव होगयाहो उसपरसे खुंड उखाडनेसे तथा कर्णपाकमें पानीके पडनेसे कानमें विद्रधिरोग कानका विध्वंस करनेवाला पैदा होताहै, उसमें पीडा और सूजन तथा स्राव और दुर्गंध और कष्टसे पकै ये लक्षण होतेहैं ॥ १५ ॥

वातपूतिकर्णरोगके लक्षण।

पूयं स्रवेद्यः श्रवणोथ पूतिं विस्फोटपीडां रतिगुंजघोषः ॥ शोषार्बुदैर्युग्ज्वरशूलयुक्तो वातात्मकोऽयं खलु पूतिकर्णः॥१६॥

पित्तपूतिकर्णके लक्षण।

अत्यंतदाहो बहुतीव्रवेदना नित्यं स्रवेद्यः श्रवणोतिपूतिः ॥ पूयं च पीतं परिपित्तजोयं प्रोक्तो भिषग्भिः किल पूतिकर्णः॥१७॥

कफपूतिकर्णके लक्षण ।

कर्णस्रावं पूयमुग्रं सपूतिं शोथः स्निग्धः क्लेदवैश्रुत्यकंडूः ॥
शुक्लस्थैर्यं श्लेष्मजं दीर्घपाकं विद्याद्रोगं पूतिकर्णं नितांतम्॥१८॥
इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे
कर्णरोगलक्षणानि ।

अर्थ–जिसमेंसे राध बहै, कानमें दुर्गंध, तथा फूटन, पीडा, अरति, गुंजार होना, शोष, अर्बुद, ज्वर, शूल, इन करके युक्त हो उस वातको कर्णपूत रोग कहाहै ॥ १६ ॥ जिसमें दाह-तीव्र, दुःख नित्य हो, कानमें राध स्रवै, तथा राध पीली निकलै, उसे वैद्योंने पित्तका कर्णपूति रोग कहाहै ॥ १७ ॥ कानमेंसे पीव बासके साथ निकले, तथा चिकनी सूजन क्लेदयुक्त हो तथा कानमें खुजली चलतीहो सपेद हो देरमें पके वो कफका कर्णपूति रोग जानना ॥ १८ ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामपाठकनिर्मितायां हंसराजार्थबोधिनीटीकायां कर्णरोगास्समाप्ताः ।

नासारोगलक्षण ।

आनह्यते येन गदेन नासिका विशुध्यते पूय्यति तुद्यते क्वचित्॥
न गंध्यते क्लिद्यति खिद्यतेऽथवा स पीनसो रुक्थितो भिषग्वरैः १

क्षवथुरोगके लक्षण ।

यदा घ्राणमर्मस्थले संविकारे कफेनावलिप्तो मरुन्नासिकायाः॥
तदायातिबाह्यांतराच्छब्दयुक्तोनिरुक्तोभिषग्भिर्वरिष्ठैःक्षवोयम् २

पूतिनस्यरोगके लक्षण ।

पक्वैर्दोषैर्यदावातस्तात्वादौ मूर्च्छितो भवेत् ॥
नसो निस्सरते पूतिः पूतिनस्यं च तद्वदेत् ॥ ३ ॥

अर्थ–जिसमें कफसे नाक बंधजावे और पीब बहै, तथा क्लेश हो, और जिसमें सुगन्ध दुर्गन्धका ज्ञान न हो तथा पीडा हो उसे वैद्योंने पीनसका रोग कहा है॥ १॥जिसकी नाकमें पवन दुष्ट-होकर नाकके मर्मस्थानोंको दुःखित करे फिर वही नाककी पवन कफसे मिलकर शब्दयुक्त भीतरसे बाहर निकसै, उसे वैद्योंने क्षवथु अर्थात् छींकका रोग कहा है॥ २॥जिसके गला तालूके मूलकी पवन दोषोंको बिगाडकर आप गलेमें मूर्च्छित हो नाकसे दुर्गंध युक्त निकसै, उसे पूतिनस्य कहते हैं ॥ ३॥

नासापाकके लक्षण ।

नासिकायां स्थितं पित्तं परुषी कुरुतेनिशम् ॥
नासिकापाकमित्याहुर्दाहक्लेदव्यथान्वितम् ॥ ४ ॥

पूयरक्तका लक्षण ।

दोषेषु पक्केषु ललाटमध्ये पूयं सरक्तं मुखनाशयुक्तम् ॥
दुर्गन्धियुक्तं बहुशः स्रवेत्तत्प्रोक्तम्भिषग्भिः किल पूयरक्तम्५॥

प्रदीप्तरोगके लक्षण ।

दाहान्वितायाः परिनासिकायाः सन्निःसरेद्धूमधनंजयाभ्याम् ॥
सार्द्धं शतोदी पवनप्रचडो रोगं प्रदीप्तं प्रवदन्ति वैद्याः ॥ ६ ॥

अर्थ—नाकमें पित्त दुःखितहो फुंसीको पैदाकरे और वो पकजाय तथा दाह राध व्यथायुक्त हो उसे नासिकापाकरोग कहते हैं ॥ ४ ॥ ललाटमें दोषोंके पकनेसे रुधिर राध और दुर्गंध युक्त मुख नाक बहुत स्रवै, उसे पूयरक्तरोग कहते हैं ॥ ५ ॥ जिसकी नाकसे दाहयुक्त प्रचंड पवन निकलैं, तथा धुंआंनिकले, और पीडाहो उसे प्रदीप्तरोग कहते हैं ॥ ६ ॥

प्रतीनाहरोगके लक्षण ।

रुंध्यान्मार्ग्गं नसो वायुः श्लेष्मणा सहितो बली ॥
प्रतीनाहं च तं रोगं विद्यादाधुनिको भिषक् ॥ ७ ॥

नासाशोषके लक्षण ।

घ्राणोत्थश्लेष्मसंघातः पक्वपित्तोष्मणानिशम् ॥
वातेन शोषितः सोऽय शोषः प्रोक्तो भिषग्वरैः ॥ ८ ॥

पक्वपीनसके लक्षण ।

श्लेष्मातिसांद्रः परिगंधहीनः शिरोलघुत्वं स्वरवर्णशुद्धिः ॥
नासावकाशं पवनप्रवृत्तिश्चिह्नानि पक्वस्य हि पीनसस्य ॥ ९ ॥

अर्थ—नाककी पवन कफसे मिलकर श्वासको रोकदे, उसे प्रतीनाहरोग अबके वैद्य कहते हैं ॥ ७ ॥ नाकमें उठा जो कफका समूह वो पित्तकी गर्मीसे पकजाय फिर वात उसको सुखाय देय, तब मनुष्य श्वास कठिनसे ले उसे नासाशोष कहते हैं ॥ ८ ॥ जब पीनस पक जाता है, तब ये लक्षण होते हैं, गंधरहित गाढा कफ निकलै, शिर हलका हो, स्वरका वर्णशुद्ध हो, नाकशुद्ध, पवन अच्छीतरह निकले, ये पक्वीपीनसके लक्षण हैं ॥ ९ ॥

सरेकमारोगकी उत्पत्ति ।

घ्राणांतरे सूक्ष्मरजोनिपाताद्धुद्भाषणान्मैथुनतोऽर्कतापात् ॥
शीर्षावघाताद्बहुशीतसेवनाद्वातः प्रतिश्यायगदं प्रकुर्यात् ॥ १० ॥

सरेकमारोगका पूर्वरूप ।

शिरोगुरुत्वं च प्रहृष्टरोम शरीरमार्द्रं क्षवथुप्रवृत्तिः ॥

निद्रालसत्वं नयनाश्रुपातो भवेत्प्रतिश्यायपुरो हि चिह्नम् ११

वातकीपीनसके लक्षण ।

स्वरोपघातो गलतालुजिह्वाशोषोऽथनासापिहिताक्वचित्स्यात्॥
स्रावोतिसूक्ष्मः परिशंखपीडा मरुत्प्रतिश्यायरुजोपचिह्नम् १२॥

अर्थ—नाकमें धूलिके जानेसे, बहुत जोरसे बोलना, मैथुनके करनेसे, सूर्यके घाममें रहनेसे, शिरमें चोट लगनेसे,बहुत शीतके सेवन करनेसे,कुपितजो वात सो पीनस रोगको पैदाकरै॥१०॥ शिर भारी, रोमांच, शरीरका टूटना, बारबार छींकका आना, नींद और आलकस तथा नेत्रोंसे अश्रुपात हो ये सरेकमाके पूर्वमें होते हैं।।११।।स्वर बैठजाय,गला,तालू,जीभ इनका सूखना,नाकका मार्ग रुकजाय थोडापतला गरम पानी गिराकरै,कनपटी दूखे ये वातके सरेकमांके लक्षणहैं॥१२॥

पित्तकीपीनसके लक्षण ।

नासास्रावो महातप्तपीनसोवनिधूमवान् ॥
सदाहः पैत्तिको ज्ञेयः श्लेष्मजः कथितो बुधैः ॥ १३ ॥

कफकीपीनसके लक्षण ।

शुक्लाभो नासिकास्रावः गलोष्ठतालुकंडुमान् ॥
शिरस्तोदः प्रतिश्यायः श्लेष्मजः कथितो बुधैः ॥ १४ ॥

रुधिरकीपीनसके लक्षण ।

रक्तस्रावः शिरःपीडा दाहःशंखद्वयेऽनिशम् ॥
रक्तत्वं नेत्रयोर्ज्ञेयः प्रतिश्यायः सरक्तजः ॥ १५ ॥

अर्थ—जिसके नाकसे गरम गरम पानी गिरे, और अग्निके समान धुआं निकलै,तथा दाहहो, वो पित्तकी पीनस कहीहै ॥१३॥ नाकसे पानी सपेद गिरे, और गला,तालू, ओठ इनमें खुजली चलै,मस्तक भारीरहै,उसे कफकी पीनस कहते हैं॥१४॥ जिसकी नाकसे रुधिर गिरै मस्तकमें और दोनों कनपटीनमें दर्द, नेत्र लाल, इन लक्षणोंसे रुधिरकी सरेकमां अर्थात् पीनस जाननी॥१५॥

सन्निपातकीपीनसके लक्षण ।

श्वासपूतिवहोनाहः क्लेदो जंतुषु निर्दितः ॥ चिह्नैरेतैरसा-
ध्योऽयं प्रतिश्यायस्त्रिदोषजः ॥१६॥ ॥इतिश्रीभिषक्चक्र
चित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे नासारोगलक्षणानि ।

अर्थ—जिसकी नाकसे श्वासयुक्त पवन निकलै, अनाहरोग हो, क्लेदयुक्त तथा कृमि पडिजायँ, ऐसे लक्षणोंसे सन्निपातकी पीनस कहीहै ॥ १६ ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामपाठकप्रणीतायां हंसराजार्थबोधिनीटीकायां नासारोगलक्षणानि ।

अथ नेत्ररोगनिदानम् ।

नेत्ररोगोत्पत्तिः ।

शीर्षोपघाताद्विषतीक्ष्णसेवनान्नेत्रांतरेधूमरजोतिपातात् ॥ सूर्येंक्षणात्सूक्ष्मनिरीक्षणान्मुहुर्दोषारुजं संजनयंति नेत्रयोः ॥१॥
शुक्रावरोधाद्युवतिप्रसंगाद्धातोर्विकाराज्ज्वलनस्यतापात् ॥
नाड्यादिमोक्षाद्बहुमैथुनाच्च नेत्रे रुजं संजनयंति दोषाः ॥२॥

वातकेनेत्ररोगके लक्षण ।

विशुष्कता स्पंदनतातिरूक्षता प्रतोदता कर्कशताद्यशुद्धता ॥
प्रधर्षतास्तंभनताश्रुपातान्नृणां च नेत्रे पवनात्मको भवेत्॥३॥

अर्थ–शिरमें चोट लगनेसे विष अथवा तीखी वस्तुके सेवनसे, नेत्रोंमें धुंआ और धूलिके पड़नेसे, सूर्य्यके सामने देखनेसे, छोटी वस्तुके देखनेसे, कुपितहुये जो वात, पित्त, कफ सो नेत्र रोगको पैदा करते हैं ॥ १ ॥ वीर्य्यके रोकनेसे, बहुत स्त्रीके संगसे, धातुके विकारसे, अग्निकेतापसे, फस्तछुडानेसे, बहुत मैथुनसे नेत्रमें तीनों दोष नेत्ररोग करते हैं ॥ २ ॥ नेत्रोंका सूखना, तथा फडकना, रूखापन, पीडा, कर्कशता, अशुद्धता, खिसासा होना, स्तंभनता, आंसुओंका गिरना, ये लक्षण वातके नेत्ररोगमें होते हैं ॥ ३ ॥

पित्तकेनेत्ररोगके लक्षण ।

उष्णोष्णबाष्पोरविणातितापः शूलारतिः पांडुरता शिरोऽर्तिः ॥
दाहोल्पपाको महती च पीडा नेत्रे भवेत्पित्तमये नराणाम् ॥४॥

कफकेनेत्ररोगके लक्षण ।

तंद्रातिशोफो गुरुता शिरोर्तिर्दाहोल्पपाको महती च पीडा ॥
ऊष्माविशेषोग्निसमानदाहः स्रावोरतिः शूलमतीव पीडा ॥५॥

नेत्रमंथके लक्षण ।

विवर्णता शोणितमाविपाको रक्तस्रवः स्यान्नयने नराणाम् ॥
निर्मथ्यनेत्रेदधिमंथलक्षणैर्वायुस्ततो गच्छति मूर्ध्निविक्रमम्॥६॥

अर्थ–सूर्य्यके घामसे गरमीहो, तथा गरमगरमपानी निकले, शूल और अरति पीलियाहो, शिरमें दर्दहो, दाहहो, थोडापके, पीडा ज्यादाहो, ये लक्षण पित्तके नेत्ररोगके हैं ॥ ४ ॥ तंद्रा, सूजन, मस्तक भारी, दाह, थोडापके, पीडा बहुत हो, गरमी बहुतहो, अग्निकेसमान दाहहो, अश्रुपात हो, अरति, शूल ये कफके नेत्ररोगके लक्षणहैं ॥ ५ ॥ जिसके नेत्रबुरेहों, पकजायँ, रुधिर गिरै, और दधिमंथलक्षणोंसे नेत्रोंको मथनकर पवन मस्तकमें प्राप्तहो ॥ ६ ॥

निपीड्य शीर्षं पुनरावृतस्ततो जानीहि तं पंडितनेत्रमंथनम् ॥ आयाति याति प्रकरोति वेदनां वातः प्रचंडो नयनांतरे भ्रुवोः॥७॥

वातभ्रमणरोगके लक्षण ।

शीर्षास्थिशंखन्त्वथ रक्तनेत्रे जानीहि वातभ्रमणं गदंतम्॥अवेदना कंडुविशुष्कतास्याल्लघुत्वमक्ष्णोश्च प्रसन्नमार्गः ॥ ८ ॥ मलप्रवृत्तिर्बहुधा निशान्तेःविपक्वदोषं प्रवदंति संतः॥ पक्वोदुंबरवत्स्निग्धो गरिष्ठः कंडुशोफवान् ॥ जलस्रावोऽल्पसतोदो नेत्रपाकः कफोद्भवः ॥ ९ ॥

अर्थ—और मस्तकमें पीडाकर फिर लौटकर नेत्रमें प्राप्तहो, ऐसेही आवै और जाय और तथा भ्रुकुटीमें पीडाकरै, उसे पंडितोंने नेत्रमंथ रोग कहाहै ॥ ७ ॥ मस्तककी हड्डीमें कनपटीमें मांसमें पीडाहो तथा नेत्र लालहों, उसे वातभ्रमणरोग कहाहै, नेत्रपाकके लक्षण पीडारहित तथा खुजली न चलै तथा अश्रुपात रहितहो और नेत्रोंमें हलकापनहो तथा नेत्रोंका मार्ग स्वच्छहो ॥ ८ ॥ विशेष कीचडका आना रात्रिके अंतमेंहो, तब जानना कि दोषपाक हुआ पके गूलरके समान तथा चिकने और भारी तथा खुजली और सूजनयुक्त जल बहे थोडीपीडाहो इसको कफसे प्रगट नेत्रपाक जानना ॥ ९ ॥

शिरपाकनेत्रके लक्षण ।

नेत्रे समर्थे परिवीक्षितुं दिशः स्फोटो ललाटे बहुवेदनान्वितः॥ शूलश्च दाहोग्निसमो भ्रमो भवेद्रोगो भिषग्भिः शिरपाक ईरितः ॥१०॥आच्छाद्य दृष्टिं नयने विनिर्गतं शुक्रं सिताभं परिवर्द्धते निशम्॥सूच्याप्रविद्धं खलुनाशमेति नोचेद्बुधाःशुक्रव्रणं वदन्ति ॥११॥ नेत्रांतरे कज्जलिमासमीपे शुक्रद्वयं सूक्ष्मतरंचिरोत्थम् ॥ मुक्तावभासं गततोदपाकं तत्कष्टसाध्यं मुनयो वदन्ति ॥ १२॥

अर्थ—नेत्र चारों ओर देखनेको असमर्थहों,बहुतपीडा और शूलयुक्त ललाटमें फूटनहो,अग्निके समान दाहहो, भ्रमहो, उसे वैद्योंने शिरपाक रोग कहाहै॥ १०॥जिसके नेत्रमें शुक्रकी बूंद आय जावे उससे कुछ न दीखे, और वो दिनदिनमें बढे उसे शुक्रव्रण कहते हैं और सुईकेसे चभका चले॥ ११॥जिसके नेत्रकी काली जगेपर छोटी छोटी दोबूंद मोतीके समान बहुत कालकी प्रगटभई हो,और उनमें पीडा न होतीहो और न पके उसे मोतियाबिंदु कष्टसाध्य मुनि कहते हैं॥१२॥

असाध्यमोतियाबिंदुके लक्षण ।

शुक्रद्वयं वा त्रितयं चतुष्टयं निर्वेदनं नेत्रगतं विपाकम्॥विहाय

सीचाभ्रदलावभासं स्यादप्यसाध्यं निबिडं चिरोत्थम् ॥१३॥
दोषत्रयोत्थं नयनांतरस्थं नीलावभासं निबिडं विसर्प्पम्॥स्नि-
ग्धं दृढं दृष्टिपथावरोधं स्पंदात्मकं शुक्रमसाध्यमाहुः ॥ १४॥
नेत्रांतरस्थं रुधिरावभासं मांसोत्थितं स्थूलदलं विशालम् ॥
विच्छिन्नमध्यं परिचंचलं च शुक्रं भिषग्भिस्तदसाध्यमुक्तम्१५

अर्थ–जिसके नेत्रमें दो वा तीन वा चार बूंद बीचहों, उनमें पीडाहो, और पकजावे, और वो बद्दल वा आकाशके रंगकी बूंदहों, मिलीभई तथा बहुत दिनकी ये असाध्यहैं ॥ १३ ॥ जो तीनों दोषोंसे उठी होय और नीले रंगकी मिलीहुई किञ्चित् चलायमान चिकनी और दृष्टिको रोकदे ऐसी शुक्रकी बूंदभी असाध्यहै ॥ १४ ॥ नेत्रमें रुधिरके रंगकी शुक्रकी बूँदहो और वो मोटी तथा लम्बी हो, विच्छिन्न मध्यहो और चंचलहो ऐसा रोगी वैद्योंने असाध्य कहाहै ॥१५॥

एकं द्वयं वा त्रितयं चतुष्टयं संछाद्य नेत्रं परिवर्द्धतेनिशम्॥शोफो-
ष्णबाष्पो रविपाकसाधनं शुक्रं विदग्धं तदसाध्यमादिशेत्१६॥

इति नेत्रशुक्रलक्षणानि।

नेत्रके प्रथमपटलके लक्षण।

आवृत्यनेत्रे पटले व्यवस्थिते व्यक्तानि रूपाणि नरः प्रपश्येत्॥

नेत्रद्वितीयपटलके लक्षण।

एवं द्वितीये पटलेऽक्षिसंस्थे सूचीमुखं दृष्टिगतं न पश्यति॥१७॥

नेत्रतृतीयपटलके लक्षण।

नेत्रांतरस्थे पटले तृतीये दृष्टिर्भृशं विह्वलतां समेति ॥ आभा-
समात्रं खलुपश्यतीह साध्यं शिशुत्वे खलु नान्यवस्थम्॥१८॥

अर्थ–एक दो तीन चार बूंद नेत्रमेंहों, और नेत्रकी दृष्टिको ढकदेवैं, और नित्य बढै तथा सूजन गर्मी अश्रुपातका पडना ये शुक्रविदग्धके लक्षणहैं, येभी असाध्यहैं ॥ १६ ॥ इतने रोग नेत्रके शुक्रभागमें होते हैं, नेत्रके प्रथम पटलमें दोषोंके पहुंचनेसे मनुष्यको यथार्थ न दीखे, ऐसेही नेत्रके दूसरे पटलमें दोष पहुंचनेसे सुईका तथा मक्खी मच्छर बालकाभी समूह नहीं दीखे ॥ १७ ॥ नेत्रके तीसरे पटलमें दोष पहुंचनेसे दृष्टि विह्वल होजाय, कुछ कुछ झांई मालूमहो, ये बाल अवस्थामें साध्यहै औरमें नहीं ॥ १८ ॥

नेत्रचतुर्थपटलके लक्षण।

यस्यावरुद्धे पटलेन नेत्रे दृष्ट्या न पश्येत्स नरोर्कबिम्बम् ॥
विद्युल्लतां चन्द्रमसं सतारं तत्काचसंज्ञं पटलं चतुर्थम् ॥ १९॥

वातकी दृष्टिरोगके लक्षण ।

दृष्ट्या महत्या पटलेन रुद्धया समीरणोत्थेन विकारकारिणा ॥ रूपाणि सर्व्वाण्यरुणानिमानवाःपश्यंति पीतप्रभया विदग्धया२०

पित्तकी दृष्टिरोगके लक्षण ।

पटलेनावृता दृष्टिः पित्तकोपोत्थितेन सा ॥ नीलानि सर्ववर्णानि परिपश्यति सम्भ्रमम् ॥ २१ ॥

अर्थ—नेत्रके चतुर्थ पंटलमें दोष पहुंचनेसे मनुष्यको सूर्य्य चंद्र और बिजली और तारागण ये न दीखे, वो कांचसंज्ञक और इसीको लिंगनाशक और नजला तथा मोंतियाबिंदभी कहते हैं ॥ १९ ॥ जिसकी दृष्टि वादीके विकारसे आच्छादितहो, उसे लालरंग पीला दीखे ॥ २० ॥ जिसकी दृष्टि पित्तके कोपसे ढकीहो उसे भ्रमसे सब रंग नीले दीखें ॥ २१ ॥

कफकी दृष्टिरोगके लक्षण ।

आच्छादिताया पटलैः कफोत्थैर्दृष्टिः सिताभैरिवसूर्यमभ्रैः ॥ नेत्रांतरस्थैः परितो विपश्येत् सर्वाणि रूपाणि सितप्रभाणि २२ दृष्टेरूर्ध्वस्थिते दोषे न पश्येदूर्द्धसंस्थितान्॥ दृष्टेरधः स्थिते दोषे नरोधस्थान्न पश्यति ॥ २३ ॥ दृष्टेः पार्श्वे स्थिते दोषे पार्श्वस्थान्नैव पश्यति ॥ दृष्टेर्मध्यगते दोषे यदेकं मन्यते द्विधा॥२४॥

अर्थ—कफके विकारसे पटल जिसकी दृष्टि रोकदे उसको सूर्य्य और आकाश तथा सब रंग सपेददीखै ॥ २२ ॥ दृष्टिके ऊर्ध्वभागमें दोष स्थित होय तो ऊपरकी वस्तु न दीखै, और नीचेके भागमें दोष हो तो नीचेकी कोई वस्तु न दीखै ॥२३॥ और दृष्टिके पृष्ठभागमें दोष हो तो पृष्ठस्थितको नहीं देखे, तथा दृष्टिके मध्यमें दोष होय तो एक वस्तुकी दो दीखैं ॥ २४ ॥

रक्तबिन्दुर्भवेन्नेत्रे चंचलः परुषोनिलात् ॥ पित्तात्पीतं तथा नीलं स्निग्धः पांडुः सितः कफात् ॥ २५ ॥ यः सर्वधूम्राणि नरो विपश्येत्स धूम्रदर्शी मुनिभिः प्रदिष्टः ॥ यश्चित्ररूपाणि दिवा प्रपश्येत् स वै मनुष्यो नकुलांधसंज्ञः ॥ २६ ॥ संकुच्याभ्यंतरे याति दृष्टिमाहुः कपर्दिकाम् ॥ बाह्यमायाति संवृत्यगम्भीरं तं विदुर्बुधाः ॥ २७ ॥

अर्थ—बादीसे मनुष्यके नेत्र चञ्चल और लालबिन्दु युक्तहों, और पित्तसे पीले तथा नीले, और कफसे चिकने और सपेद तथा पांडुरंगके होतेहैं ॥ २५ ॥ जिस मनुष्यको सब वस्तु धुएँके-

रंगकी दीखै, उसे धूम्रदर्शी मुनियोंने कहाहै, और रातमें जिसको चित्रविचित्र रंगको दीखै उसे नकुलांध अर्थात् रतौंधका रोग कहाहै ॥ २६ ॥ जिस मनुष्यकी दृष्टि दर्पणकी संकोचको प्राप्तहो जब दर्पण हट जावे तब यथार्थ होजावे उसे गंभीररोग वैद्य कहते हैं ॥ २७ ॥

नेत्रसंधौ स्थितः शोफः पक्वं पूयं स्रवेत्तु यः ॥ पूतिसांद्रं सरक्तं वा पूयलाख्यं विदुर्बुधाः ॥२८॥ संधौ बृहद्ग्रन्थिमहारपाकी नीरुजो दृढः॥ उपनाहः स विज्ञेयो गदज्ञैः कंडुरोगदः ॥२९॥ नेत्रसंधौ समुत्पन्ना पिडिका शोणितोद्भवा ॥ रक्तमुष्णं स्रवेन्नित्यमसाध्या रुक् प्रकीर्तिता ॥ ३१ ॥

अर्थ–जिस मनुष्यके नेत्रकी संधीमें सूजनहो और वो पकजावे तथा स्रवै और वास युक्त तथा रुधिर स्रवै उसे पूयलाख्य रोग वैद्य कहते हैं ॥ २८ ॥ जिस मनुष्यके संधीमें बडी गांठहो और वह पके नहीं न पीडा करे दृढहो खुजली चले उसे वैद्योंने उपनाह रोग कहाहै ॥ २९ ॥ नेत्रकी संधीमें रुधिरसे फुंसी पैदा हों उनसे रुधिर स्रवै वो असाध्य कहिये ॥ ३० ॥

उद्धृत्य वर्त्म रोमाणि जायंतेऽभ्यंतरे मुहुः ॥ रुन्धति गोलके नेत्रे परिवाराणि तानि वै ॥ ३१ ॥ संधौ पक्ष्माणि मांसाभा कंडूशोफसमन्विता ॥ चिमुचिमांबुयुता वैद्यैर्ब्राह्मणी सा निगद्यते ॥ ३२ ॥ अक्ष्णोर्वर्त्मनि सम्भवाश्च पिटिकाः सूक्ष्माघनाः संवृताः पीताभा बहुवेदनाः खरतरा ज्ञेयाश्च वातोद्भवाः॥ पित्तोत्थाः पिटिकाः खरा नयनयोरभ्यन्तरे संस्थिता दुःस्पर्शा बहुदाहशूलसहिताः स्रावान्विताः कण्डुराः ॥ ३३ ॥

अर्थ–जिस मनुष्यके कोयेके बाल उखडकर भीतर चलेजायँ और नेत्रके गोलको रोकदे उसे परवाल कहते हैं ॥ ३१ ॥ संधीके पखवारोंमें मांसके आकार फुंसीहो उसमें खुजली और सूजन तथा चिमचिमी युक्तहो जल स्रवै उसे ब्राह्मणी रोग कहते हैं ॥ ३२ ॥ नेत्रके मार्गमें जो फुंसीहो वह छोटी करडी गोल पीली पीडायुक्त खरदरीहो सो वातकी जाननी और खरदरी तथा नेत्रके भीतरहो स्पर्श सहाजाय दाह शूल और स्रवै तथा खुजली चलै वो पित्तकी फुंसी जाननी ॥ ३३॥

अक्ष्णोर्वर्त्मनि जायन्ते पिटिकाः कफसम्भवाः ॥ स्थूला मांसांकुराः क्लिन्नाः कंडूशोफार्तिपाकिनः ॥ ३४ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे नेत्ररोगलक्षणानि ।

अर्थ–तथा मोटी मांसक अकुरयुक्त गीली खुजलीयुत सूजन पीडा और पकजावै, वो कफकी मरोडी जाननी ॥ ३४ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां नेत्ररोगलक्षणं समाप्तम् ।

अथ मस्तकरोगलक्षणम् ।

अत्यम्लसेवाच्छिरसोभिघाताद्भूमौ शयानाज्जलमध्यपातात्॥
रात्रौ दिवा जागरणाच्च शीताद्वातादिदोषाः प्रभवन्ति शीर्षे३५॥

वातपित्तके मस्तकरोगका निदान ।

शीतेन शीर्षे निशि वातपीडा क्वचिद्दिवापि प्रभवेत्सशूला ॥
तापेन पित्तप्रभवातितीव्रा ज्वालान्विता शूलवती सशोषा३६॥

कफके मस्तकरोगके लक्षण ।

शीर्षे गुरुत्वश्च कफेन पीडा स्यादालसत्वं मुहुरश्रुपातः ॥ निद्रा
वमित्वं मुखनासिकाभ्यां स्रावो विपाकः सशिरोभिघातः ३७॥

अर्थ–अत्यन्त खटाई खानेसे, शिरमें चोट लगनेसे, पृथ्वीपर सोनेसे, जलमें गिरनेसे, रातदिन जागनेसे, शरदीसे, कुपित हुये जो वात, पित्त, कफ सो मस्तकरोग पैदा करते हैं ॥ ३५ ॥ बादीसे मस्तकमें रातको दर्द हो, कभी दिनमेंभी शूल चलै, पित्तसे पित्तजनितही अत्यन्त तीव्र ज्वाला और शोषयुक्त पीडा हो ॥३६॥ शिर भारी, आलस्य, अश्रुपातका पडना, निद्रा, वमन, मुखनाकका स्राव तथा पाक और पीडा ये कफके दोषसे होते हैं ॥ ३७ ॥

रुधिरके मस्तकरोगके लक्षण ।

शीर्षेतिदाहो महती च पीडा नासामुखाभ्यां बहुरक्तपातः ॥
भवेद्भ्रमो धूमवती च नासा रक्तप्रकोपेन शिरोभिघातः॥३८॥
दोषेषु सर्वेषु शिरोगतेषु लिंगानि सर्वाणि भवंति शीर्षे ॥
कासप्रवृत्तिश्चिरकालपाकः प्रोक्तो भिषग्भिः शिरसोभिघातः३९

कृमिकेमस्तकरोगके लक्षण ।

निर्भिद्यते जंतुभिरुग्रतुंडैः संतुद्यते यस्य शिरो नितान्तम् ॥
घ्राणात्स्रवेच्छोणितमुग्रवेदना शिरोभिघातः कृमिभिर्भवेत्सः४०

अर्थ–शिरमें दाह, घोर पीडा, नाक और मुखसे रुधिर गिरै, भ्रम तथा नाकसे धूम निकलै, ये रुधिरसे मस्तकरोग जानना ॥ ३८ ॥ सन्निपातके मस्तकरोगमें त्रिदोषके चिह्न मिलतेहों तथा खांसी और देरमें पके वो वैद्योंने सन्निपातका कहा है ॥ ३९ ॥ जिसके शिरमें कृमि पडजावैं, उसके शिरमें घोर पीडा हो, नाकसे रुधिर पडै, वो कृमिका मस्तकरोग कहाहै॥४०॥

आधाशीशीका लक्षण ।

भानूदयेऽर्द्धे शिरसि प्रपीडा संवर्द्धते चांशुमता सहैव ॥ निवर्त्तते शीतकरोदये या सूर्यात्प्रवृत्तं तमवेहि वैद्य ॥ ४१ ॥ कफयुक्पवनः शीर्षे करोति विविधान् गदान् ॥ शिरोभ्रूशंखकर्णाक्षिललाटे तीव्रवेदनाम् ॥ ४२ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे शीर्षरोगलक्षणम् ।

अर्थ–जिसका सूर्य्योदयसे आधा मस्तक क्रमसे दूखने लगे, जब सूर्य्यास्त हो और चन्द्रमा उदय हो तब दर्दभी बंद होजाय, उसे आधाशीशी कहते हैं ॥४१॥ कफयुक्त पवन शिरमें अनेक रोग पैदा करै, और शिर, कनपटी, भ्रुकुटी, कान, नेत्र, ललाट इनमें घोर पीडा होय ॥४२॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामकृतहंसराजार्थबोधिनीटीकायां शीर्षरोगनिदानं समाप्तिमगमत् ।

अथ स्त्रीरोगलक्षणम् ।

प्रदररोगकी उत्पत्ति ।

आयासतः कुत्सितयानरोहाच्छोकाद्विरुद्धाशनतः प्रपातात्॥ अत्यंतभारोद्वहनादजीर्णात्स्याद्गर्भपातात् प्रदरोतिमैथुनात् १ योनिं विदीर्यसंजातं शोणितं सर्व्वदा स्त्रियाः॥प्रदरन्तं विजानीहि वातपित्तकफोद्भवम्॥२॥प्रवृत्ते प्रदरे नित्यं पाण्डुत्वं जायते स्त्रियाः॥मूर्च्छा भ्रमस्तृषा दाहः प्रलापः कृशताऽरुचिः ३॥

अर्थ–परिश्रमसे, खोटी सवारीमें बैठनेसे, शोकसे, खोटे भोजनसे, गिरपडनेसे, भारी बोझ उठानेसे, अजीर्णसे, गर्भके पडनेसे, अतिमैथुनसे, प्रदरनाम स्त्रियोंके रोग होताहै॥ १ ॥ योनिको विदीर्ण कर जो रुधिर सदा पडे उसे वातका, पित्तका, कफका, प्रदर रोग जानो ॥ २ ॥ प्रदर रोग पैदा होनेसे स्त्रीका वर्ण पीला होजाय, और मूर्च्छा, भ्रम, प्यास, दाह, बडबडाना, कृशता, अरुचि ये रोग होते हैं ॥ ३ ॥

वातपित्तके प्रदररोगके लक्षण ।

योनिः स्रवेच्छोणितमल्पमल्पं श्यावं सकष्टं पवनात्मकं तत्॥ पित्तोत्थितं सामिषरक्तमुष्णं दाहार्त्तिशूलभ्रमकम्पकारी ॥४॥

कफके प्रदररोगके लक्षण ।

योनिक्षतोत्थं रुधिरञ्च फेनिलं पीतारुणं स्निग्धतरञ्च पिच्छिलम् ॥

शैथिल्यकंडूकृमिशोथशीतकृज्जानीहि तं त्वं प्रदरं कफोद्भवम्५॥

सन्निपातके प्रदरका लक्षण ।

दोषत्रयोत्थे प्रदरे युवत्याः सर्वाणि लिंगानि भवन्ति कार्ये ॥
उछ्वासशूलारतिपूतियुक्ते तस्मिन्न कुर्वीत भिषक् चिकित्साम्६
इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे प्रदरलक्षणम्।

अर्थ–जिस स्त्रीकी योनिसे कालेरंगका रुधिर कष्टसे थोडाथोडा निकलै, उसे वादीका जानो और मांसयुक्त, गरम, और दाहयुक्त, रुधिर निकलै तथा शूल भ्रम कंपसे पित्तका जानना ॥४॥ योनिमेंसे रुधिर झाग मिला, चिकना, पीला, गाढा, लाल निकलै और खुजली, कृमी, शिथिलता, सूजन, शीतलता युक्त हो, उसे कफका प्रदर रोग जानना ॥५॥ सन्निपातके प्रदरमें त्रिदोषके चिह्न होते हैं, तथा श्वास, शूल, अरति, दुर्गंध युक्त ऐसे प्रदरकी वैद्य चिकित्सा न करै ॥ ६ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां प्रदररोगस्समाप्तः ।

अथ योनिकन्दके लक्षण ।

उच्चैः प्रतापान्नखदन्तघाताद्ध्वश्रमात्कुत्सितवीर्य्ययोगात् ॥
कुयानरोहादतिमैथुनाद्वा योनौ भवेत्कंदकसंज्ञका रुक्॥ ७ ॥
योनौ संजायते कन्दं लकुचाकृतिपूययुक् ॥ विवर्णं स्फुटितं
रूक्ष वातकन्तं विदुर्बुधाः ॥ ८ ॥

पित्तके योनिकन्दके लक्षण ।

रक्ताक्तं योनिसम्भूतं चिञ्चिणीबीजसन्निभम् ॥
ज्वरदाहान्वितं पैत्तं योनिकंदं तमादिशेत् ॥ ९ ॥

अर्थ–ऊचे स्थानके गिरनेसे, नख दांतके घातसे, रस्ता चलनेसे, खोटा वीर्य्य पडनेसे, खोटी सवारीमें बैठनेसे, अति मैथुनसे, योनिमें कंदसंज्ञक रोग होताहै ॥ ७ ॥ योनिमें बडहलके समान कंद हो उसमेंसे राध निकलै, और विवर्ण तथा फूटा, रूखा हो, उसे बातका योनिकंद कहते हैं ॥ ८ ॥ जिसमेंसे रुधिर निकलै और वह इमलीके बीजके समान हो तथा ज्वर, दाह, युक्त हो, उसको पित्तका योनि कंद कहते हैं ॥ ९ ॥

कफके योनिकन्दके लक्षण ।

तिलपुष्पसमं स्निग्धं योनिमध्योद्भवं दृढम् ॥
कंडूशोफान्वित क्लिन्नं योनिकंदं कफात्मकम् ॥ १० ॥

सन्निपातके योनिकंदके लक्षण।

सन्निपातोत्थितं रौद्रं सर्व्वलिंगसमन्वितम् ॥
योनिकंदं भिषक्तस्य चिकित्सां नैव कारयेत् ॥ ११ ॥
इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे
योनिकंदलक्षणं समाप्तम्।

अर्थ–जो तिलके फूलके समान चिकना और दृढ कंदहो तथा खुजली और सूजन तथा गीला हो, उसे कफका योनिकंद कहते हैं ॥ १० ॥ जिसमें सन्निपातके सब लक्षण मिलतेहों, उसे घोर सन्निपातका जानकर वैद्य इलाज न करै ॥ ११ ॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां योनिकंदलक्षणं समाप्तम्।

अथ योनिके द्वादशरोगके लक्षण।

योनौ द्वादश दोषाः स्युः प्रोक्ता वैद्यैः पृथक्पृथक् ॥ केचिन्नैसर्गिकाः केचिद्दोषजा वीर्य्यदोषजाः ॥ १ ॥ अच्छिद्रा या भवेद्योनिः षंढाख्या साभिधीयते ॥ सूक्ष्मच्छिद्रा तु या सूचीमुखा सा कथ्यते बुधैः ॥ २ ॥ निवृत्तास्या महास्थूला महायोनिः प्रकीर्तिता॥ रजो वातहतं यस्या असौख्या सोच्यते बुधैः ३

अर्थ–योनिमें बारह दोष पृथक् पृथक् वैद्योंने कहे हैं, कोई तो नैसर्गिक कोई दोषोंसे और कोई वीर्य्यके दोषसे ॥१॥ जिसकी योनिमें छिद्र न हो उसे षंढाख्ययोनि कहतेहैं, और जिसमें छोटा छिद्र हो उसे सूचीमुख योनि कहते हैं ॥ २॥ जो गोल मुखकी और मोटी हो उसे महायोनि कहते हैं, और जिसका रजोदर्श वातसे चलागया हो उसे असौख्ययोनि कहते हैं ॥ ३ ॥

वातकी योनिके लक्षण।

ह्रस्वातिरूक्षाकृशताल्पपुष्पाश्यामा विवर्णास्फुटिताविशुष्का ॥
वक्राल्परोमा परुषा सरोगा योनिर्बुधैर्वातवती निरुक्ता ॥ ४ ॥

पित्तकी योनिके लक्षण।

ऊष्मान्विता कामवती विशाला लाक्षारसाभा परिपूर्णमांसा॥
नीरोगता गर्भवती विशुद्धा योनिर्बुधैः पित्तवती निरुक्ता ॥५॥

कफकी योनिके लक्षण।

स्थूला सदार्द्रा बहुकंडुरा सा कामान्विता दीर्घमुखी मनोज्ञा॥
रोमाधिका स्निग्धतरातिशीता योनिर्निरुक्ता कफयुग्भिषग्भिः ६

अर्थ—जो योनि छोटी, और रूखी, कृश, अल्पपुष्पकी, काली, श्याम वर्णकी, फटी हुई, शुष्क, मुखपर थोडे बालहों, कठोर, रोग युक्त, ये वातकी योनिके लक्षण हैं ॥ ४ ॥ गरमी युक्त, कामवती, बडी, लाखके रंगकीसी पूर्णमांस युक्त, निरोग, गर्भवान्, शुद्ध हो ये पित्तकी योनिके लक्षण हैं ॥ ५ ॥ मोटी, सदा गीली रहै, बहुत खुजली युक्त, कामयुक्त, दीर्घमुखकी, सुंदर, बहुत रोमयुक्त, चिकनी, शीतल ये कफकी योनिके लक्षण हैं ॥ ६ ॥

वातेन यस्या निहतं च पुष्पं तस्याः फलं नैव भवेत्कदाचि-
त् ॥ योन्यंतरस्थेन महाबलेन हृन्नाभिकट्यांतरदुःखवेदनाम्
॥७॥ पित्तेन दग्धं कुसुमं विशुद्धं शुक्रेण मिश्रम्बहिरुद्गिरेद्या॥
नात्यूष्मणा धारयितुं समर्था प्रस्रंसिनी योनिरुदाहृता सा॥८॥

विप्लुताके लक्षण ।

रतिक्रीडारुचिर्यस्याः परितो या प्लुता भवेत् ॥
नित्यवेदनया युक्ता विप्लुता सा प्रकीर्तिता ॥ ९ ॥

अर्थ—योनिमें बलवान् वात पुष्पको नाश करदे तब सन्तान नहीं हो, और हृदय, नाभी, कमर इनमें पीडा हो ॥७॥ जिसका पुष्प पित्तदग्ध करदे और शुक्रयुक्त रजको बाहर निकालदे और पित्तकी गर्मीसे गर्भ न रहै, उसे प्रस्रंसिनी योनि कहीहै ॥ ८ ॥ रति क्रीडाके आनंदसे जिसकी योनि आर्द्र रहै, और नित्य पीडा हो उसे विप्लुता योनि कहते हैं ॥ ९ ॥

पूतिगंधयोनिके लक्षण ।

संनिपातान्विता योनिर्दुर्गंधं वहतेऽनिशम् ॥
शूलदाहार्त्तियुक्ता सा पूतिगंधिर्विधीयते ॥ १० ॥

बन्ध्यायोनिके लक्षण ।

पित्तानिलाभ्यांपरिकोपिताभ्यांसंपीडिता कृच्छ्रतरेण योनिः॥
कृष्णं रजो मुंचति फेनिलं या वंध्या मुनींद्रैः परिकीर्त्तिता सा११

खंडितायोनिके लक्षण ।

योनेरभ्यंतरे बाह्ये खरस्पर्शा तु मैथुने ॥
न गृह्णाति सदा वीर्यं खंडिनी साभिधीयते ॥ १२ ॥

अर्थ—सन्निपातसे योनिमें दुर्गंध आवै, तथा शूल दाहभी हो उसे पूतिगंध योनि कहतेहैं॥१०॥ जिसकी योनि बात पित्तके कोपसे परिपीडितहो और जिसकी योनिसे काला और झाग युक्त रुधिर निकले उसे ऋषि वंध्यायोनि कहते हैं ॥११॥ योनिके बाहर और भीतर मैथुनके समय खर्दरास्पर्श माद्धम पडे और वीर्यका जो ग्रहण न करै उसे खंडिता योनि कहते हैं ॥ १२ ॥

पिडिकाचितसर्वांगी मणिनांतरबाह्ययोः ॥
सा योनिरुपदंशेन मूत्रफेनरुजार्दिता ॥ १३ ॥
इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे
योनिरोगलक्षणं समाप्तम् ॥

अर्थ–योनिके बाहर भीतर फुंसीहों वो योनि उपदंशरोगकरके व्याप्त जाननी ॥ १३ ॥
इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां योनिरोगलक्षणं समाप्तम् ।

अथ प्रसूतिकारोगका लक्षण।

उच्चैः प्रपाताद्दृढमैथुनाद्वा तीक्ष्णोष्णदुष्टौषधिसेवनाद्वा ॥ दंडाभिघाताद्बहुवेदनाद्वा गर्भच्युतिः स्याद्भयतः श्रमाद्वा ॥ १४ ॥ स्रावो मासाच्चतुर्थात्प्राक् पातः पंचमषष्ठयोः ॥ मासयोर्भवति स्त्रीणां:प्रसूतिस्तदनंतरम् ॥ १५ ॥ प्रसूतिसमये वायुः स्त्रियाः कुक्षिगतो यदि ॥ निरुध्य शोणितस्रावं करोति बहुवेदनाम् १६॥

अर्थ–उच्चस्थानके गिरनेसे, दृढमैथुनसे, तीखी गरम दुष्ट औषधके खानेसे, दंड आदिकी चोट लगनेसे, बहुत पीडासे, भयसे, श्रमसे गर्भपात होता है ॥ १४ ॥ चारमहीनासे पूर्व गर्भ गिरे उसे स्राव कहते हैं, और पांचवें छठे महीनामें पात कहाता है, इसके अनंतर अर्थात् सातवें महीनासे उपरान्त प्रसूति कहते हैं ॥ १५ ॥ प्रसूति समयमें पवन स्त्रीकी कूखमें प्राप्त हो रुकजावे वह रुधिरको निकाले तथा पीडा करे ॥ १६ ॥

बाले पृथिव्यां पतिते तदानिशं संरक्षणीया मरुतःप्रसूता॥यस्याः शरीरे पवने प्रविष्टे नूनं भवेद्रोगवती सदा सा॥१७॥हृत्कुक्षिशूलं गुरुता शरीरे कंपः पिपासा कटिबस्तिपीडा ॥ दाहोंगमर्दोल्परुचिः प्रलापः शोथः कृशत्वं प्रदरोतिसारः ॥ १८ ॥ निद्रालसत्वं बहु पांडुतांगे शीतं शीरोर्तिर्भ्रमताविशुद्धिः॥ तापोप्यनाहोबलतातिकासः स्यात्सूतिकायाः परिरोगचिह्नम् ॥ १९ ॥

अर्थ–जिस समय बालक पृथ्वीमें गिरै उसी समय प्रसूतास्त्रीकी पवनसे रक्षा करनी, कदाचित् पवन स्त्रीके लगजाय तो निश्चय प्रसूतिका रोग पैदा होय ॥१७॥ जिस स्त्रीके प्रसूति रोगहो उसके ये रोगहों हृदय कूख इनमें शूलहो शरीर भारी कंप प्यास कमर और मूत्रस्थानमें पीडा दाह अंगोंका टूटना अल्प रुचि प्रलाप सूजन कृशता प्रदर अतीसार॥१८॥निद्रा आलकस पीलिया शरदी मस्तकमें दर्द भ्रम भ्रष्टता ज्वर अनाह दुर्बलता खाँसी इतने रोग प्रसूतिसे होते हैं ॥ १९ ॥

प्रसूतिरोगके उपद्रव ।

अतीसारो ज्वरः शूलं बलहानिः शिरोव्यथा ॥
शोफोनाहोतिदाहोष्टौ सूतिकायामुपद्रवाः ॥ २० ॥
इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे
प्रसूतिकारोगलक्षणानि ।

१ अतीसार, २ ज्वर, ३ शूल, ४ बलहानि, ५ मस्तकमें दर्द, ६ शोथ, ७ अनाह, ८ दाह, ये प्रसूतिके आठ उपद्रव हैं ॥ २० ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामपाठकप्रणीतायां हंसराजार्थबोधिनीटीकायां सूतिकारोगास्समाप्ताः ।

अथ बालरोगलक्षणम् ।

वातलदुग्धके गुण ।

स्तन्यं दुग्धं वातलं तोयतुल्यं रूक्षं गौरं तुच्छसारं कषायम्॥
बालो नित्यं तं पिबेत् स्यात्कृशांगःशब्दक्षामो बद्धविण्मूत्रवातः १

पित्त युक्त दुग्धके गुण ।

सक्षारमुष्णं कटुपित्तदूषितं बालोल्पसारः कुचजं पयः पिबन्॥
तृष्णालुरूक्षावयवः स पैत्तिकः खिन्नो भवेद्भिन्नमलः सकामलः २

कफदूषित दुग्धके गुण ।

दुग्धं श्लेष्मविदूषितं कुचभवं स्निग्धं घनं पिच्छिलं यो बालः प्रतिवासरं परिपिबन् स्थूलोदरो जायते ॥ लालाढ्यः कफरोगवान् बलयुतो निद्रावृतश्छर्दिमाञ्शून्यान्तःकरणोल्पघूर्णनयनः कंड्वादिरोगान्वितः ॥ ३ ॥

अर्थ–स्तनका दूध जलके समान हो रूखा तथा भारी बलरहित हो कसैला हो वो वातदूषित दुग्ध है, उसे बालक जो पीवै तो कृशांग हो मन्द शब्द तथा मल मूत्र कम उतरे ॥१॥ जो खारा गरम तथा कडुआ हो पित्त दूषित दुग्ध है, उसे जो बालक पीवै तो बलहीन हो तृष्णाढ्य रूखादेह पित्तप्रकृतिवाला दस्त बहुतहो पीलिया युक्तहो तथा खिन्नहो ॥२॥ जो कुचका दूध कफसे दूषित हो वो चिकना गाढा मलाईदार होता है, जो बालक ऐसे दूधको पीवै उसका बडा पेट होजाय लार बहै, कफ रोगसे ग्रसित रहै,बल युक्त नींद बहुत आवै, उलटी करै, शून्य अंतःकरण, कुछ टेढे नेत्र, खुजली आदि रोग करके युक्त रहै ॥ ३ ॥

दोषरहितदुग्धकी परीक्षा ।

जले स्तन्यं परिक्षिप्तमेकीभूतं च पांडुरम्॥ मधुरं स्वादु तद्दुग्धं निर्दोषं तद्विदुर्बुधाः ॥ ४ ॥ निर्दोषजं पयः पीत्वा नीरोगो बालको भवेत् ॥ बलवीर्यान्वितो धीरो बहुशक्तिसमन्वितः ॥ ५ ॥ शिशोरंगपीडां च तीव्रामतीव्रां बुधो रोदनाल्लक्षयेदंगदेशे ॥ तनोः स्पर्शनाच्छ्रोतसां दर्शनाद्वा विदित्वा रुजं कारयेद्वै चिकित्साम् ॥ ६ ॥

अर्थ—जो दूध जलमें मिलानेसे पीला होजावै, तथा मीठा स्वादयुक्त हो, उसे निर्दोष दूध जानना ॥४॥ जो बालक दोषहीन दूध पीताहै वह बल वीर्य धीरता शक्तिमान् होताहै ॥५॥ वैद्य बालककी अंग पीडा रोनेसे तथा शरीरके स्पर्शसे वा नेत्रोंके देखनेसे जानकर फिर इलाज करे ॥६॥

मातुः स्तन्यविकारेण बानानां नेत्रवर्त्मनि ॥ जायते कुक्कुणं तेन नेत्रयोः कंडुरं भवेत् ॥ ७ ॥ कुक्कुणेनोरुजातेन सूर्याभां परिवीक्षितुम् ॥ न समर्थो भवेद्बालो नेत्रोन्मीलितुमक्षमः॥८॥

पारिगर्भिकके लक्षण ।

भवेद्बालको गुर्विणीदुग्धपानाद्भ्रमश्वासनिद्रान्वितो वह्निसादः ॥ कृशांगोतिकासोरुचिर्दंतपातस्तमाहुर्बुधा गार्भिकं कोष्ठबंधनम् ९

अर्थ—माताके स्तनविकारसे बालकके नेत्रोंमें कुक्कुण रोग हो, उससे नेत्रोंमें खुजली चलतीहै ॥७॥ जब बालकके कुक्कुण रोग होजाताहै वो सूर्यके देखनेको समर्थ नहीं हो और नेत्रमिचेभी नहीं॥८॥ गर्भिणी माताके दुग्धपानसे बालकको भ्रम, श्वास, निद्रा, अग्निमंद, कृशांग, अतिखांसी, अरुचि, दंतपात, ये होते हैं, इसे वैद्य गार्भिककोष्ठबंध वा पारिगार्भिक कहते हैं ॥९॥

तालुकंटरोगके लक्षण ।

शिशोस्तालवामिषे श्लेष्मवातयुक्तालुकंटकम् ॥ कुर्यात्तेन रुजा मूर्ध्नि भवेत्तालुनि निम्नता ॥ १० ॥ तालुपाकस्त्रिदोषोत्थः सर्वांगेषु विसर्प्पति ॥ असाध्याय बुधैरुक्तो यंत्रमंत्रैश्च साधयेत् ॥ ११ ॥ क्षुद्ररोगे च कथिते ह्यजगल्ल्यहिपूतने ॥ ज्वराद्या व्याधयः सर्वे महतां ये पुरोगताः॥बालदेहेपि ते तद्वज्जानीयात्कुशलो भिषक् ॥ १२ ॥

सामान्यग्रहयुक्तबालकके लक्षण ।

ग्रहैर्गृहीतोल्पशिशुः प्रवेपते मुहुर्मुहुस्त्रस्यति रौति जृम्भते ॥
परं नखैर्लुञ्चति खं समीक्षते क्वचित्क्वचित्कूजति हन्ति रोदिति १३

अर्थ—बालकके ताळुके मांसमें वात युक्त कफ प्राप्त होकर तालुकंटक रोग पैदा करै, उससे ताळु नीचे लटक आवै ॥ १० ॥ त्रिदोषका तालुपाक सब अंगमें फैल जावै है, सो असाध्य है, वो यंत्रमंत्र आदिसे अच्छाहो ॥ ११ ॥ जो क्षुद्ररोगोंमें अजगल्ली अहिपूतना रोग कहे हैं, वो और ज्वरादि सर्वरोग जो बडे मनुष्योंके होते हैं, वो सब बालकको देहमें होते हैं, ऐसे कुशल वैद्य-जानै यह माधवाचार्यका मतहै॥ १२ ॥ जो बालक ग्रहों करके गृहीत हो वो कभी कांपै त्रासखाय रोवै जंभाई ले नखोंसे अपनी देह नोचै आकाशको देखै कभी २ गूंजै और पीडाहो तथा रोवे॥ १३॥

स्कंदग्रहके लक्षण ।

स्कंदग्रहेणैव शिशुर्गृहीतः फेनं वमेद्रोदिति साश्रुपातः ॥ भिन्न-
स्वरो भिन्नमलोरुणाक्षो जागर्त्ति रात्रौ परितोल्पसंज्ञः ॥ १४ ॥

शकुनीग्रहके लक्षण ।

बालो गृहीतः परितः शकुन्यास्फोटैश्चितांगो बहुभिः स्रवद्भिः॥
दाहान्वितैःशोणितपूयगंधिभिर्भीत्यार्तिभिःसंचकितोभवेत्सः १५

रेवतीग्रहके लक्षण ।

स्फोटैः स्रवद्भिर्बहुभिर्युतांगो भिन्नस्वरो हीनबलो विवर्णः ॥
तृष्णातिसारज्वरदाहयुक्तः स्याद्रेवतीग्रस्ततनुश्च बालः ॥१६॥

अर्थ—जो बालक स्कन्दग्रह करके ग्रसा गया हो वो मुखसे झाग पटकै, रोवै, भिन्न स्वरहो, पतले दस्तहों, लालनेत्र, रात्रिमें जागे, होश न रहै ॥ १४ ॥ जो बालक शकुनीग्रहसे ग्रसाहो वो जिसमें राधबहै ऐसे फोडा करके व्याप्त हो, दाहयुक्त, रुधिर निकलै, दुर्गन्ध आवे, डरपै ॥ १५॥ जिस बालककी देह फोडोंसे व्याप्तहो और वे स्रवैं, भिन्नस्वरहो बलरहित, तथा तेजरहित, तृष्णा, अतीसार, ज्वर, दाहवान् हो उसे रेवतीग्रहग्रस्त जानना ॥ १६ ॥

पूतनाग्रहके लक्षण ।

वसागंधियुक् पूतनाक्रांतदेहः शिशुर्लक्षणैर्जायते पंचषड्भिः ॥
पिपासांगविस्फोटकंपार्त्तिदाहैर्ज्वरश्वासकासातिसारांगकंपैः १७

मंडिताग्रहके लक्षण ।

प्रसन्नवक्त्रो बहुभुक्शिशुः स्याद्ग्रहेण यो मंडितया गृहीतः ॥
विशुद्धगात्रो मलमूत्रगंधिर्वृतः शिराभिस्तु विनिर्गताभिः ॥१८॥

नैगमेयग्रहके लक्षण ।

वहेत्पूतिगंध मुखान्नासिकाया रदैर्मातरं संदशेत् खं विपश्येत्॥
भवेद्यस्य कंठोष्ठवक्त्रेषु शोषो गृहीतः शिशुर्नैगमेयग्रहेण॥१९॥
इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे
शिशुरोगनिदानम् ।

अर्थ–जिसकी देहमें चर्बीकीसी बास मारे, तथा प्यास और अंगोंका टूटना; पीडा, दाह, ज्वर, श्वास, खांसी, अतीसार, कंपहो इन लक्षणोंसे बालक पूतनाग्रहग्रस्त जानना ॥ १७ ॥ जिस बालकका मुख प्रसन्नहो बहुत भोजन करै, शुद्ध देहहो; मल मूत्रकी दुर्गंध आवै; नाडी-नसे व्याप्तहो; इन लक्षणोंसे बालक मण्डिताग्रहग्रस्त जानना॥१८॥ जिसकी देहमें बास आवै, माताको दांतोंसे काटै, आकाशकी ओर देखै, कंठ ओठ मुख सूखै; उसे नैगमेय ग्रहग्रस्तजानना ॥१९॥

इति श्रीहंसराजार्थबोधिन्यां बालरोगनिदानं समाप्तम् ।

अथ विषरोगनिदानम् ।

विषं स्थावरं मूलजं दुग्धजं वा भवेत्पत्रजं पुष्पजं त्वग्भवं वा॥
फलात्संभवं वीर्यनिर्यासजं वा द्वयोर्योगजं भूमिजं कृत्रिमं वा१

अथ स्थावरविषके अपगुण ।

मूर्च्छां श्वासं ज्वरं हिक्कां फेनं छर्दिगलग्रहम् ॥
दृष्टिनाशं भ्रमं मत्तं कुरुते स्थावरं विषम् ॥ २ ॥

जंगमविषके अवगुण ।

जीवांगज जंगममुग्रवीर्यं हालाहलं दाहमतीव निद्राम् ॥
शोथं विसंज्ञां तमकं क्लमत्वं रोमांचितांगं कुरुतेऽतिनिद्राम्३॥

अर्थ–विष दोप्रकारका है, एक स्थावर, दूसरा; जंगम स्थावरविष मूल आदि और जंगम सर्पादिकका विषादि उत्पन्न करै; इसीसे इसको विष कहते हैं, स्थावर विष, मूल, दल; फल, त्वचा, दूध, फूल, वीर्य्य, गोंद, भूमिसे पैदा हीरा आदि और कृत्रिम अर्थात् बनाभया ॥ १ ॥ मूर्च्छा, श्वास, ज्वर, हिचकी, झाग, रद, गलग्रह; दृष्टिनाश, भ्रम, मस्तपना इतने अवगुण स्थावर विष करती है ॥ २ ॥ प्राणीसे पैदा जो विष वो जंगम विष है वह इतने अवगुण करै दाह, घोर निद्रा, सूजन, बेहोशी, अंधकार, ग्लानि, रोमांच, अतिनिद्रा ॥ ३ ॥

विषदेनेवाले मनुष्यकी परीक्षा ।

पृष्टो विषादो न ददाति चोत्तरं ग्रस्तो ग्रहेणैव मुहुर्निरीक्षते ॥
नाना विचेष्टां कुरुते विकंपते कंडूयतेङ्गं रुदते विशङ्कते ॥४॥

मूलजविषके लक्षण ।

मूलजं भक्षितं कुर्याद्विषं मोहं विजृम्भणम् ॥
प्रलापं वेपनं श्वासं मोहं दाहं विचेष्टनम् ॥ ५ ॥

पत्रविषके लक्षण ।

पत्रोद्भवं विषं कुर्यान्मुखशोथं च शोषणम् ॥

फलके विषके लक्षण ।

फलोत्थं दाहमन्नाहं वैकल्यं दृष्टिनाशनम् ॥ ६ ॥

अर्थ-जो पूछनेसे उत्तर न दे, मानों किसी ग्रहने ग्रसलिया, बारबार देखने लगे, नाना प्रकारकी चेष्टाकरै, कांपै, कभी खुजानेलगै, कभी रोवै, तथा शंकाकरै, उसको जानले कि किसीने विष दियाहै ॥ ४ ॥ जो मनुष्य मूलज कहिये जड कंद आदि जैसे सिंगीमोहरा ऐसे विष खानेसे मोह, जंभाई, प्रलाप, कंप, श्वास, मोह, दाह, चेष्टाहीन होताहै॥५॥ मुखशोष, देहशोष ये अवगुण पत्रका विषभक्षण करै है,दाह,अनाह, बेकली, दृष्टिनाश,ये फल विषके अवगुण हैं॥६॥

फूलगोंदत्वचाके विषके लक्षण ।

पुष्पोत्थं छर्दिराध्मानं मोहं च कुरुते विषम् ॥
त्वङ्नियार्सोद्भवं स्रावं पूतिकंपशिरोरुजम् ॥ ७ ॥

दुग्धविषके लक्षण ।

विषं क्षीरसमुद्भूतमाध्मानं कंठशोषणम् ॥
विड्बंधमूत्रसंरोधं दृढांगं कुरुते भ्रमम् ॥ ८ ॥

धातुहरतालआदिके लक्षण ।

धातूत्थं यद्विषं कुर्यान्मूर्च्छां दाहं च तालुनि ॥
विषाणि प्राणघातीनि सर्वाणि कथितानि च ॥ ९ ॥

अर्थ-फूलका विष रद्द अफरा मोहको करै,तथा गोंद और त्वचाका विष स्राव दुर्गंध कंप, शिरमें दर्द ॥७॥ दूधका विष अफरा, कंठ शोष,दस्त,मूत्रका रुकना, दृढांग और भ्रम करै॥८॥ हीरा हरताल आदि धातुका विष मूर्च्छा, तालुयेमें दाह तथा सर्व विष प्राणके हर्ता जानने॥९॥

सर्पकाटेके लक्षण ।

भुजंगेन दष्टस्य नासामुखाभ्यां पतेद्रक्तधारांगदेशेषु शोफः ॥ भवेन्मंडलैर्मंडितांगो विवर्णो विशीर्णांगमांसोथ निःशोणितांगः ॥ १० ॥ विषादोंगकंपो भयो रोमहर्षः शरीरे गुरुत्वं भ्रमो दृष्टिनाशः ॥ तृषाध्मानमानीलता गात्रदेशे ह्यनाहो रतिर्जृम्भणं मूर्च्छता स्यात् ॥ ११ ॥

देशविशेषऔरकालविशेषमेंजोसर्पकाटेउसके लक्षण ।

अश्वत्थमूले पिचुमंदमूले चतुष्पथे देवगृहे श्मशाने ॥
वाल्मीकदेशे दिनसंध्ययोर्वा सर्प्पेण दष्टः सुधया न जीवेत् १२

अर्थ–जिसे सर्प्प काटे उसकी नाक और मुखसे रुधिरकी धार गिरै, सबदेहमें सूजन हो, देहमें रुधिरके चकत्तेहों, देहका मांस बिखर जाय, तथा देहमें रुधिर न रहै ॥ १० ॥ खेद, अंग कंप, तथा विवर्ण हो, भय, रोमांच, देह भारी, भ्रम, नेत्रोंसे न दीखै, प्यास, अफरा, शरीर नीला, अनाह, अरति, मूर्च्छा, जंभाई, ये लक्षण सर्प्प काटेके हैं ॥ ११ ॥ पीपलके वृक्षके नीचे, तथा निम्बके वृक्षके नीचे, चौराहेमें, मंदिरमें, श्मशानमें, बांबीके पास, संध्याके समय (भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, मूल, कृत्तिका, इननक्षत्रोंमें) जो सर्प्पकाटे तो मनुष्य मरजावै १२

मूषकविषलक्षण ।

मूषकस्य विषं कुर्याच्छर्दिं शोफं विवर्णताम् ॥
मूर्च्छां मंदश्रुतिं श्वासं लालास्राव शिरोरुजम् ॥ १३ ॥

कीटआदिविषके लक्षण ।

दष्टस्य कीटैर्विषदिग्धतुंडैः कृष्णाभमंगं बहुवेदना स्यात् ॥
शोफोतिदाहः परिभिन्नवर्चा मोहप्रलापोधिकरोमहर्षः ॥१४॥

कालेबिच्छूके लक्षण ।

दष्टो मनुष्योऽसितवृश्चिकेन नाना विचेष्टां कुरुते विषार्त्तः ॥
भीतो विषण्णोग्निसमानदाहः पीडार्दितो रौति विलापमुच्चैः १५

अर्थ–विषैल मूषेका विष रद, सूजन, विवर्ण, मूर्च्छा, मंद सुने, श्वास, लार टपकें, शिरमें पीडा ये लक्षण हों ॥१३॥ कीट अथवा जिसे विषैल डाढवाला जानवर काटे उसके लक्षण देहकाला तथा पीडायुक्त सूजन दाह तेजरहित मोह, प्रलाप, रोमांच ये हों ॥१४॥ काले बिच्छू काटेके ये लक्षण हैं, नानाप्रकारकी चेष्टाकरे, डरपै, शून्यता, अग्निके समान दाह, घोर पीडा, पुकारकर रोवै ॥ १५ ॥

विषं वृश्चिकं दुःसहं प्राणहारि महामोहदं सौख्यविध्वंसकारि॥
बलज्ञानविज्ञानतेजोपहारि व्यथाशोफवैकल्यदाहार्तिकारि१६

बर्हीसर्पकाटेके लक्षण ।

ज्वरो घोरतरं शूलं छर्दिः शोफो विसर्पति ॥ वर्णनाशोभवेत्पीडा
बर्हिदष्टस्य लक्षणम्॥१७॥ प्राणीदंशेन संदष्टो हृष्टरोमा क्षता-
र्तिमान् ॥ स्तब्धलिंगो भवेच्छोफो विनिद्रश्चकितोनिशम् १८॥

अर्थ-बिच्छूका विष नहीं सहाजाय, प्राणहर्ता, महामोह करै, सुखको दूर करै, बल, ज्ञान, तेज, इनको दूर करे व्यथा, सूजन, बेकली दाह, और पीडा करे ॥ १६ ॥ घोरज्वर, शूल, रद्द, सूजनता बढे, वर्णका नाश और पीडा होय, ये वहीं नाम सर्पकाटेके लक्षणहैं॥ १७॥ प्राणीके विषसे डसेहुयेके ये लक्षणहैं, रोमांच; वावसे पीडित, ठंढा लिंग, सूजन, निद्राहीन और चकित ॥ १८॥

मेंडकमछलीके विषके लक्षण ।

शोफश्छर्दितृषानिद्रामंडूकविषलक्षणम् ॥
मत्स्योत्थितं विषं कुर्याद्दाहं शोफं तृषां व्यथाम् ॥ १९ ॥

जोंकके विषका लक्षण ।

मूर्च्छां शोफज्वरं कंडूं तृषां कुर्युर्जलौकसः ॥

छिपकलीके विषका लक्षण ।

दाहं स्वेदं व्यथां शोथं कुर्याच्च गृहगोधिका ॥ २० ॥

शतपदी (खानखजूरा) के विषके लक्षण ।

शतपद्याविषं कुर्यात्स्वेदं दाहं रुजं बहु ॥

मच्छरकेविषका लक्षण ।

मशकानां विषं कुर्याच्छोफाल्पं तुच्छवेदनाम् ॥ २१ ॥

अर्थ-मेंडकका विष सूजन, रद्द, प्यास, निद्राकरेहै, और मछलीका विष दाह, सूजन, प्यास और, व्यथाको करे ॥ १९ ॥ विषैल जोंककाटे तो मूर्च्छा, सूजन, ज्वर, खुजली, प्यास हो, दाह, पसीना, पीडा सूजन, ये छिपकली काटेसे होतेहैं ॥ २० ॥ कातरके काटनेसे पसीना, दाह, पीडाहो मच्छरका विष थोडी सूजन, और थोडीही पीडा करे है ॥ २१ ॥

लूताविषके लक्षण ।

लूताविषं महाघोरं पिंडिकां बहुवेदनाम् ॥
कुरुते चंचलां तीव्रां पाकदाहज्वरान्विताम् ॥ २२ ॥

मक्खीके विषके लक्षण ।

मक्षिकाणां विषं तुच्छं शोफतोदसमन्वितम् ॥

नखदंतविषके लक्षण ।

नखदंतविषं रौद्रं दाहस्रावव्यथाकरम् ॥ २३ ॥

सर्पादिककाटेका असाध्यलक्षण ।

दृष्टिर्गता यस्य पतंति केशा नासामुखाभ्यां रुधिरस्य पातः॥
वक्रं मुखं यस्य विवर्णमंगं विषाभिभूतं परिवर्जयेत्तम् ॥२४॥

अर्थ–लूताविष महाघोर ये लक्षण करै है, पीडिका चंचलतीव्रपीडा, पाक, दाह, ज्वर ॥ २२ ॥ विषैलमक्खी काटे उसकी थोडी सूजन, और पीडायुक्त हो जिसके सिंह आदिका नख लगाहो मगर आदिकी डाढ लगीहो उसके लक्षण दाहहो, स्रावहो, व्यथा हो ॥ २३ ॥ जिस पुरुषकी दृष्टि मारीजाय, और शिरके बाल गिरपडैं, नाक मुखसे रुधिर गिरै, टेढामुख होजाय, तथा विवर्ण ऐसे रोगीको वैद्य त्यागदे ॥ २४ ॥

(तथा) हीनस्वरं यस्य पतंति दंष्ट्राः सर्वांगशीतं रसनातिकृष्णा॥ वैकल्यमंगे वदनं करालं विषार्दितं दूरतरं त्यजेत्तम् ॥ २५ ॥

दूषीविषके लक्षण ।

जलस्य पानाद्विषदूषितस्य दिग्देशकालांतरसंभवस्य॥नरस्य देहे विषलक्षणस्य दूषीविषं चोच्छलते कृशस्य ॥२६॥ दूषीविषं संकुरुते नरस्य हस्तांघ्रिशोथं मुखकंठशोषम् ॥ मूर्च्छां ज्वरं मंडलचर्चितांगं कुष्ठं रुजत्वं जठरस्य वृद्धिम् ॥ २७ ॥

अर्थ–हीनस्वर होजाय, दांत डाढाँ गिरपडैं, सर्वांगमें शीतलगे, कालीजीभ हो जाय, देहमें बेकली, करालमुखहो, ऐसे विषार्दित मनुष्यको वैद्य त्याग करदे ॥ २५ ॥ दिशा देश कालमें प्रगट ऐसे विषदूषित जल पीनेसे विषके वा विषमिले पदार्थके खानेसे कृशमनुष्यकी देहमें नाना प्रकारके रोग करै है ॥ २६ ॥ दूषी विष ये लक्षण करैहै, हाथ, पैरमें सूजन, मुख कण्ठका सूखना, मूर्च्छा, ज्वर, रुधिरके चकत्ते, कोढ, पेटका बढजाना ॥ २७ ॥

मांसक्षयं पाण्डुरचर्चितांग निद्रां विजृम्भां बलवीर्यनाशम् ॥ छर्दिं पिपासां विकलं विवर्णं दूषीविषं संकुरुते विकारम्॥२८॥ दूषीविषं त्रिदोषोत्थं यन्त्रमंत्रौषधादिभिः ॥ असाध्यं मुनिभिः प्रोक्तं तस्य जाप्यं हितं भवेत् ॥ २९ ॥

इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यकशास्त्रे विषलक्षणनिदानं संपूर्णम् ।

अर्थ–पीलिया; मांसका क्षय, निद्रा, जंभाई, बल वीर्य्यका नाश, रद्द, प्यास, बेकली, देहका विवर्ण ये, दूषीविष विकार करै है ॥ २८ ॥ त्रिदोषसे उठा दूषीविष असाध्यहै, वो मंत्र औषधियोंसे और जाप्यसे हित होय ॥ २९ ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामपाठककृतहंसराजार्थबोधिन्यां विषरोगनिदानम् ।

मूत्रपरीक्षा ।

सुपात्रे समादाय मूत्रं गदीनां प्रभाते भिषक् चिंतयेत्तैलबिंदुम्॥

विनिक्षिप्य तस्मिन्विकाशं समेति तदा साध्यमेवं वदेद्रोगिणं तम् ॥ १ ॥ यदा बिंदुरूपस्थितं मूत्रमध्ये तले संश्रितं वा तदा साध्यमेवम् ॥ त्रिकोणस्थितं तैलबिंदुर्यदि स्यात्तदा चैव दोषं वदेन्मानवानाम् ॥ २॥ क्षुरादंडकोदंडतूणीरखङ्गं गदाचक्रबाणासिरूपं विधत्ते ॥ यदा तैलबिंदुस्त्रिशूलाकृतिर्वा तदा रोगिणो यास्यते मृत्युवक्रे ॥ ३ ॥

अर्थ—वैद्य रोगीके मूत्रको प्रातःकाल कांसीके पात्रमें वा कांचके पात्रमें तेलकी बूंद डालकर परीक्षा करै, यदि मूत्रमें तेलकी बूंद प्रकाशमान देखै तो रोगीको साध्य कहै ॥ १ ॥ और जो तेलकी बूंद मूत्रमें डूबजाय तो असाध्य कहै, और जो मूत्रकी बूंद त्रिकोणके आकार होजाय तो द्विदोष युक्त मनुष्य जाने ॥ २ ॥ कदाचित् तेलकी बूंद छुराके वा दण्डके वा गदाके वा तरवारके वा बाणके वा खड्गके वा धनुषके वा फरसाके आकार होजाय, अथवा त्रिशूलके आकार होजाय, वो रोगी मौतके मुखमें जाय ॥ ३ ॥

ज्वरार्त्तस्य मूत्रे यदा तैलबिन्दुर्विधत्ते भुजङ्गाकृतिं मध्यरंध्रम्॥ विरूपं कृतान्ताकृतिं वृश्चिकाभं स रोगी यमस्यालये शीघ्रगंता॥४॥ज्वरार्त्तस्य पुंसो यदा मूत्रमध्ये समादाय तैलं तृणेन प्रभाते॥विनिक्षिप्य सिंहासनाभ विधत्ते तडागाकृतिं दीर्घमायुर्वदंति॥५॥भेरीदुंदुभिशंखगोमुखतुरीतुल्यंमृदंगाकृतिं वीणातोरणहंसकम्बुसुरभीछत्राश्वयानासनम्॥ ढक्काकुम्भकिरीटहारसदृशं केयूररत्नद्युतिंसन्धत्तेतिलतैलबिंदुरनिशंमूत्रेमहारोगिणः६

अर्थ—ज्वरवान् पुरुषके मूत्रमें तेलकी बूंद सर्पके आकार और बीचमें छिद्रहों तथा बुरी और मौतके आकारहो तथा बिच्छूके आकारहो वो रोगी जल्दी यमराजके घरजाय ॥ ४ ॥ और जिस ज्वरवाले पुरुषके मूत्रमें तेलकी बूंद डारनेसे सिंहासनके आकार, अथवा तालावके आकार होजाय, उस रोगीको दीर्घआयु जानना ॥ ५ ॥ भेरी, दुंदुभी शंख, गोमुख, तुरही, मृदङ्ग, तमूरा, तोरण, हंस, कमल, गौ, छत्र, घोडा, सवारी, ढका, घट, किरीट, हार, केयूर, रत्न, इनकीसी आकृतिके सदृश तेलकी बूंद होय वो महारोगी जानना ॥ ६ ॥

प्रसरति यदि मूत्रे रोगिणस्तैलबिन्दुर्दिशि विदिशि समंतान्नीरुजं तं हि विद्यात्॥ व्रजति दिशि मघोनः पश्चिमायां दिशायां पवनककुभि रोगी रोगमुक्तं नितान्तम् ॥ ७ ॥

वातपित्तकफके मूत्रकी परीक्षा ।

श्यामं स्निग्धं तारकाभिर्युतं तद्विद्यान्मूत्रं रोगिणो वातभूतम्॥
पीतं रक्तं पित्तजम्बुदबुदोक्तं श्लेष्मोद्भूतं पल्वलंवारितुल्यम्॥८॥

द्विदोषऔरत्रिदोषमूत्रकी परीक्षा ।

रोगीमूत्रं द्विदोषोत्थं सर्षपतैलसन्निभम् ॥
संनिपातोत्थितं कृष्णं विद्याद्बुद्बुदसंयुतम् ॥ ९ ॥

अर्थ–जिस रोगीके मूत्रमें तेलकी बूंद दिशा और विदिशामें फैल जाय, उसे नैरोग्य जानना चाहिये, और तेलकी बूंद पूर्व दिशामें वा पश्चिम दिशामें तथा वायव्य और उत्तरदिशामें फैलजाय तोभी रोगी रोगमुक्त जानना ॥ ७ ॥ वातसे मूत्र नीला, और चिकना, उतरताहै, पित्तसे लाल, और पीला तथा बबूलेयुक्त उतरे है, कफसे गाढा, और चिकना तथा तलैयाके जल समान उतरै ॥८॥ द्विदोषवाले पुरुषका मूत्र सरसोंके तेलके समान उतरै, और सन्निपातवाले पुरुषका मूत्र काला और बबूलेयुक्त उतरता है ॥ ९ ॥

अजीर्णसंभवं मूत्रमजामूत्रसमं भवेत् ॥ ज्वरोत्थं कुंकुमाकारं सुखिनो जलसन्निभम् ॥ १० ॥ भिषक्चक्रचित्तोत्सवंवैद्यशास्त्रं कृतं हंसराजेन पद्यैर्मनोज्ञैः ॥ सुहृद्यैरदोषै रुजोध्वांतनाशं हरेरंघ्रिसंसेवनानंदमूर्त्तेः ॥११॥ ॥ इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे रोगमूत्रलक्षणानि समाप्तानि ।

अर्थ–अजीर्णसे मूत्र बकरीके मूत्रके समान उतरै; ज्वरसे केसरियारंग सरीखा उतरै है, सुखी पुरुषका मूत्र जलके समान उतरै ॥ १० ॥ भिषक्चक्रचित्तोत्सव वैद्यशास्त्र हंसराज कविने मनको प्रसन्नकारक पदोंसे तथा हृदयके हरणकारक दोष रहित पदोंसे रोगका हरणकरनेवाला श्रीनिकुंजविहारीके चरणारविन्द सेवकने बनाया है ॥ ११ ॥

इति श्रीमाथुरदत्तरामपाठकप्रणीतायां हंसराजार्थसुबोधिनीटीकायां रोगमूत्रलक्षणानि समाप्तानि ।

नपुंसकलक्षणानि सुश्रुताल्लिख्यंते ॥

आसेक्यनपुंसकके लक्षण ।

पित्रोरत्यल्पवीर्यत्वादासेक्यः पुरुषो भवेत् ॥
सशुक्रं प्रास्य लभते ध्वजोच्छ्रायमसंशयम् ॥ १ ॥

सौगंधिकनपुंसकके लक्षण ।

यः पूतियोनौ जायेत स सौगंधिकसंज्ञितः ॥
सयोनिशेफसोर्गंधमाघ्राय लभते बलम् ॥ २ ॥

कुंभिकनपुंसकके लक्षण ।

स्वगुदेऽब्रह्मचर्याद्यः स्त्रीषु पुंवत्प्रवर्त्तते ॥
कुंभिकः स तु विज्ञेय ईर्ष्यकं शृणु चापरम् ॥ ३ ॥

अर्थ—माता पिताके अति अल्पवीर्य्यसे जो गर्भ रहता है, वो पुरुष आसेक्य नाम नपुंसक होता है; वो दूसरेके मैथुनके करनेसे पैदा शुक्र खाय जावै तब उसको चैतन्यता पैदाहो तब विषय करनेको प्रवृत्तहो इसका दूसरा नाम मुखयोनि है ॥ १ ॥ जो पुरुष दुष्टयोनिसे पैदाहुआ हो वो योनि वा लिंगको सूंघले तब चैतन्यता प्राप्तहो उसे सौगंधिक कहते हैं और दूसरा नाम नासायोनि कहते हैं ॥ २ ॥ जो पुरुष पहले दूसरे पुरुषसे अपनी गुदा भंजन करावे, तब उसको चैतन्यता प्राप्तहो, तब स्त्रीके विषे पुरुषताको प्राप्तहो, उसे कुम्भिक नपुंसक कहते हैं ॥ ३ ॥

ईर्ष्यकके लक्षणोंको सुनो ।

इर्ष्यकके लक्षण ।

दृष्ट्वा व्यवायमन्येषां व्यवाये यः प्रवर्त्तते ॥
ईर्ष्यकः स तु विज्ञेयो दृग्योनिरयमीर्ष्यकः ॥ ४ ॥

महाषंढके लक्षण ।

यो भार्य्यायामृतौ मोहादंगनेव प्रवर्त्तते ॥
तत्र स्त्रीचेष्टिताकारो जायते षंढसंज्ञितः ॥ ५ ॥

नारीषंढके लक्षण ।

ऋतौ पुरुषवद्वापि प्रवर्त्तेतांगना यदि ॥ तत्र कन्या यदि-भवेत्सा भवेन्नरचेष्टिता ॥६॥ ॥ इति श्रीभिषक्चक्रचित्तोत्सवे हंसराजकृते वैद्यशास्त्रे नपुंसकलक्षणानि समाप्तानि ।

अर्थ—जो पुरुष दूसरेको मैथुन करतादेख आप मैथुन करनेको प्रवृत्त हो, उसे ईर्ष्यक नपुंसक कहते हैं, दूसरा नाम दृक्योनि है ॥ ४ ॥ जो पुरुष ऋतुके समय स्त्रीके प्रमाण प्रवृत्तहो अर्थात् बिपरीत रतिकरै, उसके वीर्य्यसे पैदा जो बालक वो स्त्रीकीसी चेष्टावान् हो, और स्त्रीके आकार युक्तहो उसे महाषण्ढ कहते हैं ॥ ५ ॥ ऋतुकालके समय जो स्त्री पुरुषके प्रमाण प्रवृत्तहो अर्थात् पुरुषको नीचे सुलाय आप ऊपर चढ मैथुन करै उसमें जो कन्या पैदाहो वह पुरुषके आकारहो और पुरुषकीसी चेष्टावालीहो ॥ ६ ॥

इति श्रीमाथुरवंशोत्पन्नप्रशंसनीयगुणगणालंकृतकन्हैयालालपाठकतनयदत्तरामप्रणीतहंसराजार्थसुबोधिनीटीका समाप्तिमगात् ।

इति हंसराजनिदानं सम्पूर्णम् ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस—बंबई.